वाणी सरोवर

जनवरी १९७२

भुवन वाणी ट्रस्ट
रानी कटरा - लखनऊ ३.

[भुवन वाणी ट्रस्ट (पंजीकृत) लखनऊ का मुखपत्र (त्रैमासिक)]

वाणी सरोवर

प्रत्येक क्षेत्र प्रत्येक संत की बानी।
संपूर्ण राष्ट्र में घर-घर है पहुँचानी ।।

संपादक—नन्दकुमार अवस्थी   प्रब०सं०—विनयकुमार अवस्थी

र्ष—३   जनवरी, १९७२   अंक—१

विद्वत्-परिषद्

असमिया—बसन्तकुमार सैकिया
सुश्री दीप्ति बरगुहाईं

अ़रबी—क़ाज़ी मुहम्मद सिद्दीक़, मुफ़्ती दारुलमुबल्लग़ीन, लखनऊ

ओड़िया—सुरेशचन्द्र नन्द एम. ए. हिन्दी-ओड़िया, रा० भा० रत्न, कटक

अंग्रेज़ी—डॉ. एम. डी. पटियाल
प्रि. उ. भा. धर्ममहा. वि. बरेली

उर्दू—डॉ.स० असदअली एम.ए., पीएच्. डी.
सुश्री माजदा असद एम.ए. पीएच्.डी.

कन्नड़—डॉ. वी. बी. पुत्रन, एम. ए. पीएच्. डी., बंबई

कश्मीरी—डॉ. शिबनकृष्ण रैणा एम. ए., पीएच्. डी. नाथद्वारा (राज.)

गुजराती—डॉ. दीनेश हरिलाल भट्ट, एम.ए. पीएच्.डी., रा०भा० रत्न, बंबई

गुरुमुखी—डॉ० अमरसिंह खालसा, डा० आफ़ डिविनिटी (यू. एस. ए.)
प्र० संपादक 'सरदार' लखनऊ

तमिळ—वी. नटराजन एम. काम.

तॅलुगु—डॉ. भीमसेन 'निर्मल', एम. ए., पीएच्.डी., रीडर, उस्मानिया वि.वि.

नेपाली—नन्दकुमार आमात्य
सुश्री तपेश्वरी देवी आमात्य

पाली—डॉ० हर्षनारायण एम.ए., पीएच्.डी.

पारसी—सुश्री नाज़ू दारा देबू, 'दिलनवाज़'

फ़ारसी—स० मस्ऊदहसन रिज़्वी, भारत-सरकार-सम्मानित, भू.पू. (फ़ारसी) विभागाध्यक्ष लखनऊ वि० वि०

बंगला—प्रबोध मजुमदार

मराठी—प्रा० गजानन साठे, एम.ए., मराठी-अंग्रेजी, हिन्दी, बी.टी., पीएच्. डी. (हिन्दी), बंबई
सुश्री कुसुम ताम्बे, एम. ए.

मलयाळम—के. ए. एस. अय्यर, भू. पू. उपकुलपति लख० वि० वि०

संस्कृत—बिहारीलाल शास्त्री, काव्यतीर्थ, बरेली

सिन्धी—प्रा० कु० पी. टी. आसवाणी, एम. ए. साहित्यरत्न
एन. के. केवलरामानी, सा.मं.सिं.स.

हिन्दी—रामेश्वर प्रसाद पाण्डेय 'रमेश' शास्त्री, साहित्यरत्न

वार्षिक मूल्य १०·००   एक प्रति २·५०

विषय-सूची

क्रम	विषय	लेखक	पृष्ठ
१	विद्वत्परिषद्	... ...	१
२	विषय-सूची	... ...	२
३	सम्पादकीय	... ...	३-५
४	ऋग्वेद १।२।१-९	श्री बिहारीलाल शास्त्री	६-८
५	बाइबिल के नीतिवचन—श्रीरामेश्वरप्रसाद पांडेय, नन्दकुमार अवस्थी		१७-२४
६	(फ़ारसी)	सिर्रे अक्बर—शा. दाराशिकोह कृत ५१ उपनिषदों की व्याख्या। (क्रमशः) अनुवादक—डॉ. हर्षनारायण एम.ए.,पीएच्.डी.	१३७-१४४
७	(मलयाळम)	कवि तुञ्चत्त् एळुत्तच्छन् कृत महाभारत (क्रमशः) सानु.लिप्य.—श्री के.ए.एस.अय्यर,भू.पू. उपकुलपति लख. वि.वि.	१४५-१५२
८	(बंगला)	कृत्तिवास रामायण लं.कां.—(क्रमशः) लिप्य.—नन्दकुमार अवस्थी, अनु.—श्री प्रबोध मजुमदार	१४५-१५२
९	(तमिऴ)	तिरुक्कुऱळ्—सानु०लिप्य०—सुश्री गोमती अय्यर, बी. ए. पद्य-भावानुवाद—नन्दकुमार अवस्थी (क्रमशः)	१२१-१२८
१०	(उर्दू)	शरीफ़ज़ादः मिर्ज़ा रुस्वा लिप्य—श्री विनयकुमार अवस्थी (क्रमशः) सम्पादक—डॉ० सय्यद असद अली एम. ए., पीएच्. डी.	१२१-१२८
११	(गुरमुखी)	श्री सुखमनी साहब (गुरु अर्जुनदेव की बानी—क्रमशः) अनु०—ख्वाजः दिलमुहम्मद,लाहौर लिप्य.—नंदकुमार अवस्थी	१३७-१४४
१२	(अ़रबी)	रियाज़ुस्सालिहीन (ज़ादॅ सफ़र)—(क्रमशः) लिप्यन्तरणकार—नन्दकुमार अवस्थी	१०५-११२
१३	(ओड़िया)	वैदेहीश-विळास—उपेन्द्र भञ्ज कृत—(क्रमशः) सानु० लिप्य०—श्री सुरेशचन्द्र नन्द, एम.ए., कटक	१२१-१२८
१४	(मराठी)	श्रीराम-विजय—श्रीधर स्वामी कृत—(क्रमशः) अनु०—डॉ० गजानन साठे, पूना एम.ए., अंग्रेज़ी-मराठी-हिन्दी	८१-८८
१५	(असमिया)	माधव कन्दली कृत रामायण—(क्रमशः) सानु० लिप्य०—श्री प्रबोध मजुमदार	५७-६४
१६	(गुजराती)	गिरधर-रामायण—(क्रमशः) सानु. लिप्य०—डॉ. गजानन साठे,पूना, डॉ. दीनेश भट्ट, बंबई	४९-५६
१७	(तॅलुगु)	रंगनाथ रामायण—(क्रमशः) सानु० लिप्य०—डॉ० भीमसेन 'निर्मल', एम.ए., पी.एच्. डी.	४१-४८
१८	(सिन्धी)	सामीअ जा सलोक—(क्रमशः) सानु० लिप्य०—प्रा० कु० पी. आसवाणी एम. ए. सा० र०	४१-४८
१९	(कन्नड़)	पम्प रामायण—रच० अभिनव पम्प नागचन्द्र (क्रमशः) सानु. लिप्य. डॉ. बी. बी. पुत्रन एम.ए. पीएच्. डी.	२५-३२
२०	(नेपाली)	भानुभक्त रामायण—(क्रमशः) अनु० श्री नन्दकुमार आमात्य	२५-३२
२१	(कश्मीरी)	रामावतार चरित—(क्रमशः) सानु. लिप्य. डॉ. शिबनकृष्ण रैणा एम. ए. पीएच्. डी.	३३-४०

सम्पादकीय

बंग-वैजयन्ती

लार्ड कर्ज़न से यह्याख़ाँ तक

गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर का कथन प्रसिद्ध है कि 'बंगाली बंगाली ही रहा; मनुष्य न हो सका'। इसका आशय है कि विद्या-बुद्धि में अग्रणी होते हुए भी सरल और निश्छल-स्वभाव बंगाली दूसरे उग्र तथा उद्दण्ड मानव-समुदायों के सामने उभर नहीं पाया। अपने आत्मीय संतान के प्रति गुरुदेव का यह स्नेहोद्गार मात्र है। सच्चाई इससे परे है।

छल-प्रतारणा तो बंगाली क्या सकल भारतीय समाज का लक्षण नहीं रहा; किन्तु जहाँ तक शौर्य, पराक्रम, आत्मोत्सर्ग और जननी जन्मभूमि के प्रति अनन्य भक्ति का सम्बन्ध है, अपनी विद्या-बुद्धि की विचक्षणता को अक्षुण्ण रखते हुए, बंगाली इन सद्गुणों में किसी भी मानव-समाज से पीछे नहीं रहा। प्राचीन गौडाधिपों के भारतीय सीमाओं के पार तक अनन्त पौरुष-प्रदर्शन की गाथाओं की चर्चा न कर, अंग्रेज़ी शासन के समय से अब तक के इतिहास पर दृष्टि डालने ही से उपर्युक्त कथन की यथार्थता साकार हो जायगी।

अपनी अपेक्षा अपने आदर्शों के प्रति अधिक निष्ठावान् भारतीयों से नीतिकुशल अंग्रेज़ सदैव सचेत रहे। भारतीयों के संगठित हो जाने पर अंग्रज़ी साम्राज्य की कुशल नहीं, इस तथ्य ने उनको बराबर यत्नशील रखा कि धर्म, जाति, सम्प्रदाय को आधार बनाकर वे भारत में विघटन के बीज बोते रहें। भले ही अपने-अपने स्वार्थ भिन्न हों, किन्तु बंगाल में हिन्दू और मुसलमान दोनों ही अंग्रेज़ी शासन से असन्तुष्ट होकर उसको उखाड़ फेंकने में लगे थे। हिन्दुओं को देश की आज़ादी पुकार रही थी; मुसलमानों को उनकी खोयी हुई सत्ता सता रही थी।

कदाचित् १९०३ ई० ही की बात है कि इस ऐक्य-मञ्च को ध्वस्त करने के लिए भारत के तत्कालीन वाइसराय लार्ड कर्ज़न ने बंग-भंग योजना को लागू किया। बंगाल को दो खण्डों में बाँटकर तेजस्वी बंगालियों को कमज़ोर कर देने की कुचेष्टा हुई। अर्वाचीन इतिहास में, बंगालियों के सामने 'जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी' की यह पहली कसौटी थी। यह भूलने की बात नहीं कि उस समय देश में अंग्रेज़ी हुकूमत

ज़ोरों से तप रही थी । किन्तु गुरुदेव के उस सरल और निश्छल बंगाली ने चुनौती को स्वीकार किया । सारा बंगाल अग्नि की लपटों में धकधका उठा । एक ओर अंग्रेज़ों द्वारा निरंकुश दमन और निरीह जनता पर लोमहर्षण अत्याचार, तो जवाबी में रेखउठन्ते बंगाली किशोरों की सशस्त्र क्रान्ति !

अग्निवीणा के क्रान्तदर्शी क़ाज़ी नज़रुल् इस्लाम उस क्रान्ति के प्रतीक स्वरूप आज भी मौजूद हैं । उनकी पंक्तियाँ देखिए :—

"एकई वृंते दूटि कुसुम हिन्दू मुसलमान
मुस्लिम तार नयनमणि हिन्दू ताहार प्राण"

मातृभूमि के लिए हँसते-हँसते प्राणों की आहुति देने वाला प्रथम किशोर १९ वर्षीय खुदीराम बोस था । फिर तो अनगिनत नवनिहालों ने जान की बाज़ी लगा दी । फाँसी, गोली, हवालातों और जेलों में अमानुषिक उत्पीडन, अग्निकाण्ड—कितने नर-नारी इनके शिकार हुए, गिनाना कठिन है । और सरल निश्छल बंगालियों के इस अतुल त्याग-बलिदान का परिणाम हुआ कि पाँच ही सात वर्ष में अंग्रज़ों को बंग-भंग का आदेश रद्द करना पड़ा । नरसंहारी अस्त्रों के बल पर फूलने वाली विश्व की मदोन्मत्त आसुरी शक्तियों को इन भोले-भाले बंगालियों के शौर्य और निष्ठा पर हसद होना अस्वाभाविक नहीं ।

इसी बंगक्रान्ति ने आज़ादी की चिनगारी रखी । बन्देमातरम् के मंत्रद्रष्टा ऋषि बंकिम, महर्षि अरविन्द, गुरुदेव रवीन्द्र, सी. आर दास, सुभाष बोस आदि महापुरुष समय-समय पर उसी प्रकाश-पुञ्ज से प्रस्फुटित होते रहे। पञ्जाब सचेत हुआ, मराठा जागा। लाल, बाल, पाल—स्वर्गीय लाला लाजपतराय, बाल गंगाधर तिलक और विपिनचन्द्र पाल, इस त्रिदेव से प्रेरणा पाकर आज़ादी के दीवानों का उदय, पोषण और मातृवेदी पर बलिदान होने लगा । फलतः बंगभंग ही निरस्त नहीं हुआ, वरन् बंगाल से उठी क्रान्ति ने सारे देश को विदेशी शासन से मुक्ति दिलाई ।

दासता से नजात मिली, किन्तु दुर्भाग्य से देश हिन्दोस्तान और पाकिस्तान में बँट गया । बँटवारा बुरा नहीं—भाई-भाई परस्पर स्नेह को क़ायम रखकर स्वेच्छापूर्वक जीवनयापन करें, यह बुरा नहीं । बुरा यह हुआ कि पाकिस्तान विदेशियों की ग़ुलामी से छूट कर स्वदेशियों की ग़ुलामी में जकड़ गया । जनता फ़ौजी तानाशाहों के अधीन रह कर तमसाच्छन्न स्वाधीनता में मोहग्रस्त हो गई । 'आज़ाद हैं' यह भ्रान्ति रख कर भी आज़ादी के सुखों का उपभोग नहीं—पाकिस्तानी जनता जैसी की तैसी

ग़ुलाम बनी रही ! और यही वह विपन्न दशा थी, जब बंगाल में पुनः जागरण हुआ ।

तेईस-चौबीस वर्ष बाद पाकिस्तान की फ़ौजी सत्ता ने आम चुनाव करवाये । विशाल बहुमत द्वारा बंगाल ने पाकिस्तान में बने रहकर क्षेत्रीय सीमित प्रजातंत्री शासन की माँग की । प्रतिक्रिया में शासक यह्याख़ाँ के छल की क़लई खुल गई । जनता के प्रतिनिधियों को बन्द कर अपनी ही जनता पर नृशंस अत्याचार का बाज़ार गर्म हुआ । बूढ़े, बच्चे, अबलाएँ; हिन्दू, मुसलमान, बौद्ध, ईसाई—लाखहाँ क़त्ल कर दिये गये, अस्मतें लूटी गईं । और यह सब हुआ देश की स्वतंत्रता की रक्षा के नाम पर ।

किन्तु उसी सरल और निश्छल बंगाली ने फिर कोदण्ड पर टंकार दी । बारह-तेरह वर्ष के बच्चे भी जैसे-तैसे अस्त्र-प्रशिक्षण लेकर युद्ध में फाँद पड़े । धन्य है वीर-प्रसवा पृथिवी ! तेरह-चौदह दिन का युद्ध और एक लाख फौजियों को बन्दी बना कर मातृभूमि की आततायियों से मुक्ति !

बंगला देश आज़ाद हुआ । संसार हर्ष से अथवा हसद से देखने को विवश है कि वह उजड़ जाने के बाद भी अपने उद्यम, पुरुषार्थ और भारतीय उपमहाद्वीप की विलक्षण सात्त्विकी परंपराओं के बल पर अपने स्नेही पड़ोसी भारत के साथ कैसे कन्धे से कन्धा मिला कर उत्कर्ष पर पहुँचता है । संताप और समृद्धि में वैर है । हम, बच रहे पाकिस्तान के शासकों से भी विनम्र और निष्कपट निवेदन करते हैं कि विद्वेष को त्याग कर अपने अधीनस्थ जनता को उनके मन के अनुरूप आज़ादी का सुख भोगने का अवसर दें । महामहिमावान् भुट्टो साहब सारा दोष यह्याख़ाँ पर थोपकर स्वयं पाकसाफ़ बन कर शांत न हों । विशुद्ध जनतंत्र की स्थापना करें । ऐसी सद्भावना का सृजन करें कि भरतखण्ड के तीनों अंश—भारत, बंगला-देश और पाकिस्तान परस्पर एवं स्वयं को भी पुष्ट करते हुए, विश्व को पुष्ट और तुष्ट करने में सहायक हों ।

'वाणी सरोवर' अपने तृतीय वर्ष में प्रवेश करते समय, कर्ज़न से यह्याख़ाँ के काल तक बंगालियों के अदम्य साहस, भीषण प्रतिरोध और अनन्य बलिदान को साधुवाद देते हुए, नवोदित 'बंगला देश' के प्रजातंत्र को बधाई देता है । शहीद हुए असंख्य जनों और परिवारों के प्रति संवेदना और उनकी शान्ति की कामना करते हुए, भगवान् से प्रार्थना करता है कि 'बंगला देश' की विजय-वैजयंती सदैव फहराती और विश्व के आक्रान्तों को बल प्रदान करती रहे । शुभमस्तु ।

ऋग्वेद मंडल १

सूक्त ३

ऋषि—मधुच्छन्दा। देवता—१ से ३ तक अश्विनौ। ४ से ६ इन्द्रः ७ से ९ विश्वेदेवाः। १० से १२ सरस्वती। छन्द—गायत्री।

अश्विना यज्वरीरिषो द्रवत्पाणी शुभस्पती।
पुरुभुजा चनस्यतम्। (ऋग् १।३।१)

अर्थ—गतिशील हाथों वाले, शुभ कार्यों के स्वामी, बहुत भोगों वाले अर्थात् सम्पन्न हे अश्वियों! हमारे यज्ञ के अन्नों को प्राप्त करो।

अश्विना पुरुदंससा नरा शवीरया धिया।
धिष्ण्या वनतं गिरः। (ऋग् १।३।२)

अर्थ—बहुत कर्मशील नेता और बुद्धिमान् हे अश्वियों! गतिशील बुद्धि से हमारी वाणियों को सुनो।

दस्रा युवाकवः सुता नासत्या वृक्तबर्हिषः।
आ यातम् रुद्रवर्त्तनी। (ऋग् १।३।३)

अर्थ—रोग और शत्रुओं को दमन करने वाले, सदा सत्यरूप रुद्रमार्ग वाले हे अश्वियों! सोम कुशों पर रक्खे हुए तथा जलों से मिश्रित हैं। (उन्हें ग्रहण करने के लिए) रुद्रमार्ग से आओ।

भावार्थ—उक्त तीनों मंत्रों में अश्विनी देवों का आवाहन किया गया है। ये देव कौन हैं? निरुक्त के अनुसार सूर्य, चन्द्र, द्युलोक, पृथिवी लोक, दिन और रात तथा कोई दो पुण्यात्मा राजा अश्विनौ हैं। यथा—"कावश्विनौ? द्यावापृथिव्या-वित्येके अहोरात्रावित्येके सूर्याचन्द्रमसावित्येके। राजानौ पुण्यकृतावित्यैतिहासिकाः" (निरुक्त १०।१।१)। निरुक्त में इस शब्द की निरुक्ति इस प्रकार की गई है:—अश्नुवाते सर्वं रसेन, ज्योतिषा। जो रस वा ज्योति से सबको व्याप्त कर ले। शतपथ ब्राह्मण के अनुसार द्यावापृथिवी और श्रोत्र, नासिका अश्विनौ हैं। (श. प. १२।९।१२-१४ तथा ४।१५।१९) नासत्य—नासिका से प्रकट होने वाले प्राण अश्विनौ हैं। प्राणों से यह सब सृष्टि व्याप्त है। उक्त मंत्रों में उन्हीं प्राणों का आवाहन है। प्राणों के निमित्त से प्राणपति प्रभु का आवाहन है। अश्विनौ दस्रा हैं—रोगों और शत्रुओं (दुर्गुणों) को दमन करने वाले हैं। नासत्य हैं—नासिका से प्रकट होते हैं। प्राणायाम से रोग

नष्ट होते हैं। बुराइयाँ दूर होती हैं। यही देवों के (इन्द्रियों के) वैद्य हैं। प्राणायाम से इन्द्रियाँ सुधरती हैं। द्युलोक, पृथिवीलोक, सूर्य, चंद्र सबका आवाहन यज्ञ में किया जा रहा है। यज्ञ में सोम (भक्त के हृदय के निचुड़े हुए भाव) सुतसोम हैं। सम्पूर्ण लोकों की विभूतियों का आवाहन ही लोकाधिपति का आवाहन है। अश्विनौ–राजा-प्रजा, विद्वान राज्याधिकारी भी हैं। ध्वन्यर्थ से इन्हें भी शिक्षा दी गयी है—ये द्रवत्पाणी हों अर्थात् कर्मशील रहें। रुद्रवर्त्तनी रहें अर्थात् कठोर मार्गों को तै करने वाले हों। पुरुभुजा—उन्नत भोगों वाले हों, उनकी बुद्धि गतिशील हो आदि।

इन्द्रा या॑हि चित्रभानो सुता इ॒मे त्वा॒यवः॑।
अण्वी॑भि॒स्तना॑ पू॒तासः॑। (ऋग् १।३।४)

अर्थ—हे विचित्र तेजोंवाले ऐश्वर्यशाली प्रभो! (इन्द्र) हमारे लिए प्रकट होओ (हमें आपकी अनुभूति हो) ये सुताः (निचोड़ कर रक्खे हुए भक्ति भाव) पवित्र हैं तुम्हारे लिए ही हैं। ये सूक्ष्म किरणों से युक्त हैं। विस्तृत हैं और पवित्र हैं। इन्हें स्वीकार करो।

इन्द्रा या॑हि धि॒येषि॒तो विप्र॑जूतः सु॒ताव॑तः।
उप॒ ब्रह्मा॑णि वा॒घतः॑। (ऋग् १।३।५)

अर्थ—हे इन्द्र! (भगवन्) तुम बुद्धि और कर्म से प्राप्त होते हो। ज्ञानी जन तुम्हें पाते हैं। यज्ञशील ब्राह्मणों को तुम प्राप्त होते हो।

इन्द्रा या॑हि तूतुजा॒न उप॒ ब्रह्मा॑णि हरिवः।
सु॒ते द॑धिष्व न॒श्चनः॑। (ऋग् १।३।६)

अर्थ—हे इन्द्र! वेगवान् बनकर हमारे स्तोत्रों को प्राप्त करो। सब रसों के लेने वाले आप हमारे यज्ञ में अन्न को धारण कराओ। हमारे भंडार भर दो।

भावार्थ—इन्द्र के अर्थ—इन्द्रः इरां दृणातीति वेरां ददातीति वेरां दधातीति वेरां दारयतीति वेरां धारयतीति वेन्दवे द्रवतीति वेन्दौ रमत इति। इरा (वर्षा, अन्न और भूमि) को जो विदीर्ण करे व इंदु (चंद्र) में रमण करे आदि निरुक्तियाँ निरुक्त (१०।८) में यास्क ने की हैं। श्री आचार्य सायण कहते हैं—"इंद्रो हि परमात्मरूपेण जगत् करोति" जगत्-कर्त्ता परमात्मा ही इन्द्र हैं। इरा प्रकृति को जो विदीर्ण करे, गतियुक्त करके जगत् रचना करे वह इन्द्र है।

ओमा॑सश्चर्षणीधृ॒तो विश्वे देवास॒ आ ग॑त।
दा॒श्वांसो॑ दा॒शुषः॑ सुतम्। (ऋग् १।३।७)

अर्थ—हे सब देवों! ज्ञानियों! विद्वानों! और ईश्वरीय शक्तियों! तुम

रक्षक हो, मनुष्यों के नियमों में धारण करते हो, दानी हुए आओ और दानी यजमान के यज्ञीय सोम को स्वीकार करो।

विश्वे देवासो अप्तुरः सुतमा गन्त तूर्णयः ।
उस्रा इव स्वसराणि । (ऋग् १।३।८)

अर्थ—हे सब देवों ! ज्ञानियों ! प्रभु शक्तियों ! जैसे सूर्य-किरणें दिन को प्राप्त होती हैं इसी प्रकार जलों सहित शीघ्र हमारे यज्ञ में आओ।

विश्वे देवासो अस्रिध एहिमायासो अद्रुहः ।
मेधं जुषन्त वह्नयः । (ऋग् १।३।९)

अर्थ—हे देवों ज्ञानियों आओ। अक्षय ज्ञान और धन के भंडार, किसी से द्रोह न करने वाले, सर्वत्र व्याप्त माया वाले, सब पदार्थों का वहन करने वाले, हमारे मेध (यज्ञ) को स्वीकार करो।

भावार्थ––विश्वेदेवाः––ब्रह्माण्ड में परमात्मा सर्वत्र व्यापक है। उसकी शक्तियाँ सर्वव्यापिनी हैं। वे ही देवता हैं। ब्रह्माण्ड के समान पिण्ड में (शरीर में) भी वेदिता शक्तियाँ व्याप्त हैं। उनका ही अनेक नामों से आवाहन किया जाता है। वे उद्भूत होकर जाग्रत होकर संसार के व्यवहार रूपी यज्ञ में, जीवन रूपी यज्ञ में हमें सहायता करें। देववृत्तियों को योग द्वारा, स्वाध्याय द्वारा, यज्ञ और तप द्वारा जाग्रत किया जाता है। यही आवाहन है। दैवी संपद् की प्राप्ति होने से मोक्ष हो जाता है। जैसा गीता में कहा है:—दैवी संपद् विमोक्षाय।—१६।५

पावका नः सरस्वती वाजेभिर्वाजिनीवती ।
यज्ञं वष्टु धियावसुः । (ऋग् १।३।१०)

अर्थ—अन्नबल और ऐश्वर्य से पूर्ण शक्तिशालिनी, बुद्धि और कर्म से धनी तथा हमें पवित्र करने वाली सरस्वती (ईश्वर द्वारा उपदिष्ट वाणी) हमारे यज्ञ को पूर्ण करे।

चोदयित्री सूनृतानां चेतन्ती सुमतीनाम् ।
यज्ञं दधे सरस्वती । (ऋग् १।३।११)

अर्थ—सत्य को प्रेरित करने वाली तथा सुन्दर बुद्धियों को चेताने वाली सरस्वती हमारे यज्ञ को धारण करे।

महो अर्णः सरस्वती प्र चेतयति केतुना ।
धियो विश्वा वि राजति । (ऋग् १।३।१२)

बुद्धि की चेतावनी पर मनुष्य का ध्यान न देना

२० बुद्धि* सड़क में ऊंचे स्वर से बोलती है; और चौकों में प्रचार
करती है; २१ वह बाज़ारों की भीड़ में पुकारती है; वह फाटकों के
बीच में और नगर के भीतर भी ये बातें बोलती है: २२ हे भोले लोगो,
तुम कब तक भोलेपन से प्रीति रखोगे? और हे ठट्ठा करनेवालो, तुम
कब तक ठट्ठा करने से प्रसन्न रहोगे? और हे मूर्खो, तुम कब तक ज्ञान
से बैर रखोगे? २३ तुम मेरी डाँट सुनकर मन फिराओ; सुनो, मैं
अपनी आत्मा तुम्हारे लिए उँडेल दूँगी; मैं तुम को अपने वचन बताऊँगी।
२४ मैं ने तो पुकारा परन्तु तुमने इन्कार किया, और मैंने हाथ फैलाया,
परन्तु किसी ने ध्यान न दिया, २५ वरन् तुमने मेरी सारी सम्मति
को अनसुनी किया, और मेरी ताड़ना का मूल्य न जाना;

—बाइबिल–नीतिवचन १/२०-२५

जिस प्रकार उपर्युक्त बाइबिल-उद्धरण में बुद्धि मनुष्य से कहती है कि—"मैंने तो पुकारा किन्तु तुमने इनकार किया और मैंने हाथ फैलाया परन्तु किसी ने ध्यान न दिया वरन् तुमने मेरी सारी सम्मति को अनसुनी किया और मेरी ताड़ना का मूल न जाना।" उसी प्रकार महर्षि व्यास भी सम्पूर्ण महाभारत की रचना करने के अनन्तर अन्त में लिखते हैं:—

ऊर्ध्वबाहुर्विरौम्येष नहि कश्चिच्छृणोति मे।
धर्मादर्थश्च कामश्च स किमर्थं न सेव्यते॥

मैं न जाने कब से अपने दोनों हाथ ऊपर उठाये हुए पुकार रहा हूँ कि धर्म का पालन करने से ही धन तथा काम की प्राप्ति होती है किन्तु खेद है कि कोई भी मेरी बात पर ध्यान नहीं देता।

बुद्धि के तिरस्कार से हानि

२६ इसलिए मैं भी तुम्हारी विपत्ति के समय हँसूँगी; और जब
तुम पर भय आ पड़ेगा, २७ वरन आँधी की नाईं तुम पर भय आ
पड़ेगा, और विपत्ति बवण्डर के समान आ पड़ेगी, और तुम संकट और
सकेती में फँसोगे, तब मैं ठट्ठा करूँगी। २८ उस समय वे मुझे पुकारेंगे,
और मैं न सुनूंगी; वे मुझे यत्न से तो ढूंढेंगे, परन्तु न पायेंगे।
२९ क्योंकि उन्होंने ज्ञान से बैर किया, और यहोवा का भय मानना
उनको न भाया। ३० उन्होंने मेरी सम्मति न चाही, वरन् मेरी सब
ताड़नाओं को तुच्छ जाना। ३१ इसलिए वे अपनी करनी का फल

* मूल में–बुद्धियाँ।

आप भोगेंगे, और अपनी युक्तियों के फल से अघा जाएंगे। ३२ क्योंकि
भोले लोगों का भटक जाना, उनके घात किए जाने का कारण होगा,
और निश्चिन्त रहने के कारण मूढ़ लोग नाश होंगे; ३३ परन्तु जो
मेरी सुनेगा, वह निडर बसा रहेगा, और बेखटके सुख से रहेगा।

—बाइबिल–नीतिवचन १/२६-३३

बुद्धि के तिरस्कार से जिन जिन हानियों का वर्णन ऊपर किया गया है वे संस्कृत साहित्य के सुभाषितों में इस प्रकार प्राप्त होती हैं—

सहसा विदधीत न क्रियामविवेकः परमापदां पदम्।
वृणुते हि विमृश्यकारिणं गुणलुब्धाः स्वयमेव संपदः॥

—किरातार्जुनीय महाकाव्य २/३०

विना विचारे एकाएक कोई काम नहीं कर बैठना चाहिए, क्योंकि अविवेक (विना विचारे काम करना) अनन्त आपत्तियों का मूल कारण है। जो लोग सोच-विचारकर काम करते हैं उनके गुणों पर प्रसन्न होकर सम्पत्तियाँ उनके पास स्वयं चली आती हैं।

उचितमनुचितं वा कुर्वता कार्यजातं
परिणतिरवधार्या यत्नतः पण्डितेन।
अतिरभसकृतानां कर्मणामाविपत्ते-
र्भवति हृदयदाही शल्यतुल्यो विपाकः॥

—सु० र० भा० सामान्यनीति ९७३

बुद्धिमान् मनुष्य को चाहिए कि उचित या अनुचित जो भी कार्य करे उसका परिणाम पहिले सोच ले, क्योंकि विना विचारे अत्यन्त शीघ्रता से किये गये कामों का परिणाम जीवन-पर्यन्त काँटे के समान हृदय में खटकता रहता है।

रोग-शोक-परीताप-बन्धन-व्यसनानि च।
आत्मापराधवृक्षस्य फलान्येतानि देहिनाम्॥

—सु० र० भा० सामान्यनीति ७१९

रोग, शोक, मानसिक संताप, बन्धन तथा व्यसन, ये सभी मूर्खतावश बुद्धि का तिरस्कार करके किये गये अपराध रूपी वृक्ष के ही अनेक प्रकार के फल हैं।

परमेश्वर का ज्ञान प्राप्त होना

१ हे मेरे पुत्र, यदि तू मेरे वचन ग्रहण करे, और मेरी आज्ञाओं को
अपने हृदय में रख छोड़े, २ और बुद्धि की बात ध्यान से सुने, और
समझ की बात मन लगाकर सोचे; ३ और प्रवीणता और समझ के
लिए अति यत्न से पुकारे, ४ और उसको चान्दी की नाईं ढूंढ़े, और
गुप्त धन के समान उसकी खोज में लगा रहे; ५ तो तू यहोवा के

भय को समझेगा, और परमेश्वर का ज्ञान तुझे प्राप्त होगा। ६ क्योंकि
बुद्धि यहोवा ही देता है; ज्ञान और समझ की बातें उसी के मुंह से निकलती
हैं। ७ वह सीधे लोगों के लिए खरी बुद्धि रख छोड़ता है; जो खराई
से चलते हैं, उनके लिए वह ढाल ठहरता है। ८ वह न्याय के पथों की
देखभाल करता, और अपने भक्तों के मार्ग की रक्षा करता है।

—बाइबिल–नीतिवचन २/१-८

तेषां सततयुक्तानां भजतां प्रीतिपूर्वकम्।
ददामि बुद्धियोगं तं येन मामुपयान्ति ते ॥

—श्रीमद्भगवद्गीता १०/१०

जो निरन्तर एकाग्रचित्त से प्रेमपूर्वक मेरा भजन करते हैं मैं उन्हें बुद्धियोग प्रदान करता हूँ जिसके द्वारा वे मुझे प्राप्त करते हैं।

न देवा दण्डमादाय रक्षन्ति पशुपालवत्।
यं तु रक्षितुमिच्छन्ति बुद्धया संयुजनन्ति तम् ॥

—विदुरनीति

देवता लोग चरवाहे के समान डंडा लेकर मनुष्यों की रक्षा नहीं करते; बल्कि वे जिसकी रक्षा करना चाहते हैं उसे बुद्धि दे देते हैं जिसके द्वारा वे अपनी रक्षा स्वयं कर लेते हैं।

ज्ञान, विवेक की प्राप्ति तथा दुष्टों से बचाव

९ तब तू धर्म और न्याय, और सीधाई को, निदान सब भली-भली
चाल समझ सकेगा; १० क्योंकि बुद्धि तो तेरे हृदय में प्रवेश करेगी,
और ज्ञान तुझे मनभाऊ लगेगा; ११ विवेक तुझे सुरक्षित रखेगा;
और समझ तेरी रक्षक होगी; १२ ताकि तुझे बुराई के मार्ग से, और
उलट फेर की बातों के कहने वालों से बचाए, १३ जो सीधाई के
मार्ग को छोड़ देते हैं, ताकि अन्धेरे मार्ग में चलें; १४ जो बुराई करने
से आनन्दित होते हैं, और दुष्ट जन की उलट फेर की बातों में मगन रहते
हैं; १५ जिनकी चालचलन टेढ़ी मेढ़ी और जिनके मार्ग बिगड़े
हुए हैं।

—बाइबिल–नीतिवचन २/९-१५

यस्तर्केणानुसन्धत्ते स धर्मं वेद नेतरः।

—मनुस्मृति १२/१०६

जो बुद्धिमत्ता-पूर्ण तर्क से खोज करता है वही धर्म के तत्त्व को जान सकता है, दूसरा नहीं।

यथा यथा हि पुरुषः शास्त्रं समधिगच्छति ।
तथा तथा विजानाति विज्ञानं चास्य रोचते ।।

—मनुस्मृति ४/२०

मनुष्य ज्यों-ज्यों शास्त्र का अध्ययन करता है त्यों-त्यों उसकी बुद्धि बढ़ती है और उसे ज्ञान-विज्ञान रुचिकर (रोचक) लगता है।

बुराई के मार्ग से बचाव

विवृण्वती पुरस्तैक्ष्ण्यं पृष्ठतः कुर्वती गुणम् ।
कर्णान् विध्यति लोकस्य सूचीवत् सूचकस्य वाक् ।।

—सु० र० भा० दुर्जननिन्दा ६५

दुर्जनों की वाणी उस सुई के समान है जो सामने से तो छेदती रहती है किन्तु पीछे से गुण (डोरा डालती या झूठा गुण वर्णन) करती रहती है। इस प्रकार की दुर्जनों की वाणी लोगों के कानों को सदा बींधती रहती है।

दूरादुच्छ्रितपाणिरार्द्रनयनः प्रोत्सारितार्धासनो,
गाढालिंगनतत्परः प्रियकथाप्रश्नेषु दत्तादरः ।
अन्तर्भूतविषो बहिर्मधुमयश्चातीव मायापटुः,
को नामायमपूर्वनाटकविधिर्यः शिक्षितो दुर्जनैः ।।

—सु० र० भा० दुर्जननिन्दा २६२

दुर्जनों की हर एक बात, हर एक चेष्टा चालबाज़ी से भरी होती है। वे किसी परिचित को आते हुए देखकर चाहे उससे प्रेम करते हों चाहे न करते हों, दूर से ही हाथ ऊँचा उठाकर बुलाते हैं, पास आने पर उसके बैठने के लिए अपना आधा आसन खाली कर देते हैं, कसकर हृदय से लगा लेते हैं और कुशल-समाचार तथा हाल-चाल पूछने लगते हैं। इस प्रकार मनके भीतर ज़हर भरे हुए तथा बाहर से मीठे व्यवहार करने वाले दुर्जनों को यह अनोखी बनावटी नाटचकला किसने सिखा दी ?

जाडचं ह्रीमति गण्यते व्रतरुचौ दम्भः शुचौ कैतवं,
शूरे निर्घृणता मुनौ विमतिता दैन्यं प्रियालापिनि ।
तेजस्विन्यवलिप्तता मुखरता वक्तर्यशक्तिः स्थिरे,
तत्को नाम गुणो भवेत् स गुणिनां यो दुर्जनैर्नांकितः ।।

—सु० र० भा० दुर्जननिन्दा २६३

दुर्जन लोग गुणवान् मनुष्यों के हर एक गुण में कोई न कोई बुराई ही ढूंढ़ा करते हैं। वे लज्जाशील व्यक्ति को जड़ (बुद्धू), व्रत करने वाले को पाखण्डी, ईमानदार को छली, वीर को निर्दयी, बुद्धिमान् या मननशील को पागल या सिर-फिरा, प्रिय बोलने वाले को दीन स्वभाववाला, तेजस्वी को घमण्डी, कुशल वक्ता को बकावदी

तथा क्षमाशील को शक्तिहीन बतलाते हैं। इस प्रकार गुणियों का ऐसा कौन सा गुण है जिसमें दुष्टों को दोष नहीं दिखाई देता ?

परस्त्री-संग-निन्दा

१६ तब तू पराई स्त्री से भी बचेगा, जो चिकनी चुपड़ी बातें बोलती
है, १७ और अपनी जवानी के साथी को छोड़ देती, और जो अपने
परमेश्वर की वाचा को भूल जाती है। १८ उसका घर मृत्यु की ढलान
पर है, और उसकी डगरें मरे हुओं के बीच पहुँचाती हैं; १९ जो उसके
पास जाते हैं, उनमें से कोई भी लौटकर नहीं आता; और न वे जीवन
का मार्ग पाते हैं।

—बाइबिल–नीतिवचन २/१६-१९

सुमुखेन वदन्ति वल्गुना प्रहरन्त्येव शितेन चेतसा।
मधु तिष्ठति वाचि योषितां हृदये हालाहलं महद् विषम्॥

—सु० र० भा० स्त्रीस्वभावनिन्दा ६०

(दुष्टा) स्त्रियाँ अपने सुन्दर मुख से बड़ी मधुरवाणी बोलती हैं किन्तु अपने हृदय के भीतर से वे बड़ा तेज (भयंकर) प्रहार करती रहती हैं। वास्तव में स्त्रियों की वाणी में तो शहद होता है पर हृदय में भयंकर हालाहल विष।

सम्मोहयन्ति मदयन्ति विडम्बयन्ति
निर्भर्त्सयन्ति रमयन्ति विषादयन्ति।
एताः प्रविश्य सदयं हृदयं नराणां
किं नाम वामनयना न समाचरन्ति॥

—सु० र० भा० स्त्रीस्वभावनिन्दा ६९

(दुष्टा) स्त्रियाँ सीधे-साधे मनुष्यों के कोमल हृदय में प्रवेश करके कौन-कौन खेल नहीं खेलतीं। कभी तो ये बेचारे मनुष्यों के मन को मोह लेती हैं, कभी उसे मतवाला बना देती हैं, कभी उसका तिरस्कार करती हैं, कभी उसे डाटती-फटकारती हैं, कभी उसका मनोरञ्जन करती हैं और कभी उसको दुख के सागर में डुबा देती हैं।

न हीदृशमनायुष्यं लोके किंचन विद्यते।
यादृशं पुरुषस्येह परदारोपसेवनम्॥

—मनुस्मृति ४/१३४

पराई स्त्री के साथ संसर्ग के समान मनुष्य की आयु को नष्ट करनेवाला संसार में और कोई दूसरा पापकर्म नहीं है।

सत्संगति-महिमा

२० तू भले मनुष्यों के मार्ग में चल, और धर्मियों की बाट को पकड़े रह। २१ क्योंकि धर्मी लोग देश में बसे रहेंगे, और खरे लोग ही उसमें बने रहेंगे। २२ दुष्ट लोग देश में से नाश होंगे, और विश्वासघाती उसमें से उखाड़े जायेंगे।

—बाइबिल—नीतिवचन २/२०-२२

जाड्यं धियो हरति सिञ्चति वाचि सत्यं,
मानोन्नतिं दिशति पापमपाकरोति।
चेतः प्रसादयति दिक्षु तनोति कीर्तिं,
सत्संगतिः कथय किं न करोति पुंसाम्॥

—सु० र० भा० सत्संगति-प्रशंसा २९

सज्जनों की संगति बुद्धि की जडता को दूर कर देती है, वाणी में सत्य का सञ्चार करती है, सम्मान और उन्नति को बढ़ाती है, पाप को नष्ट कर देती है, चित्त को प्रसन्न कर देती है। तथा सभी दिशाओं में कीर्ति फैला देती है। इस प्रकार सज्जनों की संगति से अनेक लाभ होते हैं।

दूरीकरोति कुमतिं विमलीकरोति,
चेतश्चिरन्तनमघं चुलुकीकरोति।
भूतेषु किं च करुणां बहुलीकरोति,
संगः सतां किमु न मंगलमातनोति॥

—सु० र० भा० सत्संगति-प्रशंसा ३०

सज्जनों की संगति कुबुद्धि को दूर कर देती है, चित्त को निर्मल कर देती है, पाप को नष्ट कर देती है, और सभी प्राणियों के प्रति दया की भावना जगा देती है। इस प्रकार सज्जनों की संगति से मनुष्य को सभी प्रकार के कल्याण प्राप्त होते हैं।

आज्ञा का पालन

१ हे मेरे पुत्र, मेरी शिक्षा को न भूलना; अपने हृदय में मेरी आज्ञाओं को रखे रहना; २ क्योंकि ऐसा करने से तेरी आयु♦ बढ़ेगी, और तू अधिक कुशल से रहेगा।

—बाइबिल—नीतिवचन ३/१-२

अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोपसेविनः।
चत्वारि तस्य वर्धन्ते आयुर्विद्या यशो बलम्॥

—मनुस्मृति २/१२१

जो मनुष्य वृद्ध मनुष्यों का आदर करता है तथा उनकी आज्ञा का पालन करता है उसकी आयु, विद्या, यश और बल ये चारों बढ़ते हैं।

♦ मूल में—दिनों की लंबाई और जीवन के बरस।

सत्यता तथा कृपा (दया) की महिमा

३ कृपा और सच्चाई तुझ से अलग न होने पाएं; वरन् उनको अपने गले का हार बनाना, और अपनी हृदयरूपी पटिया पर लिखना। ४ और तू परमेश्वर और मनुष्य दोनों का अनुग्रह पायेगा, तू अति बुद्धिमान् होगा।

—बाइबिल–नीतिवचन ३/३-४

सत्यान्न प्रमदितव्यम्। धर्मान्न प्रमदितव्यम्।
कुशलान्न प्रमदितव्यम्। —तैत्तिरीयोपनिषद् ११।१

सत्य के पालन में प्रमाद न करना चाहिए। धर्म के पालन में प्रमाद न करना चाहिए। कल्याणकारी कार्यों के करने में प्रमाद न करना चाहिए।

सत्यमेव जयति नानृतम्।

—मुण्डकोपनिषद् ३/६

सत्य की ही विजय होती है, असत्य की नहीं।

सत्येन लभ्यस्तपसा ह्येष आत्मा।

—मुण्डकोपनिषद् ३/५

सत्य रूपी तप से ही आत्म-ज्ञान प्राप्त होता है।

सत्यं धर्मस्तपो योगः सत्यं ब्रह्म सनातनम्।
सत्यं यज्ञः परः प्रोक्तः सर्वं सत्ये प्रतिष्ठितम्॥

—महाभारत शान्तिपर्व, १६२ अध्याय

सत्य ही धर्म है, सत्य ही तप है, सत्य ही योग है, सत्य ही सनातन ब्रह्म है तथा सत्य ही श्रेष्ठ यज्ञ है इस प्रकार सत्य में ही सभी कुछ प्रतिष्ठित है।

सत्यमेकाक्षरं ब्रह्म सत्यमेकाक्षरं तपः।
सत्यमेकाक्षरो यज्ञः सत्यमेकाक्षरं श्रुतम्॥

—महाभारत शान्तिपर्व, १९९ अध्याय

सत्य (सत्) एक अक्षर वाला ब्रह्म है, सत्य (सत्) एक अक्षर वाला तप है, सत्य (सत्) एक अक्षर वाला यज्ञ है तथा सत्य (सत्) एक अक्षर वाला शास्त्र है।

नास्ति सत्यात् परो धर्मो नानृतात् पातकं परम्।

—महाभारत शान्तिपर्व, १६२ अध्याय

सत्य से बढ़कर कोई धर्म नहीं तथा झूठ से बढ़कर कोई पाप नहीं।

साँच बराबर तप नहीं झूठ बराबर पाप।
जाके हिरदै साँच है ताके हिरदै आप॥

—कबीर

दयया सर्वभूतेषु सन्तुष्टचा येन केन वा ।
सर्वेन्द्रियोपशान्त्या च तुष्यत्याशु जनार्दनः ।।

—श्रीमद्भागवत

सब प्राणियों पर दया करने से, थोड़े में ही सन्तोष करने से तथा सभी इन्द्रियों को वश में रखने से, भगवान् बहुत शीघ्र प्रसन्न हो जाते हैं ।

ईश्वर पर भरोसा करना

५ तू अपनी समझ का सहारा न लेना, वरन् सम्पूर्ण मन से यहोवा पर भरोसा रखना । ६ उसी को स्मरण करके सब काम करना, तब वह तेरे लिए सीधा मार्ग निकालेगा ।

—बाइबिल–नीतिवचन ३/५-६

मामनुस्मर युद्धच च ।

—श्रीमद्भगवद्गीता ८/७

मुझे स्मरण करता हुआ तू युद्ध कर ।

सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज ।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः ।।

—श्रीमद्भगवद्गीता १८/६६

सभी धर्मों को त्यागकर तू मेरी शरण में आजा । मैं तुझे सभी पापों से बचा लूंगा । शोक मत कर ।

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते ।
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम् ।।

—श्रीमद्भगवद्गीता ९/२२

जो मनुष्य अनन्यमन से ध्यान करते हुए मेरी उपासना करते हैं उन निरन्तर उपासना करने वाले मनुष्यों के लिए मैं अप्राप्त पदार्थों को देता हूँ तथा प्राप्त पदार्थों की रक्षा करता हूँ ।

बुद्धिमत्ता का अभिमान न करना तथा परमेश्वर का भय मानना

७ अपनी दृष्टि में बुद्धिमान् न होना; यहोवा का भय मानना, और बुराई से अलग रहना । ८ ऐसा करने से तेरा शरीर§ भला चंगा, और तेरी हड्डियाँ पुष्ट रहेंगी ।

—बाइबिल–नीतिवचन ३/७-८

---

§ मूल में–तेरी नाभि ।

अनु०—अविद्या के मध्य रहने वाले, अपने को बड़ा ज्ञानी और पण्डित मानने वाले मूढ़ अन्धे के नेतृत्व में चलने वाले अन्धे के समान अत्यधिक कष्ट पाते हुए भटकते रहते हैं। (८)

सि० अ०—जो लोग कि मोह और घोर अज्ञानस्वरूप अविद्या में फँसे हुए हैं और अपने को विद्वान् और बुद्धिमान समझते हैं उन्हें दुःख और रोग सर्वनाश और मृत्यु की ओर इस प्रकार ले जाते हैं मानो किसी अन्धे का हाथ दूसरा अन्धा पकड़कर रास्ते में ले चल रहा हो और दोनों कूप में गिर पड़ते हों। [८]

अविद्यायां बहुधा वर्तमाना
वयं कृतार्था इत्यभिमन्यन्ति बालाः।
यत् कर्मिणो न प्रवेदयन्ति रागात्
तेनातुराः क्षीणलोकाश् च्यवन्ते ॥९॥

अनु०—अविद्या में बहुधा रहने वाले मूर्ख 'हम कृतार्थ (सफल, सिद्ध) हैं' इस प्रकार अभिमान किया करते हैं। चूँकि कर्मकाण्डी आसक्ति के कारण ज्ञान लाभ नहीं कर पाते इसलिए वे दुःखार्त्त होकर लोक (कर्मफल) क्षीण होने पर [स्वर्ग से] च्युत हो जाते हैं। (९)

सि० अ०—ये लोग इस अज्ञान के साथ-साथ बालबुद्धि और मूर्ख हैं जो यह समझते हैं कि हमारे लिए जो कुछ करणीय था उसे हम ने कर लिया है। और जो कोई ईश्वर को न पहचान कर समझता है कि कर्मों के द्वारा हमें ढेर सा पुण्य प्राप्त होगा ऐसे लोग इन कर्मों के फल को प्राप्त कर के पुण्य क्षीण होने पर श्रम, दुःख, और नरक में पड़ते हैं। [९]

इष्टापूर्तं मन्यमाना वरिष्ठं
नान्यच्छ्रेयो वेदयन्ते प्रमूढाः।
नाकस्य पृष्ठे ते सुकृतेऽनुभूत्वे-
मं लोकं हीनतरं वा विशन्ति ॥१०॥

अनु०—इष्ट और पूर्त [कर्मों] को ही सर्वोत्तम मानने वाले महामूढ कोई अन्य श्रेय नहीं जानते। वे सुकृत के फलस्वरूप स्वर्गलोक के उच्चतर प्रदेश का अनुभव कर इस [मनुष्य] लोक अथवा इस से भी हीन लोक में प्रवेश करते हैं। (१०)

सि० अ०—वे कर्म जिन से अच्छा फल प्राप्त होता है दो प्रकार के होते हैं—एक इष्ट अर्थात् यागादि और दूसरे पूर्त्त अर्थात् दान आदि। जिस किसी ने इन दोनों को अपने कल्याण की प्राप्ति हेतु श्रेष्ठ मान रखा है और आत्मा और आत्मज्ञान को मोक्ष का साधन नहीं मानता वह इस दृष्टि से महामूर्ख है। चूँकि उस का मन सन्तान, स्त्री, संसार, और धन-धान्य में अत्यधिक लीन है अतः वह जो भी कर्म करता है इन्हीं पदार्थों की कामना से करता है और इन्हीं पदार्थों की प्राप्ति पर दृष्टि रखता है। वह व्यक्ति चन्द्रलोक में जा कर शुभकर्मों के फल को प्राप्त कर के पुनः नरक में लौट आता है। [१०]

तपःश्रद्धे ये ह्युपवसन्त्यरण्ये
शान्ता विद्वांसो भैक्ष्यचर्यां चरन्तः
सूर्यद्वारेण ते विरजाः प्रयान्ति
यत्रामृतः स पुरुषो ह्यव्ययात्मा ॥११॥

अनु०—जो शान्त विद्वान् भिक्षावृत्ति का आचरण करते हुए वन में तप और श्रद्धा का सेवन करते हैं वे निष्पाप हो कर सूर्यद्वार (उत्तरायणमार्ग) से वहाँ जाते हैं जहाँ वह अमृत, अव्ययस्वरूप पुरुष है। (११)

सि० अ०—जो लोग साधन और तपस्या करते हैं, सच्ची श्रद्धा रखते हैं, वनों में समाधि लगाते हैं, स्त्री और संतान नहीं रखते अथवा स्त्री और संतान रखते हैं और ज्ञान के भूखे हैं, और संन्यास ले लेते हैं, वे मरने के बाद सूर्य की रश्मिओं के मार्ग से शुद्ध हो कर सूर्य के बीच से हो कर उस स्थान को प्राप्त होते हैं जहाँ उस अमर, अविनाशी, और नित्य पुरुष का निवास है। यहाँ इस पुरुष से हिरण्यगर्भ अभिप्रेत है, अर्थात् महाभूतों का अधिष्ठान। [११]

परीक्ष्य लोकान् कर्मचितान् ब्राह्मणो
निर्वेदमायान्, नास्त्यकृतः[1] कृतेन।
तद्विज्ञानार्थं स गुरुमेवाभिगच्छेत्
समित्पाणिः श्रोत्रियं ब्रह्मनिष्ठम् ॥१२॥

अनु०—ब्राह्मण कर्मद्वारा प्राप्त लोकों की परीक्षा कर निर्वेद को प्राप्त हो जाय, [क्यों कि] कृत (कर्म) से अकृत (नित्य) [की प्राप्ति

१ 'अकृतः' इसी अर्थ में छान्दोग्योपनिषद् ८.१३ में भी आया है।

संभव] नहीं। उस [नित्य का] परम ज्ञान प्राप्त करने के लिए हाथ में समिधा ले कर श्रोत्रिय, ब्रह्मनिष्ठ गुरु के ही पास जाना चाहिए। (१२)

सि० अ०—जो कोई ब्रह्मवित् अर्थात् ज्ञानी होना चाहता है उसे चाहिए कि जाने कि समस्त कर्मों का फल ससीम है। अतः उसे समस्त कर्मों का त्याग कर देना चाहिए, उन की कामना हृदय से दूर कर देनी चाहिए, और जानना चाहिए कि कर्म इस पुरुष से उत्पन्न हैं। वे इसी कारण समाप्त हो जाते हैं, और आत्मा सदा अपनी सत्ता से नित्य और ध्रुव है तथा अजन्मा। [उसे] प्राप्त करने और स्वयं वही हो जाने के लिए कर्म की अपेक्षा नहीं होती। उस की प्राप्ति का मार्ग केवल ज्ञान है, दूसरा मार्ग नहीं। चाहिए कि नियत विधि से किसी गुरु के समक्ष उपस्थित होवे, जो गुरु वेदज्ञ और ब्रह्मज्ञानी हो, अर्थात् ब्रह्मनिष्ठ श्रोत्रिय। [१२]

तस्मै स विद्वानुपसन्नाय, सम्यक्-
प्रशान्तचित्ताय, शमान्विताय
येनाक्षरं पुरुषं वेद सत्यं
प्रोवाच तां तत्त्वतो ब्रह्मविद्याम् ॥१३॥

अनु०–वह विद्वान् अपने समीप आये हुए, उस पूर्णतया शान्तचित्त जितेन्द्रिय [शिष्य] को उस ब्रह्मविद्या का तत्त्वतः उपदेश करे जिस से उस सत्य, अक्षर पुरुष का ज्ञान होता है। (१३)

सि० अ०—उस गुरु को चाहिए कि वह जब शिष्य को सच्चा जिज्ञासु पाये और जाने कि उस की इन्द्रियाँ उसके वश में हैं, वह साधना और तपस्या का अभिमान और अहंकार नहीं रखता, और जैसे चाहिए उस प्रकार ब्रह्म की खोज में आया हुआ है, उस समय ब्रह्म-विद्या का उपदेश बेझिझक हो कर और खुल कर करे जिस से उस शाश्वत सत्ता की प्राप्ति होती है। यह है सच्चा मार्ग। [१३]

॥ इति द्वितीयः खण्डः ॥

द्वितीयो मुण्डकः

प्रथमः खण्डः

तदेतत् सत्यं—

यथा सुदीप्तात् पावकाद् विस्फुलिङ्गाः
सहस्रशः प्रभवन्ते सरूपाः।
तथाक्षराद् विविधाः सोम्य ! भावाः
प्रजायन्ते तत्र चैवापि यन्ति ॥१॥

अनु०—वह यह सत्य है—जिस प्रकार अत्यन्त प्रदीप्त अग्नि से उसी के अनुरूप सहस्रों स्फुलिङ्ग (चिनगारियाँ) फूटते हैं, उसी प्रकार हे सोम्य ! अक्षर से विविध भाव (पदार्थ) जन्म लेते हैं और उसी में लीन भी हो जाते हैं। (१)

सि० अ०—जिस प्रकार जो अग्नि अत्यधिक प्रज्वलित होती है उस अग्नि से सहस्रों चिनगारियाँ फूटती हैं और सभी प्रकाशों और वर्णों में वही अग्नि होती है, उसी प्रकार, हे सोम्य ! उस अक्षर अर्थात् अव्यय पुरुष से सारे जीवात्मा अर्थात् जीव प्रकट होते हैं और उसी आत्मतत्त्व में लीन हो जाते हैं। [१]

दिव्यो, ह्यमूर्तः पुरुषः[1], सबाह्याभ्यन्तरो, ह्यजः,
अप्राणो, ह्यमनाः, शुभ्रो, ह्यक्षरात् परतः परः ॥२॥

अनु०—पुरुष निश्चय ही दिव्य, अमूर्त, बाहर-भीतर विद्यमान, अजन्मा, अप्राण, मनःशून्य, विशुद्ध, एवं परम अक्षर से भी परे है। (२)

सि० अ०—वह सत्ता ज्योतिर्मय है, वह सत्ता अरूप है, वह सत्ता सब के भीतर पुरुष है, वह सत्ता सनातन है, अनुत्पन्न है, उस सत्ता के बाह्य और आभ्यन्तर इन्द्रियाँ नहीं हैं, वह सत्ता शुद्ध और सूक्ष्म है, वह सत्ता हिरण्यगर्भ से भी श्रेष्ठतर है जिस ने सभी वस्तुओं को उत्पन्न किया है, और वह सभी से वरिष्ठ है। [२]

एतस्माज् जायते प्राणो, मनः, सर्वेन्द्रियाणि च,
खं, वायुर्, ज्योतिरापः, पृथिवी विश्वस्य धारिणी ॥३॥

अनु०—इस से प्राण उत्पन्न होता है, मन, समस्त इन्द्रियाँ, आकाश, वायु, तेज, जल, और सब को धारण करने वाली पृथ्वी। (३)

---

१ मंत्र २.१.१० के 'पुरुष' तथा गीता के उत्तमः पुरुषः (१५.१७) अथवा 'पुरुषोत्तम' (१५.१८-१९) से तुलनीय।

सि० अ०—बाह्य और आभ्यन्तर सभी इन्द्रियाँ जो प्राण और मन आदि हैं; भूताकाश, वायु, अग्नि, जल, और लोकों को धारण करने वाली पृथ्वी—सभी उसी सत्ता से उत्पन्न हुए हैं। [३]

अग्निर् मूर्धा, चक्षुषी चन्द्रसूर्यौ,
दिशः श्रोत्रे, वाग् विवृताश् च वेदाः,
वायुः प्राणो, हृदयं विश्वमस्य,
पद्भ्यां पृथिवी ह्येष सर्वभूतान्तरात्मा ॥४॥

अनु–अग्नि इस का मस्तक है, चन्द्रमा और सूर्य नेत्र हैं, दिशाएँ कर्ण हैं, प्रसिद्ध वेद वाणी हैं, वायु प्राण है, विश्व हृदय है, पृथिवी इस के चरणों से [प्रकट हुई] क्यों कि वह समस्त भूतों का अन्तरात्मा है। (४)

सि० अ०—सम्पूर्ण जगत् उस का रूप है। सातवाँ लोक जो सब से ऊपर है उस का मस्तक है। सूर्य और चन्द्र उस की दोनों आँखें हैं। दिशाएँ उस के दोनों कान हैं। वेद जिन से सभी वस्तुओं का ज्ञान होता है उस की वाणी हैं। वायु उस का प्राण है, अर्थात् उस का श्वासोच्छ्वास। सम्पूर्ण जगत् उस का हृदय है। उस की सुषुप्तावस्था में सम्पूर्ण जगत् नष्ट हो जाता है, क्योंकि सुषुप्ति-संज्ञक निद्रा के समय मनुष्य का हृदय जो जगत् के समान है जीवात्मा में लीन हो जाता है। पृथ्वी के सातों तल उस के चरण हैं। वह सत्ता सब का प्राण है और प्राणों का प्राण है। उस सत्ता से ब्रह्माण्ड जो पूर्ण पुरुष है और जिसे विराट् पुरुष कहते हैं प्रकट हुआ। [४]

तस्मादग्निः समिधो यस्य सूर्यः,
सोमात् पर्जन्य, ओषधयः पृथिव्याम्।
पुमान् रेतः सिञ्चति योषितायां,
बह्वीः प्रजाः पुरुषात् सम्प्रसूताः ॥५॥

अनु०–उस से अग्नि [हुआ] जिस का समिधा सूर्य है, सोम से मेघ, और पृथिवी पर वनस्पतिआँ। पुरुष स्त्री में वीर्य सींचता है, [यह] बहुत-सी प्रजा पुरुष से उत्पन्न हुई है। (५)

सि० अ०—पाँच विशिष्ट अग्निआँ जो स्वर्ग, चन्द्र, पर्जन्य, पृथ्वी, और स्त्री-पुरुष हैं उस से उत्पन्न हुई हैं। सूर्य प्रथम अग्नि है जो स्वर्ग-रूप है और जिस से सारी वनस्पतिआँ उद्भूत हो कर धरती पर उगती हैं। पुरुष जो कि वीर्य सींचता है उसी से उत्पन्न हुआ है। सारी प्रजाएँ उसी से उत्पन्न हुई हैं। [५]

तस्माद् ऋचः; साम; यजूंषि; दीक्षा;

यज्ञाश् च सर्वे; क्रतवो; दक्षिणाश् च;

संवत्सरश् च; यजमानश् च; लोकाः,

सोमो यत्र पवते, यत्र सूर्यः[1] ।।६।।

अनु०—उस [पुरुष] से ऋचाएँ; साम; यजुः; दीक्षा; समस्त यज्ञ; क्रतु; दक्षिणा; संवत्सर; यजमान; और लोक, जहाँ चन्द्रमा तपता है, जहाँ सूर्य [तपता है—हुए] । (६)

सि० अ०—चारों वेद उसी से उत्पन्न हुए हैं। दीक्षा उसी से उत्पन्न हुई है। छोटे और बड़े यज्ञ उसी से उत्पन्न हुए हैं। दक्षिणाएँ और इन अनुष्ठानों के प्रयोक्ताओं का काल-निर्धारण [अर्थात् कर्मांग-काल] उसी से उत्पन्न हुआ है। जिन (कर्म-फलों के कारण स्वर्ग प्राप्त होता है वे उसी से उत्पन्न हुए हैं। सूर्य और चन्द्र उसी के आदेश से चलते हैं। [६]

तस्माच् च देवा बहुधा सम्प्रसूताः,

साध्या, मनुष्याः, पशवो, वयांसि,

प्राणापानौ, व्रीहियवौ, तपश् च,

श्रद्धा, सत्यं, ब्रह्मचर्यं, विधिश् च ।।७।।

अनु०—उस से बहुत-से देवता उत्पन्न हुए, [तथा] साध्यगण, मनुष्य, पशु, पक्षी, प्राण-अपान, व्रीहि-यव, तप, श्रद्धा, सत्य, ब्रह्मचर्य, और विधि । (७)

सि० अ०—भाँति-भाँति के देवता, भाँति-भाँति के मनुष्य, भाँति-भाँति के पशु, भाँति-भाँति के पक्षी, और भाँति-भाँति के वायु—प्राण, अपान, समान, व्यान, और उदान—उसी से उत्पन्न हुए हैं। भाँति-भाँति के अन्न और तप, भाँति-भाँति की श्रद्धाएँ, धर्म, सत्य, त्याग, ब्रह्मचर्य, और विधि-निषेध [उसी से उत्पन्न हुए हैं] । [७]

सप्त प्राणाः[2] प्रभवन्ति तस्मात्,

सप्तार्चिषः, समिधः, सप्त होमाः,

सप्त इमे लोका येषु चरन्ति प्राणा

गुहाशया निहिताः सप्त सप्त ।।८।।

---

१ 'पितृलोक' और 'देवलोक' छान्दोग्योपनिषद् ५.१० में भी द्रष्टव्य

२ तुलनीय १.२.४; प्रश्नोपनिषद् ३.५

अनु०—उस से सात प्राण उत्पन्न होते हैं, सात अर्चिआँ (अग्निशिखाएँ) और समिधाएँ, सात होम, [और] ये सात लोक जिन में गुहा में सात-सात कर के स्थापित प्राण विचरण करते हैं। (८)

सि० अ०—सप्तप्राण—दो नेत्र, दो श्रोत्र, दो घ्राण, और एक मुखरन्ध्र—उसी से उत्पन्न हुए हैं और इन सातों की सात शक्तिआँ उसी से उत्पन्न हुई हैं। सात वस्तुएँ जो इन सात शक्तिओं से जानी जाती हैं और सात वस्तुएँ जिन का इन सात शक्तियों से ग्रहण होता है उन सातों का अधिष्ठान जो सभी प्राणियों में [प्राप्त होता है] उसी से उत्पन्न हुआ है। इन्द्रियों से अपने-अपने विषय का ज्ञान होता है, किन्तु उन इन्द्रियों की शक्तिओं का अनुभव नहीं होता। स्वर्गलोक, जिस में कर्म-फल की प्राप्ति होती है, उसी से उत्पन्न हुआ है। [८]

अतः समुद्रा गिरयश् च सर्वे,
ऽस्मात् स्यन्दन्ते सिन्धवः सर्वरूपाः,
अतश् च सर्वा ओषधयो रसश् च,
येनैष भूतैस् तिष्ठते ह्यन्तरात्मा ॥९॥

अनु०—इस से समस्त समुद्र और पर्वत [प्रकट हुए] हैं; इस से सभी प्रकार की नदियाँ बहती हैं; इस से समस्त ओषधिआँ और रस [प्रकट हुए] हैं, जिस [रस] से यह अन्तरात्मा भूतों सहित स्थित है। (९)

सि० अ०—सातों महासमुद्र उसी से उत्पन्न हुए हैं, छोटी और बड़ी सभी नदियाँ उसी से उत्पन्न हुई हैं, पर्वत उसी से उत्पन्न हुए हैं, सभी वनस्पतिआँ उसी से उत्पन्न हुई हैं। इसी से जाना जाता है कि, यद्यपि ये सभी वस्तुएँ उस से उत्पन्न हुई हैं, वह सर्वरूप है। [९]

पुरुष[१] एवेदं विश्वं, कर्म, तपो, ब्रह्मपरामृतम्। एतद् यो वेद
निहितं गुहायां सोऽविद्याग्रन्थिविकिरतीह सोम्य ! ॥१०॥

अनु०—यह सब कर्म, तप, पर और अमृतरूप ब्रह्म पुरुष ही है। उसे जो गुहा में निहित जानता है, हे सोम्य ! वह इस लोक में अविद्या की ग्रन्थि को भङ्ग कर देता है। (१०)

सि० अ०—यह सम्पूर्ण जगत् पुरुष ही है, अर्थात् वह पुरुष सब में पूर्ण है। सभी कर्म और समस्त तप वही है। वह साक्षात् ब्रह्म है। वह ब्रह्म सब से ज्येष्ठ और

---

१ मंत्र २.१.३ की टिप्पणी द्रष्टव्य।

श्रेष्ठ है, और है मृत्यु-रहित। इस ब्रह्म को जो कोई इस प्रकार जान लेता है कि वह मेरे हृदय में वर्त्तमान है, वह अपने अज्ञान और अविद्या की सभी ग्रन्थिओं को खोल देता है। [१०]

॥ इति प्रथमः खण्डः ॥

द्वितीयः खण्डः

आविः, संनिहितं, गुहाचरं नाम महत्पदमत्रैतत् समर्पितम्, एजत्, प्राणन्, निमिषच् च यत्। एतज् जानथ सदसद्वरेण्यं, परं विज्ञानाद्, यद् वरिष्ठं प्रजानाम् ॥१॥[1]

अनु०—यह ब्रह्म प्रकाशस्वरूप, समीपस्थ, गुहाचर नाम वाला, और महत्पद है। यह जो चलता है, प्राणन करता है, और निमेषोन्मेष करता है इसी में समर्पित है। तुम इसे जानो, जो सत् और असत् द्वारा वरण करने योग्य, प्रार्थनीय, विज्ञान से परे, और प्रजाओं में सर्वोत्कृष्ट है। (१)

सि० अ०—हे सोम्य! वह प्रकट है, वह समीपतर है, वह हृदय की गुहा में संचार करता है। ब्रह्म से महान् कोई पद नहीं है। समस्त संसार में जो कुछ जंगम, प्राणवान् और सजीव है वह उसी के भीतर है। उसे सब से श्रेष्ठ समझना चाहिए। वह बुद्धि से भी वरिष्ठ है जिस से वस्तुओं का ज्ञान होता है। वही सब का मूल है। [१]

यदर्चिमद्, यदणुभ्योऽणु च, यस्मिँल् लोका निहिता लोकिनश् च,
तदेतदक्षरं ब्रह्म स प्राणस् तदु वाङ्, मनः।
तदेतत् सत्यं, तदमृतं, तद् वेद्धव्यं सोम्य! विद्धि ॥२॥

अनु०—जो दीप्तिमान् है...अणु से भी अणु है, जिस में लोक और उन के निवासी स्थित हैं, वह यह अक्षर ब्रह्म है। वही प्राण है, वही वाक् और मन है। वही यह सत्य है, वह अमृत है। हे सोम्य! उस का [ध्यान द्वारा] वेधन होना चाहिए, तू वेधन कर। (२)

सि० अ—वह प्रकाशस्वरूप है। वह सूक्ष्मों में सूक्ष्मतर है। सम्पूर्ण जगत् और जगत् में जो कुछ है वह सब उस के भीतर है। वह अक्षर सत्ता है, ब्रह्म है, प्राण है, वाणी है, मन है, ऋत और सत्य है, अमर है। हे सोम्य! वही मनोभाव का लक्ष्य है। तू उसी को अपने मन का लक्ष्य बना। [२]

---

१ तुलनीय—अथर्ववेद १०.८.६

ब्रह्मवचोविषं मद्विषसंयुतं
ब्रह्मप्रळयसमं तव विद्ययुम् । २८
ऎन्ने विचित्रमे नन्नु नन्नॆत्रयुं-
मॆन्नु परञ्ञु कॊट्टुत्तितु तक्षकन् २९
रत्नधनादिकळट़मिल्लातोळं
यत्नमिळच्चु मुनियुमतुनेरम् । ३०
कद्रु पुरा शपिच्चोरुमूलं निज-
पत्निवाक्यं चॆट्टु सत्यमाक्कीटुवा- ३१
नाश्रमं पुक्कु मुनीश्वरन् तक्षकन्
काश्यपन् पोयोरनन्तरं चिन्तिच्चान् । ३२
ऎन्तॊरुपायं नृपनॆक्कटिप्पति-
न्नन्तणर्क्कॆपोलटुत्तु चॆल्लावितुम् । ३३
ऎन्नतरिञ्ञु स्वजातिकळाकिय
पन्नगन्मारोटु चॊल्लिनान् तक्षकन् । ३४
निङ्ङळ् तपोधनवेषं धरिच्चुटन्
मङ्ङीटातोरु फल कॊट्टुत्तीटणम् ३५
सम्मानमाय् आनतिल्पुक्किरुन्नुकॊ-
ण्टम्महीपालनॆयुं कटिच्चीटुवन् ३६
तक्षकन् चॊन्नतु चॆय्तारवर्कळुम् ।
मुख्यनां भूपतिवीरनतुकालं ३७

ब्राह्मण-वाक्य रूपी विष मेरे विष से मिल गया है। आप की विद्या ब्रह्म और प्रलय के समान है। यह विचित्र बात है और आश्चर्य की बात है। इतना कहकर तक्षक ने काश्यप को नि:सीम रत्न और धन दिये और काश्यप भी अपने यत्न में कुछ ढीले पड़ गये। २०-३० कद्रू ने पहले ही शाप दे रखा था। अपनी पत्नी का वाक्य सत्य बनाने के लिये काश्यप अपने आश्रम चले गये। काश्यप के जाने के बाद तक्षक सोंचने लगा—"राजा को काटने का क्या उपाय हो सकता है। सुनते हैं कि केवल ब्राह्मण ही उनके पास जा सकते हैं"। यह जानकर तक्षक ने अपनी जाति के सर्पों से कहा—"आप सब लोग तुरन्त तपोधन का वेष धारण करके सम्मान हेतु राजा को एक उज्वल फल प्रदान कीजिए। मैं उसके अन्दर घुस जाऊँगा और राजा को काटलूँगा"। उन्होंने तक्षक के कहने के अनुसार किया। ३१-३६ उस समय नाथभूपति वीर (राजा

भार्ग्गवशौनककण्वविश्वामित्र
गार्ग्यवसिष्ठभरद्वाजगौतम ३८
याज्ञवल्क्यात्रिपुलस्त्यशंखागस्त्य
प्राज्ञपराशरद्वैपायनादियां
तापसश्रेष्ठन्मारुं द्विजाढ्यन्मारुं ३९
दिव्यन्माराय् मट्टुमुळ्ळ जनङ्ङळुं
सव्यसाचिप्रियपादभक्तन्मारु- ४०
मॉक्क वरिकॅन्ऩ्चच्चु वरुत्तिनान् ।
मुख्यनां भूपतिवीर नुमक्कोलं ४१
षोडशदानङ्ङळुं क्रमत्ताल् चॅय्तु
बान्धवप्रीतियुं चॅय्तु महादान-
मट़मिल्लातोळं चॅय्तु विशुद्धनाय् ४२
पुत्रनेयुं पुणन्ऩ्ॅरॅ मूर्धाविङ्कल्
बद्धमोदं बाष्पतीर्थाभिषेकवुं ४३
चॅय्तमात्याचार्यभृत्यवर्ग्गत्तिनुं
कैतवहीनं कॉट्टुत्तानभिमतं । ४४
भूसुरन्मारुं मुनीन्द्ररुं शिष्यरुं
दासवरन्मारुमायुटन् प्रासादं ४५
भागीरथीजलमध्यस्थमेऱिनान् ।
भागधेयांबुधि भागवतोत्तमन् ४६
श्वेतद्वीपोपरि श्वेतपद्मासने
श्वेतपतिरिव रेजे मध्ये गंगाम् । ४७

परीक्षित्) ने भार्गव, शौनक, कण्व, विश्वामित्र, गार्ग्य, वसिष्ठ, भरद्वाज, गौतम, याज्ञवल्क्य, अत्रि, पुलस्त्य, शंख, अगस्त्य, प्राज्ञ, पराशर, द्वैपायन आदि तापस श्रेष्ठों को, ब्राह्मणोत्तमों को, और दिव्य जनों को, और सव्यसाचि (अर्जुन) के मित्र (श्रीकृष्ण) के चरणों के भक्तों को निमन्त्रण देकर बुलाया। तदनन्तर क्रम से सोलह दान करके बान्धवों को खुश करके निःसीम महादानों से विशुद्ध होकर अपने पुत्र को खूब आलिङ्गन करके उसके शीर्ष (सिर) पर प्रमोद के साथ आसुओं का अभिषेक करके अपने अमात्य, आचार्य और भृत्यवर्ग को बिना कैतव (छल) के यथेष्ट दान किया। ३७-४४ तदनन्तर भूपति ब्राह्मणों, मुनीन्द्रों, शिष्यों, और दासवरों के साथ गंगा के जल के बीच में स्थित प्रासाद पर चढ़े।

चुट्टुमिरुत्ति नानासनाग्रङ्ङळिल्
मट्टुळ्ळवरॅ यथायोग्यमुर्व्वीशन् । ४८
दर्भं विरिच्चु वटक्कु तिरिञ्ञिरु-
न्नप्पोळनशनं दीक्षिच्चु शुद्धनाय् ४९
धृत्वा पवित्रं पुनरुपसत्ति-
नॅ कृत्वा प्रदक्षिणं कृत्वा मुहुस्त्रयं ५०
मामुनीन्द्रन्मारॅ वन्दिच्चु चोदिच्चान् ।
भूमिदेवोत्तमन्मार्क्कु नमस्कारम् ! ५१
जन्मङ्ङळेट्टमिनियुमुण्टाकिलुं
निर्म्मलन्माराय भूमिदेवन्मारि- ५२
लुण्टाकरुतणुमात्रमवमान-
मुण्टाकवेणमिळकात भक्तियुम् । ५३
ऍन्नतनुग्रहिक्केणं विशेषिच्चु-
मॉन्नुण्टु ञानपेक्षिक्कुन्नु पिन्नॅयुम् । ५४
मर्त्त्यनायाल् मरिप्पान् तुटङ्ङुन्नेरं
कर्त्तव्यमॅन्तु मोक्षत्तिनु चॉल्लणम् । ५५
ऍन्नु राजावु चोदिच्चतु केट्टप्पोळ-
न्योन्यमालोकनं चॅय्तवर्कळुं ५६
वेदवेदान्तशास्त्रादिकळिल् तिर-
ञ्ञेतेतु नल्लतॅन्नोर्त्तिरिक्कुन्नेरं ५७

भाग्य का सागर, भागवतोत्तम, भूपति श्वेतद्वीप के ऊपर, सफ़ेद पद्मों के आसन पर, गंगा के बीच में श्वेतपति के समान विराजे। फिर राजा ने अपने चारों तरफ और लोगों को भी उनके पद के अनुसार अच्छे-अच्छे आसनों पर बैठाया। फिर दर्भ (कुश) बिछाकर उत्तर की ओर मुख कर के बैठे और उपवास-दीक्षा से शुद्ध होकर पवित्र धारण करके उपसत् की तीन वार प्रदक्षिणा करके महामुनियों की वन्दना करके उनसे पूछा— ४५-५० "भूदेवों (ब्राह्मणों) को नमस्कार! यद्यपि अनेक और जन्म आनेवाले हों तथापि मुझे ऐसा अनुग्रह दीजिए कि मेरा निर्मल ब्राह्मणों के प्रति अणुमात्र भी अपमान कभी न हो और उनके प्रति निश्चल भक्ति ही हो। और एक विशेष बात है जिसकी मैं आप से याचना करता हूँ। जब आदमी मरनेवाला है तो उससे मोक्ष प्राप्त करने का उपाय बतलाना चाहिये"। राजा की इस प्रार्थना को सुनकर वे मुनिजन

कृष्णावर्त्माभया काणायितन्तिके
कृष्णतनूजनां श्रीशुकन्तन्नॅयुम् । ५८
ऑन्नाशु मिन्निस्सभातलमन्नेर-
मिन्द्रसभान्ते बृहस्पति सल्गुरु ५९
वन्नतुपोलॅ विळङ्ङी सभातलम् ।
सुन्दररूपन् दिगंबरन् निर्म्मलन् ६०
गर्भपात्रत्तिल् किटन्ननाळे पुरा
मुक्तनायुद्भविच्चोरु तपोधनन् ६१
मन्दमन्दमॅळुन्नळ्ळियनेरत्तु
मन्देतरं मान्यस्थानवुं नल्किनान् । ६२
पाद्यवुमाचमनीयवुमर्घ्यवु-
माद्यमामासनवुं मधुपर्क्कवुं ६३
वेद्यमांवण्णं विधाय तॅळिञ्ञभि-
वाद्यवुं चॅय्तु निन्नू नृपेन्द्राद्यरुम् । ६४
ञङ्ङळोटिन्नु चोदिच्च चोद्यत्तॅ नी
मंगलात्मावे तॅळिञ्ञु चोदिच्चालुं ६५
श्रीशुकनाय तपोधनश्रेष्ठनो-
टाशुतीरुं बहुसंशयमेवर्क्कुम् । ६६
मेलिल् कलियुगत्तिङ्कलुळ्ळोर्कळक्कु
नालां पुरुषात्र्थसाधनमाय्वरुम् । ६७

एक दूसरे का मुख देखने लगे और वेद और वेदान्तशास्त्रों में क्या क्या अच्छी बात है यह ढूँढने लगे। ५१-५७ उस समय कृष्णवर्त्मा (अग्नि) की शोभावाले श्रीकृष्णद्वैपायन के पुत्र शुकजी दिखाई दिये। तत्क्षण ही सारी सभा चमक उठी। जैसे सद्गुरु वृहस्पति के पधारने पर इन्द की सभा शोभायमान होती है उसी प्रकार वह सभा उज्वल हुई। जब सुन्दररूप, दिगम्बर, निर्मल, गर्भाशय में रहते समय ही मुक्त, तपोधन शुकजी धीरे-धीरे पधारे तब राजा ने उनको बहुत ही मान्य स्थान दिया। तदनन्तर पाद्य, आचमनीय, अर्घ्य, अग्रासन और मधुपर्क स्पष्ट रूप से भेंट करके, प्रसन्नता के साथ अभिवादन भी करके राजा आज्ञा की प्रतीक्षा में खड़े हो गये। ५८-६४ (मुनियों ने कहा—) "हे मंगलात्मन्। जो प्रश्न आज आप ने हम लोगों से पूँछा उसी को तपोधन श्रीशुकजी से प्रसन्न हो कर पूँछिए। तुरन्त सब के सभी संदेह दूर हो जायेंगे,

अन्त्यकालत्तिङ्कलॅन्तु मनुष्यनाल्
चिन्त्यमॅन्तॅन्तोन्नु कर्त्तव्यमायतुं ६८
श्रोतव्यमाकुन्नतॅन्तोन्नुमादराल्
मोदालरुळ्चॅय्कवेणं दयानिधे ! ६९
आसन्नमृत्युवायोरटियन् तव
दासपादांबुजभक्तजनोत्तमन् । ७०
मोक्षैकसाधनमायुळ्ळतिप्पॉळे
साक्षालटियनुपदेशिच्चीटणम् । ७१
शिष्योहमॅन्नभिवाद्यवुं चॅय्तु स-
न्तुष्टया पवित्रं धरिच्चिरुन्नीटिनान् । ७२
मन्दस्मितान्वितन् ब्रह्मरातन् गुरु-
वन्दनवुं चॅय्तरुळ्चॅय्तितन्नेरम् । ७३
ध्येयनाकुन्नतुं विष्णु नारायणन्
श्रोतव्यमाकुन्नतुं तलूक्कथामृतम् ७४
कर्त्तव्यमाकुन्नतुमभिवन्दनम्
चित्तं तॅळिञ्ञु केळ्क्कॅन्नरुळिच्चॅय्तु । ७५
श्रीशुकन् चॉल्लुन्न भागवतं केट्टॉ-
राशयुं कूटातॅ नारायणन्तङ्कल् ७६

और आगे जो कलियुग में रहते हैं उनके लिए चतुर्थ पुरुषार्थ (मोक्ष) का साधन होजायगा"। (राजा ने पूँछा—) "अन्तकाल में मनुष्य के लिए चिन्त्य क्या है ? कर्तव्य क्या है ? और श्रोतव्य क्या है ? यह सब आदर के साथ और प्रमोद के साथ, हे दयानिधे ! बतला दीजिए। यह दास आसन्नमृत्यु (मरनेवाला) है और आप के दासों के चरणों के भक्तों में श्रेष्ठ है। मोक्ष का जो एक मात्र साधन है उसका अभी-अभी इस दास को उपदेश कर दीजिए। मैं आप का शिष्य हूँ।" यह कह कर अभिवादन करके संतोष के साथ पवित्र धारण करके बैठ गये। उस समय ब्रह्मरात (श्रीशुकजी) ने मन्दस्मित (मन्द मुसकान) के साथ गुरु की वन्दना करके निवेदन किया—६५-७३ "विष्णु नारायण ही एकमात्र ध्येय हैं, उनका कथामृत ही एकमात्र श्रोतव्य है और उनका अभिवन्दन करना ही कर्तव्य है, प्रसन्नता के साथ सुन लीजिए"। तदनन्तर राजा परीक्षित् श्रीशुकजी की कही भागवत कथा सुनते हुए निःस्पृह होकर, भगवान् नारायण में लीन अपनी आत्मा के साथ एकान्त सुख में रहे और

एकीकरिच्चुळ्ळॉरात्माविनोटुंकू-
टेकान्तसौख्यं कलर्न्नु मरुवुम्पोळ् ७७
एषणपाशङ्ङळॉक्कवे खण्डिच्चा-
नेळां दिवसवुमस्तमिच्चू मुदा । ७८
भूपति चॉन्नारमात्य रोटन्नेरं
शापभयमिनिक्किल्लॅन्नतुं वन्नु । ७९
तापसन् तन्न फलमुपजीविच्चु
तापं कॅटुक्क नामॅन्नतु केट्टवर् ८०
पारातॅ पारणय्कॅन्नवर् चॉन्नप्पोळ्
पारिनु नाथन् परीक्षित्तुमादराल् ८१
ऐवरुमॉन्निच्चतिनु तुटङ्ङिनान् ।
सेवकन्मार्क्कु कॉटुत्तु नृपतियुं ८२
तानुमॅटुत्तानॉरु फलं भक्षिप्पान् ।
काणायितु चुवन्नोरु कृमियतिल् । ८३
ब्राह्मणभक्तनां भूपति चॉल्लिनान् ।
धार्म्मिकन्माराममात्यरोटन्नेरम् । ८४
तक्षकनॅन्नु पेरिट्टुकॉण्टिप्पोळ् ना-
मिक्कृमियॅक्कॉण्टुतन्नॅ कटिप्पिच्चाल् ८५
भूदेवशापमसत्यमायु वरा
खेदं नमुक्कु वरिकयुमिल्लल्लो । ८६

उस समय उनके सभी कामपाश खण्डित हो गये। और सातवें दिन का सूर्यास्तमय भी सुखपूर्वक व्यतीत हो गया। (तब राजा ने कहा)—"अब मुझे शाप से कोई भय नहीं है। इसलिए तापस का दिया हुआ फल खाकर हम लोग भूँख दूर करें।" यह सुन कर तुरन्त ही जब उन्होंने कहा कि यह पारण (उपवास के अन्त में किया जानेवाला भोजन) में खाया जाय तब पृथिवी के पति (राजा परीक्षित) ने औरों के साथ वही करना प्रारंभ किया। राजा ने पहले सेवकों को दे कर स्वयं खाने के लिए एक फल लेलिया। तब उसमें एक लाल कीड़ा दिखाई दिया और ब्राह्मणभक्त राजा ने अपने धार्मिक मन्त्रियों से कहा—७४-८४ "अगर हम इसको तक्षक नाम दे दें और इसी से अपने को कटवावें तो ब्राह्मण का शाप असत्य नहीं सिद्ध होगा और मुझको दुःख भी नहीं होगा।" उन्होंने (मन्त्रियों) ने उत्तर दिया—"यह ठीक है क्योंकि अन्ततोगत्वा कोई भी

नल्लतितॅन्नारवरुमॉळिक्करु-
तल्लो विधिविहितमॉरुजातियुम् । ८७
मन्दमॅट्टुत्तु कळुत्तिलणच्चप्पोळ्
दन्दशूकाधिपनाकिय तक्षकन् ८८
चुट्टिनान् भूपतितन्नुटलॉक्कवे ।
मट्टुळ्ळवर् भयत्तोटुमोटीटिनार् ८९
हालाहलानलज्ज्वालया भूपति
कोलाहलत्तोटु नाकलोकं पुक्कान् । ९०
दुःखितन्मारामत्यरुमाशु शे-
षक्रिय पुत्रनॅक्कॉण्टु चॅय्यिप्पिच्चार् । ९१
राज्याभिषेकवुं चॅय्तु नानाजन-
पूज्यनाय् वाणान् जनमेजयनृपन् । ९२
काशीशपुत्रि वपुष्टमयोटु भू-
मीशन् सुखिच्चु वसिक्कुन्नतु कालम् । ९३
नित्यविरक्तन् जरत्कारु मामुनि
भक्त्या वनान्तरे संचरिक्कुं विधौ ९४
कण्टितु वासुकि वन्दिच्चु तान् कूट्टि-
क्कॉण्टुपोय् सोदरि तन्नॅ नल्कीटिनान् - ९५
अप्रियं चॅय्कतान् चॉल्कतान् चॅय्तिल् आ-
नप्पोळुपेक्षिक्कुमॅन्नतुं चॉल्लिनान् । ९६

विधि का विहित नहीं टाल सकता"। जब राजा ने उसे धीरे-धीरे लेकर अपने गले में रखा तो सर्पों के नाथ तक्षक ने राजा के सारे शरीर को घेर लिया। और सब लोग डर के कारण भाग गये। हालाहल विष की आग की ज्वाला से राजा बड़े कोलाहल के साथ स्वर्ग चले गये। तब दुःखित मन्त्रियों ने तुरन्त ही शेष क्रिया को राजा के पुत्र से करवाया। राज्याभिषेक के होने के बाद राजा जनमेजय ने विविधि प्रजाओं से पूजित होकर राज किया। तदनन्तर जब काशिराज की पुत्री वपुष्टमा के साथ राजा सुख से रहते थे, और सदा ही विरक्त महामुनि जरत्कारु भक्ति के साथ वनों में संचार करते थे, तब वासुकि ने उनको देखा। उनकी वन्दना करके उनको अपने साथ ले गया और उन्हें अपनी बहन को शादी में देदिया। (जरत्कारु ने पहले ही कह दिया—) "अगर मेरा अप्रिय करोगी या कहोगी तो तुरन्त ही मैं छोड़कर चला जाऊँगा।" वह

भर्त्तृ शुश्रूषारतयामवळोटु
नित्यसुखत्तोटिरुन्नु मुनीन्द्रनुम् । ९७
इत्थं चिलनाळ् कळिञ्ञोरनन्तरं
सत्यपरायणनाय महामुनि ९८
मुग्धाक्षितन् मटियिल् तलयुं वच्चु
निद्रयुं पूण्टु किटक्कुन्नतुनेरं ९९
मित्रनुमस्तमिप्पानटुत्तु तुलोम्
भर्त्तावुणर्न्नतुमिल्लॅन्नुकण्टवळ् १००
चिन्तिच्चु कण्टालुणर्त्तरुतॅन्नतुं
संध्याविलोपं वरुत्तरुतॅन्नतुं १०१
सन्देहमुण्टायनेरत्तु तन्नुळ्ळिल्
सुन्दरिताने निरूपिच्चु कल्पिच्चु । १०२
संध्यालोपत्तिनु दोषमेरुं निद्र-
य्कन्तरं चॅय्कयत्रे पॉरुक्कावतु १०३
ऍन्नु कल्पिच्चुणर्त्तीटिनाळ् तापस-
नन्नेर माशु कोपिच्चु चॉल्लीटिनान् । १०४
ऍन्नॅयुणर्त्तुवानॅन्तु नी वल्लभे
निन्नुटॅ भर्त्तृ शुश्रूषाभंगं वन्नु । १०५
अन्धनॅन्नॅन्नॅ नी कल्पिक्क चॅय्ततुं
संध्यवरुम्पोळुणरुवन् ञानॅटो । १०६

बहुत ही सावधानी से अपने पति की सेवा में तत्पर थी और मुनीन्द्र उसके साथ सुख से रहने लगे । ८५-९७ इस प्रकार कुछ दिन के बीतने के बाद एक दिन सत्यपरायण महामुनि अपनी प्रियतमा की गोद में सिर रखकर सो रहे थे कि सूर्यास्तमय का समय निकट आ गया । जब अपने पति जाग नहीं रहे थे तब पत्नी सोंचने लगी—"एक तरफ तो उनको जगाना नहीं चाहिए और दूसरी तरफ उनकी संध्या का लोप नहीं होना चाहिए । क्या करूँ ?" इस सन्देह में सुन्दरी ने स्वयं निर्णय किया—"संध्या लोप में दोष अधिक होता है इसलिए नींद में बाधा डालना सहा जा सकता है"—यह सोंचकर उसने पति को जगाया । उस समय तापस ने क्रुद्ध होकर कहा—"प्रिये ! तुमने क्यों मुझे जगाया ? तुम्हारी भर्तृशुश्रूषा में भंग हो गया । तुमने मुझे अन्धा समझ लिया, क्या मैं संध्या के समय स्वयं नहीं जग जाता ? ९७-१०६

महोदर-कुम्भकर्ण कथा दुइजने ❋ सिंहासन छाड़ि तबे उठिल रावणे
संग्रामेर साजे राजा साजाय आपनि ❋ पराय मतिर पाग, थरे-थरे मणि
कुम्भकर्ण साजिछे, राक्षस पुलकित ❋ चारि दिके निशाचर साजये त्वरित
कुमारेर चाक येन, माणिक-अंगुरी ❋ कुम्भकर्ण-अंगुले पराय यत्नकरि
कतमत यतने पराय तोड़ताड़ ❋ माथार मुकुट येन मैनाक-पाहाड़
स्थाने-स्थाने मरकत-शोभा कत तार ❋ गलाय तुलिया दिल मणिमय हार
रत्नेते निर्म्मित दिल श्रवणे कुण्डल ❋ रवि-शशि जिनि ज्योति करे झलमल
मुकुटेर चूड़ा गिया आकाशेते जोड़े ❋ राजारे प्रणाम करि जुझिवारे नड़े५७
जुझिवारे कुम्भकर्ण चले एकेश्वर ❋ गगने मस्तक येन नव जलधर
आकाशेर चन्द्र खसे, वायु मन्दगति ❋ मेघे रक्त वरषय, काँपे वसुमती
आकाशे अमर काँपे, सागर उथले ❋ गड़ेर बाहिर ह'ये जुझिवारे चले
कुम्भकर्ण हैल यदि गड़ेर बाहिर ❋ वानर देखिया करे गर्ज्जन गभीर
बड़-बड़ वानरेर बड़-बड़ लम्फ ❋ कुम्भकर्णे देखिया सवार हैल कम्प
भये शुकाइल मुख, काँपिल अन्तर ❋ फेलिया पाथर-गाछ पलाय वानर
चूल नाहि बाँधे केह, ना परे कापड़ ❋ बड़-बड़ वानर उठिया दिल रड़
वानरेर भंग-रवे कर्णे लागे तालि ❋ शतकोटि वानरे पलाय शतबली
हिंगुलिया वानर हिंगुल जिनि अंग ❋ आशीकोटि वानरे पलाय शरभंग

महोदर-कुम्भकर्ण का सम्भाषण समाप्त हुआ तो रावण सिंहासन से उठ खड़ा हुआ और अपने हाथों से युद्ध की सज्जा पहनाने लग गया। मोती-जड़ी पगड़ी, कुम्हार की चाक जैसी माणिक जड़ी अंगूठी, मणिमय हार, रत्नमय कुंडल आदि पहनाये गये। कुम्भकर्ण को सज्जित होते देख कर राक्षस पुलकित हुए और वे भी युद्ध के लिए सज्जित होने लग गये। कुम्भकर्ण के मुकुट की चूड़ा आकाश से जा टकराई। राजा को प्रणाम कर वह रण में चल पड़ा॥ ५७॥

एकेश्वर कुम्भकर्ण जब लड़ने के लिए चला तो गगन में उसका मस्तक नव-जलधर सा दिखने लगा। आकाश से चन्द्र का स्खलन हुआ, पवन मन्दगति हो गया, मेघ से रक्तवर्षा होने लगी और वसुधा काँपने लगी। आकाश में अमरवृन्द काँपने लगे और समुद्र में उथल-पुथल मच गई। गढ़ से बाहर कुम्भकर्ण ने निकल कर बन्दरों को देख भीषण गर्जन किया। कुम्भकर्ण को देखकर बन्दरों की सिट्टी-पिट्टी गुम हो गई, कूद-फाँद बन्द हो गया, चेहरे सूख गये, दिल धड़कने लगे, पेड़-पत्थर फेंक-फाँक कर सब भागने लग गये। बन्दरों की भगदड़ से कानों के परदे फटने लगे। शतबली अपने शतकोटि बन्दरों को लेकर भागा, हिंगुल जैसे अंग वाले अपने अस्सी करोड़ हिंगुलिया बन्दरों के साथ शरभंग भागा। मलय-गिरि वाले गेरू रंग के छत्तीस करोड़ बन्दरों के साथ केशरी भागा। गवाक्ष और गय दोनों

मलय-गिरिर कपि वर्ण येन गेरी ※ छत्रिश-कोटि वानरेते पलाय केशरी
पलाल गवाक्ष गय भाइ दुइजन ※ वानर पञ्चाश-कोटि दोंहार भिड़न
भल्लुक-कटके पलाय मन्त्री जाम्बवान ※ आशीकोटि वानरे पलाय हनूमान
पलाय सुषेण-वेज राजार श्वशुर ※ तिनकोटि-वृन्द ठाट याहार प्रचुर५८

कुम्भकर्णेर युद्ध

पलाय वानर-ठाट, केह नाहि तिष्ठे ※ कोप करि अंगद चाहिछे एकदृष्टे
अंगद बले, कपिगण, भंग कि कारण ※ एकचड़े राक्षसार बधिब जीवन
जीवन-मरण नाहि आपनार वशे ※ युद्ध करि मरिले भुवन भरे यशे
यत युद्ध करिले, से-सब नाहि गणि ※ आजि रण जिनिले पौरुष बलि मानि
देवतार पुत्र तोरा, देव-अवतार ※ राक्षसेर रणे केन हासिब संसार
एत शुनि थरे-थरे फिरे कपिगण ※ कटक फिराये आने बालिर नन्दन
लाफ दिया कपि सब उठिल आकाशे ※ आकाशे उठिया गाछ-पाथर वरिषे
कुपिल से कुम्भकर्ण, हाते धरि शूल ※ वानर-कटक विन्धि करिल निर्म्मूल
बड़-बड़ वीरगणे शूले बिन्धि पाड़े ※ तृणगण येमन अनले पड़ि पुड़े
पर्वत तुलिया मारे वानर-कटके ※ कुम्भकर्ण-अंगे येन तृण हेन ठेके

भाई अपनी पचास-करोड़ की सेना लेकर भाग खड़े हुए। मंत्री जाम्बवान अपने भालू-कटक के साथ भागे। अस्सी करोड़ बन्दर लेकर हनुमान भाग चले। राजा का श्वसुर सुषेण वैद्य अपने तीन करोड़ सेना के साथ भाग खड़ा हुआ॥ ५८॥

कुम्भकर्ण का युद्ध

वानर-सेना भागने लगी है और कोई भी ठहरता नहीं है यह देखकर अंगद बेहद बिगड़ा। उसने कहा, क्यों कपिगण! यह क्या बात है जो तुम लोग भाग रहे हो। मैं एक ही झाँपड़ से इस राक्षस को मार डालूँगा। जीवन और मृत्यु अपने वश में नहीं होते—युद्ध के उपरान्त मरने पर यश मिलता है। जितने युद्ध आज तक तुम लोगों ने जीते मैं उनकी गिनती नहीं करता, आज का युद्ध जीतो तो मैं पौरुष मानूँ। तुम सब देवता के अवतार हो—राक्षसों के साथ युद्ध में क्यों जगहँसाई करते हो। इतना सुनकर सारे कपि एक-एक कर वापस चले आए। बालिपुत्र ने सारी वानर-सेना को संगठित किया। सारे कपि आकाश पर चढ़ गये और पेड़-पत्थरों की वर्षा करने लगे। कुम्भकर्ण बिगड़ गया और हाथ में शूल लेकर वानर-सेना को छेद-छेद कर निमूल करने लगा। बड़े-बड़े वीरों को शूल से यों मार डाला जैसे आग में घास-फूस जल जाती हो। वानर-सेना ने जो पहाड़ फेंक-फेंक कर मारे वह कुम्भकर्ण के शरीर पर तृण के समान लगे। क्रोधित होकर कुम्भकर्ण बन्दरों को दोनों हाथों से पकड़-पकड़ कर निगलने लगा॥ ५९॥

कुपिल से कुम्भकर्ण अति भयंकर ✻ दुइ हाते ध'रे ध'रे गिलिछे वानर ५९
भंग दिया वानर पलाय सब डरे ✻ कुम्भकर्ण केह सहित ना पारे
कुपिल से नील वीर कटके प्रधान ✻ शालगाछ आनिलेक गिया एकटान
शालगाछ आने येन पर्वतेर चूड़ा ✻ कुम्भकर्ण-गाये ठेके ह'ये गेल गुँडा
कुम्भकर्ण-रण केह सहिते ना पारे ✻ एकेश्वर नील रहे संग्राम-भितरे
साहस करिया युद्धे नील सेनापति ✻ आर चारि वीर तार मिलिल संहति
शरभंग कुमुद नल से गन्धमादन ✻ नीलेर संहति मिलि हैल पञ्चजन
पाँचवीर गाछ आर पर्व्वत उपाड़ि ✻ कुम्भकर्ण-बुके मारे दु-हातिया बाड़ि
वानरेर गाछ-पाथर किछुइ ना गणे ✻ हाते शूल कुम्भकर्ण चाहे पञ्चजने
रह रह बलि वीर वानरेर बले ✻ दुइ हाते सापटिया धरि कोले फेले
कोलेर चापने कपि हैल अचेतन ✻ मुखे रक्त उठे, श्वास बहे घने-घन
चापड़ेर घाये मूर्च्छे नील सेनापति ✻ पदाघाते पड़िल गवाक्ष योद्धपति
शरभंग गन्धमादन पड़े दुइजन ✻ पञ्चजना भूमे पड़ि हय अचेतन ६०
प्रथम समरे यदि पञ्चजन पड़े ✻ अनेक बानर आसि कुम्भकर्णे बेड़े
मार मार शब्दे कपि धाय उभ रड़े ✻ केह स्कन्धे चड़े, केह अंग चापि पड़े
केह पृष्ठे उठे, केह कील मारे घाड़े ✻ कार साध्य कुम्भकर्णे रणमध्ये पाड़े
वानर धरिया वीर चिबाइछे दाँते ✻ मुख संवरिते नारे, रक्त पड़े स्रोते

कुम्भकर्ण के आक्रमण को सह न सकने के कारण सारे बन्दर मैदान छोड़ कर भागने लगे। कटक के प्रधान वीर नील ने क्रोधित हो एक शालवृक्ष उखाड़ा, लेकिन कुम्भकर्ण के बदन से टकरा कर वह टुकड़ा-टुकड़ा हो गया। कुम्भकर्ण से लड़ने वाला सिवाय वीर नील के और कोई न रहा और चार वीर शरभंग, कुमुद, नल और गन्धमादन उनकी सहायता में रहे। पाँचों वीरों ने पेड़ों और पर्वतों को उखाड़-उखाड़ कर कुम्भकर्ण के सीने पर दोनों हाथों से दे मारा, लेकिन इसका कोई भी प्रभाव कुम्भकर्ण पर न पड़ा। उसने पाँचों को हाथों से समेट कर गोद में धर दबोचा। दबाव से कपि अचेतन हो गये, मुँह से खून निकल आया और साँस उखड़ने लगी। एक झाँपड़ की मार से नील सेनापति को मूर्च्छा आ गई, पदाघात से गवाक्ष सा रणपति भूमि पर लोटने लगा, शरभंग और गन्धमादन भी गिर गये—पाँचों के पाँचों बेहोश होकर धरती चूमने लगे॥ ६०॥

प्रथम संग्राम में ही जब पाँचों वानर गिर गये तो बहुत सारे वानरों ने आकर कुम्भकर्ण को घेर लिया। कोई तो उसके कंधे पर चढ़ गया तो कोई उसकी पीठ पर, कोई घूँसा मारने लगा तो कोई मुक्का। लेकिन कुम्भकर्ण को वश में करना किसी के बूते का नहीं था। वह बन्दरों को पकड़-पकड़ कर दाँतों से चबा रहा था और मुँह से निरन्तर खून की धारा बह रही थी।

सहस्र-सहस्र कपि सापटिया धरे ✽ पाताल-समान मुख ताहे ल'ये पूरे
नाक-कानेर पथ येन घरेर दुयार ✽ ताहा दिया कपि सब वेरय आपार ६१
लाफ दिया कुम्भकर्ण धरे अंगदेरे ✽ मूर्च्छित करिल तारे गदार प्रहारे
हाते गदा कुम्भकर्ण अति भयंकर ✽ गदार बाड़िते मारे अनेक वानर
शतबली भूमे पड़ि जाय गड़ागड़ि ✽ हनूमान-बुकेते मारिल गदाबाड़ि
गदा खेये हनूमान उठिल आकाशे ✽ आकाशे थाकिया गाछ पाथर-वरिषे
घने घने वर्षे येन महाशब्द शुनि ✽ कुम्भकर्ण-गदाभांगि कैलि खानि-खानि
गदा गेल, कुम्भकर्ण लागिल भाविते ✽ लाफ दिया हनूमाने धरिल त्वरिते
हनूमान-बुके मारे वज्रेर चापड़ ✽ चापड़ेर घाये हनूमान करे धड़फड़
भूमिते पड़िल यदि पवन-नन्दन ✽ रण छाड़ि पलाय यतेक कपिगण
बड़-बड़ वीर धाय भंग दिया रणे ✽ कुम्भकर्णे देखि केह स्थिर नहे मने ६२

सुग्रीव-कर्तृक कुम्भकर्णेर नासा-कर्ण-छेदन

बड़-बड़ वानर धरिया सब गिले ✽ आपनि सुग्रीव गेल संग्रामेर स्थले
शालवृक्ष उपाड़िलि पवनेर वेगे ✽ गाछ-हाते दाण्डाइल कुम्भकर्ण-आगे
बड़-बड़ वानर पाड़िलि वाछेर वाछ ✽ मोर घा सह रे बेटा, मारि शालगाछ
कुम्भकर्ण बले, आमि विधातार नाति ✽ एड़ देखि शालवृक्ष, बुझि रे शकति

हजारों कपियों को समेट कर वह अपने मुख-गह्वर में डाल लेता। नाक और कान के छिद्र मानों द्वार हों जिनमें से कपि निकल और घुस रहे थे ॥ ६१ ॥

कूद कर कुम्भकर्ण ने अंगद को पकड़ लिया और गदा के प्रहार से उसको मूर्च्छित कर डाला। हाथ में गदा पकड़े हुए कुम्भकर्ण का रूप बड़ा भयंकर है। गदा के प्रहार से उसने बहुत सारे वानरों को मार डाला। शतबली भी भूमि पर लोटने लगा। गदा का प्रहार खाकर हनुमान आकाश में उठ गया और वहाँ से पेड़-पत्थर बरसाने लगा। कुम्भकर्ण की गदा टूट गयी तो उसने उछल कर हनुमान को पकड़ लिया और उसके सीने पर वज्र सा एक मुक्का मारा। मुक्के की चोट से पवननन्दन छटपटा कर जमीन पर गिर पड़े। सारे बन्दर मैदान छोड़-छोड़ कर भागने लगे। कुम्भकर्ण के सम्मुख सभी के पैर उखड़ गये ॥ ६२ ॥

सुग्रीव द्वारा कुम्भकर्ण का नासा-कर्ण-छेदन

जब बड़े-बड़े बन्दरों को पकड़-पकड़ कर कुम्भकर्ण निगलने लगा तो समर-क्षेत्र में सुग्रीव स्वयं पहुँच गया। एक विशाल शाल-वृक्ष उखाड़ कर हाथ में लेकर वह कुम्भकर्ण के सम्मुख जाकर खड़ा हो गया और बोला, बड़े-बड़े बन्दरों को चुन-चुन कर तूने गिराया है, अब जरा मेरी चोट तो सँभाल। कुम्भकर्ण ने कहा, मैं ब्रह्मा का प्रपौत्र हूँ, तू शालवृक्ष मार तो जरा। पर्वत-समान

एड़िलेक शालवृक्ष पर्वत-प्रमाण ❋ कुम्भकर्ण-गाये ठेकि हैल खान-खान
छि छि बलि कुम्भकर्ण दिल टिट्कारी ❋ एइ मुखे खाबि बेटा किष्किन्ध्या नगरी
भाल छिल बालिराज, वीर मध्ये गणि ❋ कोन मुखे राखिबि ताहार राजधानी
दुइलक्ष राक्षसे ये जाठा-गाछ वय ❋ सेइ जाठा कुम्भकर्ण हाते तुलि लय
आशीकोटि मण लौह जाठार गठन ❋ दशहाजार हात जाठा दैर्घ्य निरूपण
कुम्भकर्ण एड़े जाठा दिया हुहुंकार ❋ स्वर्ग-मर्त्य-पाताले लागिल चमत्कार
देखिया सुग्रीव-वीर ना भावे मनेते ❋ सिंहनाद करि जाठा धरे वाम हाते
भांगिलेक जाठा, येन पड़िल झञ्झना ❋ त्रिभुवने यत लोक पासरे आपना
कुम्भकर्ण कोपेते पर्व्वते दिल टान ❋ एकटाने आनिल पर्व्वत एकखान
एड़िल पर्व्वतगोटा विपरीत-कोपे ❋ पड़िल सुग्रीव-राजा पर्व्वतेर चापे
घिरेछिल मेघ, येन उड़ाइल झड़े ❋ सुग्रीवे लइया वीर प्रवेशिल गड़े
लंकार भितरे शीघ्र जाय महाबली ❋ सुग्रीवेरे ल'ये दशानने दिते डालि
प्रथम वृहन्दे जाय क'रे ठेलाठेलि ❋ द्वितीय वृहन्दे, जाय पड़े हुलाहुलि
तृतीय वृहन्दे जाय परम हरिषे ❋ सुग्रीव राजारे देखि नारिगण हासे ६३
कुम्भकर्ण सुग्रीवेरे ल'ये जाय बेन्धे ❋ यतेक वानरगण माथे हात कान्दे
महावीर हनूमान कटकेर सार ❋ मने-मने भाविछे राजार प्रतिकार
कुम्भकर्णे संहारिब आजिकार रणे ❋ राजा उद्धारिले तवे प्रीति पाइ मने

शालवृक्ष कुम्भकर्ण के शरीर से टकराते ही खंड-खंड हो गया। कुम्भकर्ण ने सुग्रीव को धिक्कारा और कहा, इसी बूते पर तू किष्किन्धा-नगरी का भोग करेगा। बालिराजा को मैं वीर मानता हूँ, तू किस मुँह से उसकी राजधानी की रक्षा कर सकेगा। जिस लौह-दंड को दो लाख राक्षस ढोते हैं, अस्सी करोड़ मन वजन का और दश हज़ार हाथ लम्बा, वही लौह-दंड हाथ में लेकर कुम्भकर्ण ने हुंकार मारते हुए फेंका। सुग्रीव ने इसकी परवाह न करते हुए बाएँ हाथ से उस दंड को पकड़ा। लौहदंड झनझनाता हुआ टूट गया। कुम्भकर्ण ने गुस्से से एक पर्वत को उखाड़ कर सुग्रीव की ओर फेंका और सुग्रीव राजा उसके नीचे दब गया। सुग्रीव को लेकर कुम्भकर्ण दशानन को भेंट चढ़ाने गढ़ के भीतर चल पड़ा। प्रथम महल में प्रवेश करते ही धकमपेल शुरू हो गया, द्वितीय महल में हो-हल्ला मच गया, तृतीय महल में कुम्भकर्ण जब सहर्ष पहुँचा तो सुग्रीव राजा को देखकर नारियाँ हँसने लगीं ॥ ६३ ॥

कुम्भकर्ण सुग्रीव को बाँधकर ले चला तो सारे बन्दर सिर पर हाथ रख कर रोने लगे। महावीर हनुमान मन ही मन इसके प्रतिकार के बारे में सोचने लगा। आज के युद्ध में मैं कुम्भकर्ण का नाश करूँगा लेकिन उससे पूर्व यदि राजा सुग्रीव मुक्ति पा जाएँ तो मन प्रसन्न हो। इतना कहकर वीर जूझने को चल पड़ा तो जाम्बवान ने "लौट आओ, लौट आओ" कहकर पुकारा।

एतेक बलिया वीर जुझिवारे यान ❋ 'वाहड़-वाहड़' बलि डाके जाम्बवान
यतदिन जीवे राजा क्षोभ रबे मने ❋ भाल जाबे, मन्द रबे, कि काज ए रणे
सेवक हइते राजा पावे अव्याहति ❋ चिरकाल सुग्रीवेर घुषिबे अख्याति
राज-बुद्धि धरे राजा, बले विपरीत ❋ कुम्भकर्ण-हस्त हैते आसिबे निश्चित
जाम्बवान-वाक्ये वीर नाहि दिल हाना ❋ उलटिया रहे गिया आपनार थाना ६४
कुम्भकर्ण-कोले राजा पाइल संवित् ❋ चारिदिके लंकार देखिछे नृत्य-गीत
चारिदिके निशाचर, ना देखे वानर ❋ विचित्र-निर्म्माण देखे सुवर्णेर घर
महाबल सुग्रीव बुद्धिते बृहस्पति ❋ मने-मने चिन्तेन आपन-अव्याहति
कर्ण-टाने दु'हाते, कामड़े छिँड़े नाक ❋ भये कुम्भकर्ण डाके 'परित्राहि' डाक
दुइपार्श्व चिरे फेले दु'पायेर भरे ❋ पञ्च-अंगे कुम्भकर्णेर रक्त पड़े धारे
मर्म्मव्यथा पेये वीर छाड़े सुग्रीवेरे ❋ आछाड़िया फेलि दिल धरणी उपरे
दशने नासिका निल, कर्ण निल करे ❋ लाफ दिया वीर गिया उठिल प्राचीरे
पुनः लाफ दिलेक विक्रमे करि भर ❋ प्रवेश करिल गिया कटक-भितर
कटकेते पशिया सुग्रीव महाबली ❋ कुम्भकर्ण-नाक-कान रामे दिल डालि
सेइ नाक कानेर कि कहिब व्याख्यान ❋ पँचिशेर बन्द येन घर एकखान ६५

ऐसे रण से क्या लाभ जिसमें उत्तम तो चला जाय और अधम रह जाय। सेवक के प्रयास से राजा को मुक्ति मिली यह सदा के लिए सुग्रीव की बदनामी का कारण बना रहेगा। राजा राज-बुद्धि-सम्पन्न है और निश्चित रूप से वह कुम्भकर्ण के हाथों से मुक्त होकर चला आयगा। जाम्बवान के कहने पर वीर हनुमान ने आक्रमण नहीं किया और अपनी चौकी पर जाकर खड़ा हो गया ॥ ६४ ॥

कुम्भकर्ण की गोद में राजा होश में लौट आया। चारों ओर उसने लंका का नृत्यगीत देखा। चारों ओर निशाचर दीख रहे हैं—कोई भी वानर नहीं दिखाई पड़ रहा है। सुवर्ण निर्मित गृहों का विचित्र निर्माण-कार्य देखा। महाबली सुग्रीव बुद्धि में वृहस्पति के समान हैं। वे मन ही मन अपनी मुक्ति का उपाय सोचने लगे। दोनों हाथों से उन्होंने कुम्भकर्ण के दोनों कान खींच लिये और दाँतों से उसकी नाक काट ली। डर के मारे कुम्भकर्ण त्राहि-त्राहि चिल्लाने लगा। दोनों पैरों के भार से सुग्रीव ने कुम्भकर्ण के दोनों बगल चीर डाले और उसके सारे अंगों से खून की धारा बह निकली। असह्य पीड़ा से व्याकुल हो वीर कुम्भकर्ण ने सुग्रीव को छोड़ दिया और उसको जमीन पर पटक दिया। वीर सुग्रीव एक छलाँग में प्राचीर पर चढ़ गया, फिर दूसरी छलाँग में अपनी सेना के बीच आ गया। कटक में प्रवेश करने के बाद महाबली ने राम के सम्मुख कुम्भकर्ण के नाक और कान भेंट में चढ़ाये। उन नाक और कान का क्या बखान करूँ—मानों पच्चीस धन्नियों वाला एक-एक कमरा हो ॥ ६५ ॥

श्रीरामेर सहित कुम्भकर्णेर युद्ध ओ मृत्यु

नाक कान नाहि, कुम्भकर्ण पाय लाज * मने-मने भावे, आर जीवने कि काज
एत बल-बिक्रम सकल हैला मिछा * सुग्रीव-वानरा बेटा क'रे गेल बोंचा
नेउटिया रणे वीर आइल निमिषे * बोंचा नाक देखिया वानरगण हासे
ताहा देखि कुम्भकर्ण महाकोपे ज्वले * बड़-बड़ कपिगणे ध'रे ध'रे गिले
नासिका-कर्णेर पथ विषम-विस्तार * ताहा दिया कपिगण वेरय अपार
एके कुम्भकर्ण वीर अति भयंकर * कर्ण-नासा गेछे आरो ह'येछे दुष्कर
कोपदृष्टे कुम्भकर्ण जेइदिके चाय * बड़-बड़ वीर सब छुटिया पलाय
'बोंचा एलो' बलि छुटे सकल वानर * दाण्डाइल सबे गिया लक्ष्मण गोचर ६६
हाते धनु लक्ष्मण हइल आगुसार * ताहा देखि कुम्भकर्ण हासे एकबार
कुम्भकर्ण बले, बेटा, तोरे चाहे के * तोर भाइ रामा बेटा, तारे डेके दे
हासिया बलेन राम कमललोचन * एतदिने यम बुझि क'रेछे स्मरण
एइ आमि आइलाम तोर विद्यमान * यत शक्ति आछे बेटा, तत शक्ति हान
तोरे मेरे काटि रावणेर दशमुंड * विभीषण-उपरे धराब छत्र-दण्ड
श्रीरामेर कथा शुनि कुम्भकर्ण हासे * मने कि क'रेछ बेटा, फिरे जाबे देशे
एत बलि कुम्भकर्ण ह'ये क्रोधमति * रामेरे गिलिते जाय अति शीघ्रगति

श्रीराम के साथ कुम्भकर्ण का युद्ध और उसकी मृत्यु

नाक और कान के न होने से कुम्भकर्ण बड़ा लज्जित हुआ। मेरा इतना पराक्रम सब व्यर्थ हुआ—बन्दर सुग्रीव ने आकर मुझको नकटा बना दिया। तुरन्त पलट कर वह रणक्षेत्र में आया और बन्दर उसको नकटा देखकर हँसने लगे। यह देखकर कुम्भकर्ण क्रोध से जलने लगा और बड़े-बड़े कपियों को पकड़कर निगलने लगा। नाक और कान के रास्ते अत्यन्त लम्बे चौड़े थे सो बन्दर उसमें से निकलने लगे। यों ही कुम्भकर्ण देखने में भयंकर है, अब नाक-कान के जाने से वह और भी विकट लगने लगा है। कुम्भकर्ण जिस ओर भी अपनी क्रुद्ध दृष्टि डालता बड़े-बड़े कपि 'नकटा आया' कहकर भागने लगते। भागकर वे लक्ष्मण के पास पहुँचे ॥ ६६ ॥

हाथ में धनुष लेकर लक्ष्मण जो आगे बढ़ा तो देखकर कुम्भकर्ण हँस पड़ा, बोला, अरे तुझसे क्या करना है, अपने भाई राम को बुलवा दे। कमलनयन राम ने हँस कर कहा, शायद इतने दिनों में यम ने तुझको याद किया है। यह ले, मैं तेरे समक्ष आ गया, अब जितनी भी शक्ति तेरे पास है उसे अजमा ले। तुझको मारने के बाद रावण के दश मुंड काटने हैं और विभीषण को सिंहासन पर बिठाना है। श्रीराम की बात सुनकर कुम्भकर्ण हँसने लगा, बोला, क्या तुमने सोच लिया है कि लौटकर अपने देश जा सकोगे? इतना कहकर कुम्भकर्ण बड़े क्रोध से राम को निगलने के लिए बढ़ा। कुम्भकर्ण के

कुम्भकर्ण-भरे लंका करे टलमल ❋ स्वर्ग-मर्त्य काँपिल, काँपिल रसातल
आकाशे देउटि येन, दुइ चक्षु ज्वले ❋ मालसाट दिया वीर रघुनाथे बले
खर-दूषण नाहि आमि त्रिशिराकबन्ध ❋ मारीच राक्षस नाहि मायार प्रबन्ध
बालिराज नाहि आमि कोमल शरीर ❋ वज्रसम अंग, आमि कुम्भकर्ण वीर
सेइ सब वीर वध कैले येइ बाणे ❋ से सकल बाण एवे तुले राख तूणे
तोमार बाणेर मध्ये तीक्ष्ण ये सकल ❋ सेइसब बाण मार, बुझा थाक बल१६७
राम बले, कुम्भकर्ण, त्यज अहंकार ❋ मोर बाण सहे, हेन शक्ति आछे कार
तीक्ष्णबाण प्रहारिले हइबे प्रलय ❋ क्षुद्र एक बाणे तोरे दिब यमालय
श्रीरामेर कथा शुनि कुम्भकर्ण हासे ❋ मनेते वासना बुझि, जावे यम-वासे
हेर देख देह मोर पर्व्वत-प्रमाण ❋ देवता गन्धर्व केह नाहि धरे टान
कत अस्त्र जान बेटा, कत जान शिक्षा ❋ इन्द्र-यम जाने आमा, आर जाने यक्षा
जे बाणे मारिला बालि दुर्ज्जय वानरे ❋ से बाण मारेन राम कुम्भकर्णोपरे
यत दिन जीवे राजा, क्षोभ र वे मने ❋ भाल जावे, मन्दर वे, कि काजए रणे
रामेर ऐषिक वाण तारा सम छुटे ❋ कण्टक समान येन कुम्भकर्णे फुटे
छि छि बलि कुम्भकर्ण दिल टिट्कारी ❋ बल बुझि मोर भाइ आने तोर नारी

भार से लंका नगरी डोलने लगी, स्वर्ग, मर्त्य रसातल तीनों लोक काँप उठे। उसकी दोनों आँखें मानों आकाश में प्रदीप जैसी धधकने लगीं। ताल ठोकते हुए उसने कहा, मैं न तो खर-दूषण हूँ और न त्रिशिरा-कबन्ध हूँ। माया का पुतला मारीच रात्तस भी नहीं हूँ। कोमलांग बालि राजा भी नहीं हूँ। मैं वीर कुम्भकर्ण हूँ और मेरे अंग वज्र के समान कठोर हैं। उन वीरों को जिन वाणों से तुमने वध किया है उनको तरकस में रख दो। अपने वाणों में जो सर्वाधिक पैने वाण हों, उन्हीं का अब प्रयोग करो और अपनी शक्ति का परीत्तण कर लो ॥ १६७ ॥

राम ने कहा, कुम्भकर्ण, अपना घमंड छोड़, मेरे वाणों को सह ले इतनी शक्ति किसमें है ? तीत्त्ण वाण चला दूँ तो प्रलय हो जाय, इसलिए एक त्तुद्र वाण से ही तुम्हारे प्राण ले लूँगा। श्रीराम की बात सुनकर कुम्भकर्ण हँसकर कहने लगा, क्या यमराज के घर जाने की इच्छा है ? मेरे इस पर्वत सरीखे शरीर को देखो, कितने ही गन्धर्व देवता इससे हार मान चुके हैं। देखा जाय कि रण-विद्या में तुम कितने कुशल हो। मेरे बारे में भला तुम क्या जानोगे, वह तो इन्द्र, यम और यत्त जानते हैं। जिस वाण से राम ने दुर्जय कपि बालि का वध किया था, उसी वाण को कुम्भकर्ण पर चलाया। राम का ऐषिक वाण तारा के समान लपका, लेकिन कुम्भकर्ण के शरीर में वह काँटे के समान जा चुभा। कुम्भकर्ण ने छी-छी करते हुए राम को धिक्कारा। कहा, तुम्हीं कहते हो न कि मेरा भाई तुम्हारी नारी को ले आया है।

अदिहारम् (अध्याय) ४२

केळ्वि (श्रवणशीलता)

शॆल्वत्तुट् चॆल्वम् शॆविच्चॆल्वम्; अच्चॆल्वम्
शॆल्वत्तुळॆल्लाम् तलै ॥ १ ॥

श्रवण-पान करते, विद्वानों के कथनों पर देते कान।
सकल सम्पदाओं में उनका 'सुनना' है सम्पत्ति महान्॥ १॥

[गुणज्ञों और विद्वानों के कथन के श्रवण में अनुराग रखना और] सुनना महान् सम्पदा है। वह सब धनों में श्रेष्ठ धन है ॥ १ ॥

शॆविक्कुण विल्लाद पोऴ्दु शिऱिदु
वयिट्रुक्कुम् ईयप् पडुम् ॥ २ ॥

जब कानों की तृप्ति हेतु हमको दुर्लभ हो जाय अहार[1]।
तभी उदर को पूरित करने[2] के प्रति मन में करें विचार॥ २॥

जब कानों की तृप्ति के लिए आहार [अर्थात् गुणी-विद्वानों के अमृत-वचन] शेष न रह जायँ, तब उदर के लिए आहार की ओर ध्यान दिया जाय ॥ २ ॥

शॆवियुणविऩ् केळ्वि उडैयार् अविवुणविऩ्
आऩ्ऱारो डॊप्पर् निलत्तु ॥ ३ ॥

सुनते सीख, सदा श्रवणों में भरते रहें ज्ञान-विज्ञान।
हैं मानो नैवेद्य-तृप्त वे धरती पर देवता समान॥ ३॥

जिनके कान [दुर्लभ] ज्ञान और सद्वार्ता को सुन कर तृप्त हो चुके हैं, वह पृथ्वी पर उन देवताओं के सदृश हैं जिनको नैवेद्य समर्पित होता है ॥ ३ ॥

कट्रिल ऩायिऩुम् केट्क; अह्दॊरुवऱ्कु
ऒऱ्कत्तिऩ् ऊट्ऱाम् तुणै ॥ ४ ॥

विद्याहीन, किन्तु सद्वचनों के सुनने में प्रीति अपार।
यह 'सुनना' भी समय पड़े पर करता है संकट के पार॥ ४॥

---

१ भोजन (सुनने योग्य सामग्री) २ पेट भरने।

जिन्होंने विद्या नहीं प्राप्त की है, वे भी यदि विद्वानों के कथनों को सुनते और ग्रहण करते हैं, तो समय पड़ने पर वह श्रवण उनके लिए बड़ा सहारा साबित होता है ॥ ४ ॥

इऴुक्कल् उडैयुऴि ऊट्रुक्कोल् अट्रे
ऑऴुक्कम् उडैयार्वाय्च् चॊल् ॥ ५ ॥

जिस प्रकार फिसलन वाली धरती पर लकुटी[1] है आधार[2]।
देना कान सदा सत्पुरुषों के वचनों पर उसी प्रकार ॥ ५ ॥

सत्पुरुषों के वचनों को सुनना और ग्रहण करना, फिसलन वाली ज़मीन पर छड़ी के समान [जीवन में] सहारा है ॥ ५ ॥

ऍन्नैत्तानुम् नल्लवै केट्क; अन्नैत्तानुम्
आन्ऱ पॆरुमै तरुम् ॥ ६ ॥

अच्छी और बुद्धि की बातों को सुनना सीखना महान्।
अल्प ज्ञान भी हमको देता रहता है क्रमशः सम्मान ॥ ६ ॥

भली बातों का थोड़ा भी सुन लेना और उन पर ध्यान देना व्यक्ति को एक सीमा तक महान् बनाता है ॥ ६ ॥

पिऴैत्तुणर्न्दुम् पेदैमै शॊल्लार् इऴैत्तुणर्न्दु
ईण्डिय केळ्वि यवर् ॥ ७ ॥

सद्वचनों के श्रवण-मनन-धारण में जिनको प्रीति अपार।
उनके मुख से कभी भूल कर नहीं निकलते वचन असार[3] ॥ ७ ॥

जो व्यक्ति अच्छी बातों को सुनते और उन्हें भली प्रकार धारण करते रहते हैं, वे कभी भूल कर भी मूर्खों और अशिक्षितों जैसी बात मुँह से नहीं निकालते ॥ ७ ॥

केट्पिनुम् केळात् तहैयवे केळ्वियाल्
तोट्कप् पडाद शॆवि ॥ ८ ॥

शिक्षा और ज्ञानमय वाणी से वञ्चित[4] हैं जिनके कान।
सुनते हैं प्रत्यक्ष, किन्तु फिर भी वे मानव वधिर[5] समान ॥ ८ ॥

जिन कानों में शिक्षा और उपदेश प्रवेश नहीं कर सके, वे कान सुनते हुए भी बहरों के समान हैं ॥ ८ ॥

---

१ छड़ी, लाठी २ सहारा ३ व्यर्थ ४ रहित, खाली ५ बहरे।

नुणङ्गिय केळ्वियर् अल्लार् वणङ्गिय
वायिऩर् आदल् अरिदु ॥ ९ ॥

दिये न कान, ज्ञान की बातों के सुनने में सदा उदास।
उनके मुख से शिष्ट-भद्र वचनों का सम्भव कहाँ निकास ? ॥ ९ ॥

जिनके कानों ने ज्ञान की बातें नहीं ग्रहण की हैं, उनके मुख से शिष्ट और भद्र वाणी का निकलना कठिन है ॥ ९ ॥

शॆविियिऱ् शुवैयुणरा वायुणर्विऩ् माक्कळ्
अवियिऩुम् वाळिऩुम् ॲऩ् ? ॥ १० ॥

विविध स्वाद मुख से चखते हैं, किन्तु न श्रवणामृत का स्वाद।
ऐसे पुरुषों के जीने-मरने में कैसा हर्ष-विषाद[1] ? ॥ १० ॥

जिनके कानों ने श्रवणामृत का स्वाद नहीं चखा, और जिनका मुख [भाँति-भाँति के] स्वादों को ग्रहण करता रहता है, उन व्यक्तियों का जीवन व्यर्थ है। उनके जीने-मरने में कोई अन्तर नहीं ॥ १० ॥

अदिहारम् (अध्याय) ४३

अऱिवुडैमै (प्रज्ञा-बुद्धि)

अऱिवट्रम् काक्कुम् करुवि; शॆऱुवार्क्कुम्
उळ्ळऴिक्क लाहा अरण् ॥ १ ॥

अहा ! बुद्धि दृढ़-दुर्ग[2] ! प्रयत्नों को रिपुओं के करती व्यर्थ।
दुख-विनाश से पूर्ण सुरक्षा करने में है बुद्धि समर्थ ॥ १ ॥

दुःखों और विनाश से रक्षा करने के लिए बुद्धि अमोघ अस्त्र है। शत्रुओं को विफल करने के लिए बुद्धि दृढ़ दुर्ग के समान है ॥ १ ॥

शॆऩ्ऱ इडत्ताऱ् शॆलविडा तीदॊरीइ
नऩ्ऱिऩ्बाल् उय्प्प दऱिवु ॥ २ ॥

चञ्चल मन पर संयम रखती, भली बात पर सदा झुकाव।
बुरी बात से सदा बचाती—यही बुद्धि का सहज स्वभाव ॥ २ ॥

---

१ सुख-दुःख २ मज़बूत किला।

मन और इन्द्रियों को भटकने से नियंत्रित करने वाली और बुराइयों से बचा कर भलाइयों की ओर प्रवृत्त करने वाली बुद्धि ही श्रेष्ठ बुद्धि है ॥ २ ॥

ऍप्पॊरुळ् यार्यार्वाय्क् केट्पिनुम् अप्पॊरुळ्
मॅय्प्पॊरुळ् काण्ब दऱिवु ॥ ३ ॥

कहीं, किसी से, किसी भाँति के सुनकर वचन दीजिए ध्यान ।
सार तथ्य लेवें निकाल, बस श्रेष्ठ बुद्धि की यह पहचान ॥ ३ ॥

कहीं से, किसी से, और जो कुछ भी सुना जाय, [उसमें प्रवाहित न होकर] उस कथन में निहित तथ्य (वास्तविकता) को जान लेना ही बुद्धि का लक्षण है ॥ ३ ॥

ऍण्बॊरुळ वाहच् चॅलच्चॊल्लित् तान्पिऱर्वाय्
नुण्बॊरुळ् काण्ब दऱिवु ॥ ४ ॥

सरल सुबोध रीति से अपने कर सकते यदि व्यक्त[1] विचार ।
सफल बुद्धि, यदि कथन दूसरों के सुन, सही निकालें सार[2] ॥ ४ ॥

अपने विचारों को सुबोध सरल भाषा में प्रकट कर सकना, और दूसरे के विचारों के मर्म को ठीक समझ लेना—यही बुद्धिमत्ता है ॥ ४ ॥

उलहम् तऴीइय तोट्पम्; मलर्तलुम्
कूम्बलुम् इल्ल तऱिवु ॥ ५ ॥

बुद्धिमान् की बुद्धि-ज्योति से जगमग है 'प्रबुद्ध संसार'।
सुमनकली वह नहीं कि खिलकर मुरझाती है नित्य असार ॥ ५ ॥

बुद्धिमान व्यक्ति का सारा बौद्धिक जगत् आदर और उससे स्नेह करता है। [वह सारे बौद्धिक जगत् में ख्याति पाता है।] बुद्धि की तुलना उस कुसुम-कली से नहीं है जो खिल कर [विना प्रयोजन में आये] मुरझा जाया करती है ॥ ५ ॥

ऍव्व तुऱैव दुलहम् उलहत्तोडु
अव्व तुऱैव दऱिवु ॥ ६ ॥

जग के सदा बदलते रस में अपने रस का करो मिलान ।
बॅपरना[3] युगधर्म बुद्धि है, इसी चलन में है कल्यान ॥ ६ ॥

---

१ प्रकट कर सकते, दूसरे को समझा सकते २ मतलब निकाल लें ३ संसार में आचरण करना, व्यवहार करना ।

संसार की बदलती रहती परिस्थिति के अनुसार संसार से सम-रस होकर चलना और बैपरना—यही बुद्धिमानी है ॥ ६ ॥

अऱिवुडैयार् आव दऱिवार्; अऱिविलार्
अह्दऱि कल्ला दवर् ॥ ७ ॥

वही दूरदर्शी प्रबुद्ध जिनको भविष्य का है आभास[1]।
'कल की खबर न' ऐसे मतिमन्दों में कहाँ बुद्धि का वास ? ॥ ७ ॥

भविष्य में हवा का क्या रुख होने वाला है—यह पहचान लेने वाले दूरदर्शी ही बुद्धिमान् हैं। जो आने वाले समय की गति की गंध नहीं पाते वे बुद्धि से नितांत परे हैं ॥ ७ ॥

अञ्जुव तञ्जामै पेदैमै; अञ्जुवदु
अञ्जल् अऱिवार् तॊऴिल् ॥ ८ ॥

भय की बातों से बचते हैं, सावधान रहते मतिमान्।
दुःसाहस से, या प्रमादवश, भय में फँसते हैं नादान ॥ ८ ॥

भयावह वस्तुओं से भय खाना और उनसे सचेत रह कर बचाव का उपाय करना बुद्धिमानी है। जो भयानक हैं, उनसे भय न मान कर [असावधान रह कर] दुस्साहस करना बुद्धि से विपरीत है ॥ ८ ॥

ऍदिरदाक् काक्कुम् अऱिविऩार्क् किल्लै
अदिर वरुवदोर् नोय् ॥ ९ ॥

हैं भविष्य से जो सचेत, पहले से[2] करते सदा बचाव।
आकस्मिक विपदाओं में इन मतिमानों का नहीं फँसाव ॥ ९ ॥

भविष्य की आशंकाओं से सचेत और सावधान रहने वाले बुद्धिमानों को आकस्मिक विपत्तियों के धक्के नहीं सहने पड़ते ॥ ९ ॥

अऱिवुडैयार् ऍल्लाम् उडैयार्; अऱिविलार्
ऍऩ्ऩुडैय रेऩुम् इलर् ॥ १० ॥

सब कुछ उनको सुलभ जगत् में जिन्हें बुद्धि पर है अधिकार।
बुद्धिहीन के पास किन्तु 'जो कुछ' है, सब होता बेकार ॥ १० ॥

बुद्धि से युक्त जनों को धरती की सब निधियाँ सुलभ हो जाती हैं; बुद्धि से हीन जन सब कुछ अपने पास रहते हुए भी गवाँ बैठते हैं। [उनको उसका सुख और उपयोग नहीं मिल पाता।] ॥ १० ॥

१ झलक २ संकट आ पहुँचने से पहले ही।

अदिहारम् (अध्याय) ४४

कुट्रङ्गडिदल् (अवगुण-निवारण)

शॆरुक्कुम् शिऩमुम् शिरुमैयुम् इल्लार्
पॆरुक्कम् पॆरुमिद नीर्त्तु ॥ १ ॥

क्रोध, लोभ, मद[मोहादिक]से जन, जनपति जो रहे विहीन।
वही संयमी व्यक्ति शिखर पर उन्नति के होते आसीन ॥ १ ॥

अहंकार, क्रोध और लोभ[काम आदि] के दोषों से जो मुक्त हैं वे ही उन्नति के शिखर पर पहुँचते हैं ॥ १ ॥

इवऱलुम् माण्बिऱन्द माऩमुम् माणा
उवहैयुम् एदम् इऱैक्कु ॥ २ ॥

यदि जीवन विलास-मय उनको, लोभ-उग्रमद के वे रूप।
श्रेष्ठ जनों, नरपतियों में ये अवगुण सदा कलंक-स्वरूप ॥ २ ॥

लोभ, प्रबल मद और अधम विलास—ये तीन अवगुण राजाओं-राजपुरुषों को कलंकित कर देते हैं ॥ २ ॥

तिऩैत्तुणैयाम् कुट्रम् वरिऩुम् पऩैत्तुणैयाक्
कॊळ्वर् पऴिनाणु वार् ॥ ३ ॥

अपयश की शंका जिनको है, जिनको नहीं सहन अपमान।
तिल समान निज न्यून दोष[1] को भी गिनते हैं ताड़ समान ॥ ३ ॥

कलंक और अपयश से डरने वाले व्यक्ति तिल (अन्नकण) के बराबर दोष को भी ताड़ के समान बड़ा मानते [और उससे दूर भागते] हैं ॥ ३ ॥

कुट्रमे काक्क पॊरुळाहक् कुट्रमे
अट्रम् तरूउम् पहै ॥ ४ ॥

बचो सर्वदा, निज दोषों को समझो अपना शत्रु महान्।
रहना अवगुणहीन—यही गुण अनुपम ऋद्धि-सिद्धि की खान ॥ ४ ॥

निर्दोषता (अवगुण-हीनता) की ख़जाने के समान रक्षा करो [और कणमात्र दोष को भी कलंक-राशि समझ कर उससे बचो,] क्योंकि [सामान्य से सामान्य भी] दोष तुम्हारे परम शत्रु हैं ॥ ४ ॥

---

१ छोटे से दोष को भी।

वरुमुन्नर्क् कावादान् वाळ्क्कै ऎरिमुन्नर्
वैत्तूरु पोलक् कॆडुम् ॥ ५ ॥

रहते समय, न निज दोषों को जिस मानव ने लिया सँवार।
होता भस्म, अग्नि में पड़ कर जैसे सूखा खर-पतवार ॥ ५ ॥

अपने दोषों को जो व्यक्ति समय रहते दूर नहीं करता वह [एक दिन निश्चय ही] अपने को अग्नि-सर्मपित भूसा के समान नष्ट कर देगा ॥ ५ ॥

तन्कुट्रम् नीक्किप् पिऱर्कुट्रम् काण्किऱ्पिन्
ऎन्कुट्रम् आहुम् इऱैक्कु ? ॥ ६ ॥

पहले दोष निवारण[1] अपने, फिर देखना पराये दोष।
अवगुण का संसर्ग न उसको, ऐसा नृपति सदा निर्दोष ॥ ६ ॥

जो पहले अपने दोषों को जान कर उन्हें दूर करता और फिर दूसरों के छिद्रों को देखता [और उन्हें सचेत करता] है, उस शासक में फिर भला दोष कैसे टिक सकते हैं। [ऐसा शासक सदैव निष्कलंक और निरापद रहेगा।] ॥ ६ ॥

शॆयऱ्पाल शॆय्या तिवऱियान् शॆल्वम्
उयऱ्पाल तन्ऱिक् कॆडुम् ॥ ७ ॥

लोभी-सूम खर्च से बच कर, कर्तव्यों से रहा उदास[2]।
उसकी संचित जमा-जथा[3] का समझो निश्चय ह्रास[4] बिनास ॥ ७ ॥

लोभ और कृपणता में ग्रस्त जो व्यक्ति अपने कर्तव्यों पर खर्च नहीं करता, उसकी सम्पदा निश्चय ही एक दिन क्षीण और समाप्त हो जायगी ॥ ७ ॥

पट्रुळ्ळम् ऎन्नुम् इवऱन्मै ऎट्रुळ्ळुम्
ऎण्णप् पडुवदॊन् ऱन्ऱु ॥ ८ ॥

है अपराध कृपणता भारी, इससे बढ़ कर दोष न और।
सकल अवगुणों की तुलना में 'अतिशय लोभ' पाप-शिरमौर[5] ॥ ८ ॥

कृपण की धन-लोलुपता अत्यन्त निकृष्ट दोष है। दूसरे तमाम दोषों और अवगुणों से इसकी तुलना नहीं ॥ ८ ॥

---

१ दूर करना २ विमुख ३ धन-सम्पत्ति ४ घटती ५ पापों का सिरताज।

विियवर्क अॅन्ऱानुरुम् तन्नै; नयवर्क
नन्ऱि पयवा विनै ।। ९ ।।

बढ़-चढ़ कर बातों का करना, आत्म-प्रशंसा महा अनर्थ।
भला[1] न संभव जिन बातों से, ऐसी अभिलाषाएँ व्यर्थ ।। ९ ।।

आत्मप्रशंसा और शेखी से सदैव बचो। न कभी ऐसी व्यर्थ अभिलाषाएँ करो जिनसे कुछ भला नहीं होना ।। ९ ।।

कादल कादल् अऱियामै उय्क्किऱ्पिन्
एदिल एदिलार् नूल् ।। १० ।।

मनवाञ्छित सुख अपने विलसो, किन्तु न उनका करो प्रकाश।
गोपनीय[2] रहने पर, रिपु से[3] उनका संभव नहीं विनाश ।। १० ।।

यदि अपनी अभिलाषाओं का एकान्त में गोपनीयता के साथ उपभोग करो तो उन [उपभोगों] को ध्वस्त करने में तुम्हारे शत्रुओं से भय नहीं ।। १० ।।

अदिहारम् (अध्याय) ४५

पॅरियारैत् तुणैक्कोडल् (महान् व्यक्तियों से सीख)

अऱन् अऱिन्दु मूत्त अऱिवुडैयार् केण्मै
तिऱनऱिन्दु तेर्न्दु कॊळल् ।। १ ।।

धर्मवान् मतिमान् अनुभवी विज्ञजनों की नेक सलाह—
लेना सदा समादर करना—यही निरापद सुख की राह ।। १ ।।

सद्गुणों से युक्त परिपक्व बुद्धि वाले महान् व्यक्तियों की मंत्रणा का आदर करो और उनके सामीप्य का लाभ उठाओ ।। १ ।।

उट्ऱनोय् नीक्कि उऱाअमै मुऱ्काक्कुम्
पॅट्ऱियार्प् पेणिक् कॊळल् ।। २ ।।

दूर आज के दुख करते हैं, कल के दुख से करें सचेत।
ऐसे कुशलों की सहायता समुचित[4] सदा नृपति के हेत ।। २ ।।

---

१ अच्छाई २ लोगों की निगाहों से बचा होने पर ३ शत्रु से ४ उचित, कल्याणकारी।

मैंने सुना है कि तुम ला क्लास अटेण्ड करते हो (पढ़ते हो)। मैं किसी क़िस्म के तहसील इल्म को मना नहीं करता। बल्कि इल्में क़ानून का हासिल करना बहुत ज़रूरी है। जिस सल्तनत के हम ताबे हैं उसके क़ानून का जानना हम पर फ़र्ज़ है। मगर इतनी नसीहत अगर बूढ़े बाप की मानोगे तो तुम्हारे लिए बहुत मुफ़ीद होगा।

मेरी राय में इन पेशःवरों को रूहानी मसर्रत कभी नहीं हासिल होती। इस लिए दुनिया के झगड़ों से एक दम फ़ुर्सत नहीं मिलती। अगरचें अस्ल पेशए वकालत बुरा नहीं। मगर बड़ी एहतियात[१] का काम है। हमारे शहर में चन्द वकीलों ने जो एहतियात इस बाब में की है वह उनका हिस्सा हो गया। शायद तुमसे न निभ सकेगी। ग़ासिब[२] व ज़ालिम की हिमायत करना हर मज़हब में ना-जाएज़ है और मुझे ख़ौफ़ है कि इस पेशे में इसका ख़याल कमतर रहता है। इंजीनियरी और इससे बेहतर डाक्टरी है। अगर यह तुमसे हो सके तो करो, वर्ना मेरे पास चले आओ और मेरे साथ हल जोतो। यह बहुत ही उम्दः काम है। बड़े लुत्फ़ से ज़िन्दगी कटती है। इत्मीनान, फ़राग़त, सेहत सब कुछ इसी काम में हैं। (कण्ट्री-लाइफ़) देहात की ज़िन्दगी बसर करने का मज़ा अहलॅशहर क्या जानें। मैं ख़ुदा का शुक्र करता हूँ कि मुझे इसी दुनिया में ख़ुदा ने बहिश्त अता फ़र्माई है। अगर तुम्हें ख़ुदा तौफ़ीक़ दे तो तुम भी यही लाइफ़ इख़्तियार करो। नौकरी के ख़याल में न पड़ो। बडी-बड़ी जिम्मेदारियाँ अपने सर पर ले लेना आसान है, मगर उनका निबाह मुश्किल हो जाता है। मेरे जीतेजी तुम इन झगड़ों में न पड़ो, आओ चन्द रोज़ की ज़िन्दगी किसी नेक काम में सर्फ़ करें। याद रखो कि एक न एक दिन ऐसा आने वाला है जब उलूम मुल्की ज़बान में सिखाये जायँगे। अगर फ़ी ज़माना बाज़ उक़ला[३] ने इस अम्र से इख़्तिलाफ़ किया था कि हमारी ज़बान यानी उर्दू इल्मी नहीं हो सकती। लिहाज़ः तालीम उलूम अंग्रेजी ज़बान में होना चाहिए। यह इख़्तिलाफ़ महज़ मौजूदः ज़रूरतों के एतबार से था या उस मायूसी की वजह से जो उर्दू की कम-मायगी[४] पर नज़र करके पैदा हो सकती है। मेरे ख़याल में यह कोशिश किये बग़ैर मायूस हो जाना ठीक नहीं। "ईं फ़तवए हिम्मत बुवद् अरबाबॅ हुममरा"[५]।

मैंने तुम्हारी बे-इजाज़त तुम्हारी वेब्सटर डिक्शनरी को जिल्द से निकाल कर उसके अज्ज़ः अलाहिदः कर दिये और इण्टरलीव करके दो दो सौ सफ़्हों का एक जुज़ जुदा कर लिया है। जिस क़दर अल्फ़ाज और इस्तिलाहातॅ इल्मी अल्फ़ाज अंग्रेज़ी के मुक़ाबिले में मुझ को याद हैं, उनको लिखता जाता हूँ।

---

१ सावधानी २ लुटेरा ३ वकीलों ४ कमज़ोरी ५ यह पैग़ाम दोस्तों के लिए हिम्मत का हौसला बढ़ाता है।

वेब्स्टर डिक्शनरी के सफ़हात का शुमार १६८१ है। अगर ब हिसाबॅ औसत एक सफ़ा रोज़ लिखा जाय (जो कम अज़ कम है) और एक घंटा इस काम में सर्फ़ हो (जो ज़ियादः से ज़ियादः है) तो चार बरस सात महीने ग्यारह दिन में कुल डिक्शनरी हँसते-खेलते ख़त्म हो जायगी। एक घंटे रोज़ानः इस कारॅ-अहम के लिए सर्फ़ करना कुछ ऐसा बार नहीं है और अगर इसका शौक़ तुमको भी वैसा ही हो जैसा कि मुझे है और पाँच घंटा रोज़ हम तुम मिलके मेहनत कर सकें तो कुल काम ३३६ रोज़ में यानी ग्यारह महीने में तमाम हो सकता है।

इसमें शक नहीं कि बाज अल्फ़ाज़ॅ-अंग्रेज़ी के मुक़ाबिल मुश्किल से लफ़्ज़ मिलेंगे, मगर यह तुम जानते हो कि मुझे लफ़्ज़ों के गढ़ने में एक ख़ास मलकः है। जब तुम मेरे साथ काम करोगे तो अजब नहीं कि चन्द रोज़ में यह सिफ़्त तुम में भी पैदा हो जाय। शायद तुम कहो कि यह क्योंकर हो सकता है। उसकी दलील मुझसे सुनो। अगर तुम ग़ौर करोगे तो तुम पर वाज़ेह हो जायगा। दुनिया में जिस तरह हद से ज़ियादः हसीन आदमी कम होते हैं, उसी तरह हद से ज़ियादः बदसूरत भी कम होते हैं। यह जो एक मशहूर मसल औरतों की ज़बान-ज़द है जो वह औरतों के हुस्नॅ ज़ाहिरी की निस्बत कहा करती हैं। "मसलन फ़लाँ लड़की आदमी का बच्चा है।" यानी न ग़ैर मामूली हैसियत से हसीन है न बदसूरत। ज़ेहन और माद्दः की मुआविनत[1] का मसलः बिलकुल मुन्क्क़ेः हो चुका है। शायद इल्मॅ नफ़्स के पढ़ने के बाद तुमको इस मसलः में कोई शक न रहा होगा। तो इसी कुल्लिए को तुम ज़ेहनियात में भी मुन्तबिक़[2] कर सकते हो। हासिल कलाम का यह है कि जिस तरह वह लोग कमयाब हैं जो हद से ज़ियादः अक़ील हैं उसी तरह वह लोग भी शाज़ो-नादर हैं जो हद से ज़ियादः बेवक़ूफ़ हों। ईडियट के दिमाग़ की बनावट ही से उसका ईडियट होना ज़ाहिर हो जाता है। इससे चन्द और क़ज़ाया को वास्ता[3] गर्दान कर यह अम्र बख़ूबी साबित हो सकता है कि फ़ित्रत ने हर औसत दर्जे के इंसान को औसत दर्जे की क़ाबिलीयतें अता की हैं। मसलन लोग कहते हैं कि मौज़ूँ तबई[4] ख़ुदादाद है। इसमें कोई शक नहीं लेकिन मैं कहता हूँ कि इस ख़ुदादाद क़ाबिलीयत में कुल इंसान शरीक हैं। किसी में कम और किसी में ज़ियादः। इसके इमकान से मुझे इन्कार नहीं कि एक बहुत ही क़लील तादाद अज़रूए ख़िलक़त ग़ैर-मौज़ूँ-तबा हो। यक़ीन है कि तुम मेरी तक़रीर का मंशा समझ गए होगे। यह मसलः बहुत अहम और क़ाबिलॅ ग़ौर है। इसलिए मैं इस पर ज़ियादः तर तवज्जुः चाहता हूँ और यह भी बताए देता हूँ कि इस मसले को मैं क्यों अहम कहता हूँ।

---

१ परस्पर सहयोग २ धारण (चस्पा) कर सकते हो ३ इनसे व दूसरी बातों से ४ स्वाभाविक रुचि।

इस मसले में बहुत बड़ी ग़लत-फ़हमी वाक़ै हुई है। न सिर्फ़ अवाम बल्कि ख़वास में भी आम ख़याल यह है कि अदमें क़ाबिलीयत की तरफ़ तादाद ज़ियाद: है और वजूदें क़ाबिलीयत की तरफ़ कम। मगर इस्तिदलाल[1] से इसके बर-अक्स[2] साबित होता है। वजूद क़ाबिलीयत की तरफ़ शुमार बहुत ज़ियाद: है बनिस्बत अदमें-क़ाबिलीयत के।

अजबतर यह है कि जुज़ई मिसाल यह है कि मेरे नज़दीक तक़रीबन तमाम इंसान मौज़ूँतबा हैं और बहुत ही कम ग़ैरमौज़ूँतबा। और ख़ल्कें-इलाही से यह अम्र मुस्तब्अद[3] मालूम होता है कि उसकी इनायत ख़ास हो, आम न हो।

अजबतर यह है कि न सिर्फ़ अफ़राद इन्सान को बल्कि ख़ास मुक़ामात को भी अक्सर लोग एक ख़ास सिफ़त के साथ मख़्सूस कर देते हैं। मसलन इस क़िस्म के जुमले तुमने अक्सर सुने—फ़लाँ मक़ाम के लोग क़ुदरती मौज़ूँ-तबा हैं। फ़लाँ ख़ित्त: मरदुमख़ेज़ है, वग़ैर:, वग़ैर:। इस अम्र के असली सबब पर जब तुम ग़ौर करोगे तो उसको मेरी राय के मुवय्यिद[4] पाओगे।

मसलन कहा जाता है कि लखनऊ के रहने वाले मौज़ूँतबा होते हैं। मैं पूछता हूँ कि सिर्फ़ मुसलमान या हिन्दू-मुसलमानों में से सिर्फ़ आला तब्क़े के लोग या अदना के भी। और फिर यह पूँछना है कि मज़ाफ़ातें लखनऊ में जो देहात हैं वहाँ के लोग भी या सिर्फ़ हदूदें म्यूनिसिपल्टी के अन्दर जो लोग रहते हैं। तफ़सीलात मज़्कूर: पर नज़र करने से तुम्हें मालूम हो जायगा कि असली सबब सोसाइटी है न तबीअत। लखनऊ की सी सोसाइटी में इस क़ाबिलीयत को ज़ाहिर करने के अस्बाब पैदा हो गए। इसलिए वहाँ हज़ारहा मौज़ूँ-तबा निकल आए। जिस जगह इस क़िस्म के अस्बाब फ़राहम हो जायँगे, वहाँ हज़ारों मौज़ूँ-तबा[5] निकल आयेंगे।

जिन लोगों ने सिर्फ़ मन्तिक़ें क़यासी पढ़ी है, वह इस इस्तिदलाल[6] को शायद इक़्नाई कहें। लेकिन तुम माशा अल्लाह मन्तिक़ें इस्तिक़राई के दर्स में शरीक हो चुके हो और उलूमें तजरबी के पढ़ने से तुमको मवादें इस्तिदलाल के फ़राहम करने और तर्बियत देने का सलीक़ा हासिल हो गया है। लिहाज़ा तुम्हारे लिए यह इस्तिदलाल क़तई है। अब इस मसले की अहम्मीयत का बाएस सुनो। अक्सर होनहार तालिबें इल्म इस ग़लतफ़हमी में पड़कर इक्तिसाब[7] और तक्मील[8] से बाज़ रहते हैं। यह क़ायद: है कि हर इल्म व फ़न की इब्तिदाई तहसील में अक्सर दिक़्क़तें वाक़ै हुआ करती हैं। इसका सबब नुक़्सें तरीक़ए तालीम है। इसलिए अक्सर तालीम बसाएत और मुफ़र्रदात से शुरू होती है और तुमको कैमिस्ट्री के पढ़ने

---

१ तर्क, प्रमाण　२ विपरीत　३ दूर　४ अनुसार, पुष्टि में　५ स्वाभाविक अभिरुचि, प्रतिभा।　६ प्रमाण, तर्क　७ (विद्या) प्राप्ति　८ पूर्ति।

से मालूम हो गया होगा कि बसाएत बाद तहरीर और तह्लील के हासिल होते हैं। चाहिए था कि तालीम में तहरीर और तह्लील के अमल से इब्तिदा करते तो कोई मुश्किल न पड़ती। इब्तिदा की गई है बिसात से और उनसे तरकीब देकर मुरक्कॅबात पैदा किये जाते हैं। बसाएत की अजनबीयत ऊपर के बयान से वाज़ेः है। इनके अफ़हाम व तफ़हीम में दिक़्क़त का वाक़िआ होना कोई तअज्जुब की बात नहीं हैं। मुझे यह मुश्किल तुम्हारे छोटे भाई सादिक़ को ज्योमेट्रियः पढ़ाने से मालूम हुई। नुक़्तएख़त सतह जिस्म के हुदूद एक हफ़्ते तक समझाया गया। मगर उसकी समझ में न आए। आख़िर मैंने तरीक़ए तालीम को बदल कर जिस्मॅ तब्अ़ी से इब्तिदा की। फ़ौरन समझ गया और बहुत ही कम मुद्दत में अश्कालॅ हिन्दसः समझने लगा। इस क़िस्म की दिक़्क़तों के वाक़ै होने से अक्सर तुलबा बेदिल होकर यह समझ लिया करते हैं, और आम ख़याल इसी ख़याल को पुख़्तः कर देता है कि मुझमें इसको समझने की ख़ुदादाद क़ाबिलीयत नहीं। कोशिश बेसूद है। यह मुश्किलें मेरे लिए सेल्फ़ स्टडी की बरकतों ने हल कर दीं। अब मुश्किल से मुश्किल मसाएल को मैं आसान समझने लगा हूँ। यह ख़त बहुत तूलानी हो गया। एक मजे की बात लिखना अभी बाक़ी है। वह यह कि मेरे दोस्त और तुम्हारे बुज़ुर्ग मिर्ज़ा रुसवा साहब ने मेरी सवानॅउम्री लिखकर तमाम कर ली। अब उनका ख़याल है कि उसके साथ ही मेरे ख़ुतूत जो तुम्हारे नाम और दोस्तों को वक़्तन फ़वक़्तन लिखे गए हैं जमा किये जायँ। लिहाज़ा बादॅ मुलाहिज़ः हाज़ा के जिस क़द्र तुम्हारे पास पड़े-पड़ाए हों भेज दो और यह ख़त भी वापस कर देना ताकि सवानॅ उम्री के साथ शाया कर दिया जाय। मिर्ज़ा रुसवा के तर्ज़ॅ तह्रीर से तुम वाक़िफ़ हो। उन्होंने मेरी ज़िन्दगी के आम वाक़िआत को जो हर शख़्स पर हस्बॅ इक़्तिज़ाएॅ[1] वक़्त और ज़ुरूरियात के वाक़ै हुआ करते हैं, एक नावेल बना दिया है। मगर इतनी इनायत की है कि अशआर नहीं ठूँसे जिसका मैं ममनून हूँ। वऽद्दुआ।

राक़िम-आबिद

मिर्ज़ा साहब, अस्सलामु अला मनित्तबअल् हुदा। एक अम्र दीनी ने मुझको इस ख़त के लिखने पर मजबूर किया। वह यह है कि मैंने सुना है कि आप मुफ़लिसी को गुनाह समझते हैं। हैफ़ की बात है कि इंसान तक़दीर से मुफ़लिस हो जाय तो उसमें उसका क्या क़ुसूर है। मगर हाँ सच है आप तक़दीर के क़ायल न होंगे क्योंकि नेचरियों का मस्लक यही है। तक़्सीर माफ़ हो। एक ज़माने में आप ख़ुद नादार थे। बल्देव मिस्तरी के लड़के के पढ़ाने पर नौकरी करने का ज़माना शायद इस जाहों सरवत के अहद में आप भूल गये। जनाब हर हालत में ख़ुदा से डरना बहुत ज़रूरी अम्र है। तअय्युशॅ[2] चन्द रोजः में पड़कर ख़ुदा को भूल जाना कुफ़रानॅ निअ़मत[3]

---

१ समयानुसार २ ऐशइशरत ३ ईश्वर की देन से कृतघ्न।

कहलाता है और उस शख़्स को जो कुफ़रानॅ निअ्मत करे काफ़िर कहते हैं। आप अंगरेज़ी सरकार से तो तवस्सुल (सम्पर्क) रखते हैं, इसलिए मैं आप से डरता हूँ। फ़लिहाज़ा[1] मैंने अपना नाम ख़त में नहीं लिखा। इब्तिदाई ज़माने में आपके अक़ाएद वहुत दुरुस्त थे और आप रोज़ः व नमाज़ के पाबन्द थे। अब सुना गया है कि आप बिल्कुल नेचरी हो गए और रोज़ः व नमाज़ सबको आपने सलाम कहा। एक और अम्र सुनके मुझे सख्त अफ़सोस हुआ। वह यह कि आप फ़ुक़रा[2] व मसाकीन[3] की इआनत[4] को बुरा समझते हैं। यहाँ तक कि फ़ुक़रा को पैसा या चुटकी आटा देना आपके नज़दीक गुनाहॅ अज़ीम है। और जो लोग मस्जिद बनाने या हज्जॅ बैतुल्लाह या ज़ियारत के नाम से कुछ माँगने आते हैं, उन पर आप दरवाज़ा सख़ावत का बन्द कर देते हैं और कुफ़्र और बे-दीनी के कामों में आपने हज़ारहा रुपया बतौर चन्दे के दिया। चुनांचे एक नेचरी को आपने विलायत के सफ़र के लिए पाँच सौ रुपिया बतौर तोशे के दिये। जो किताबें कुफ़्रॉ-ज़लालत की आप लिख रहे हैं उनके छापने और शायः करने में हज़ारों रुपये के सर्फ़ का बार अपने ज़िम्मे ले लिया। आपको मालूम है कि क़ारून पर एक ज़कात के न देने से क्या अज़ाब नाज़िल हुआ कि वह ज़मीन में धँस गया और ता क़यामॅ क़ियामत धँसता चला जायगा और यह ख़ज़ानः उसके सर पर बार है।

जुज़ी नेस्त कि दौलत की ज़ियादती से आप में ग़ुरूर समा गया। ग़ुरूर की बुराइयाँ मिन जमीअुल वजूह[5] साबित हैं। क्या आपको शैख़ अलैर्रह्मः का यह शेर याद नहीं रहा—

तकब्बुर अज़ाज़ील रा ख़्वार कर्द,
बज़िन्दानॅ लानत गिरफ़्तार कर्द[6]

अर्राक़िम अब्दुल्लाह

मिर्ज़ा आबिदहुसैन के, इस गुमनाम ख़त का जवाब जो मय उस ख़त के अख़बार में छपवा दिया था, जवाब की नक़्ल यह है:—

जनाब अब्दुल्लाह साहब का ख़त मैंने पढ़ा। उनकी हमीयतॅ दीनी[7] से मेरा दिल बहुत ख़ुश होता अगर वह ख़ुलूस[8] के साथ होती और जो कलिमात ग़ैज़ॉ ग़ज़ब[9] उनके क़लम से मेरी शान में निकले उसको मैं मुक्तज़ाए जोशॅ दीनी समझता, मगर ऐसा नहीं है। क़ब्ल इसके कि उन इल्ज़ामात का जवाब दूँ जो कातिब ने मेरी निस्बत आइद किये हैं, मैं उसे नेक नसीहत करता हूँ, जिस पर मुझे उम्मीद है कि वह आइन्दः ज़रूर अमल करेगा। बन्दए ख़ुदा के नाम से ख़ुतूत लिखना ख़ुसूसन उस हालत में जब कि इबारत ख़त की मुतज़म्मिन हो[10] किसी जुर्म क़ानूनी पर, एक अम्र

---

१ बस इस कारण २ फ़क़ीरों ३ गरीबों ४ मदद ५ इन सब कारणों से ६ शैतान के घमण्ड करने पर उसको हमेशा के लिए ज़लील कर दिया। ७ धर्म पर स्वाभिमान ८ सच्चाई ९ कोप-प्रकोप १० संबन्धित हो।

ख़तरनाक है। क्योंकि ख़ुफ़िय: पुलिस को जो तनख़्वाह सरकार से मिलती है वह फ़ुज़ूल नहीं होती। अगरचें मैंने ख़ुफ़िय: पुलीस से इआनत[1] नहीं ली, लेकिन कातिब को माख़ूज़ करके[2] सज़ा दिला सकता हूँ। कातिब को इस अम्र के यक़ीन दिलाने के लिए कि मैं अपने इस दावे में सादिक़ हूँ उसको ऐसा पता बता देता हूँ जिससे वह समझ जायगा कि मैं उसको ख़ूब जानता हूँ। हुसैन आबाद, मशकगंज फ़ैज़ आबाद। मैं उसको जानता हूँ या नहीं? अब रहा यह अम्र कि वह मुजरिम है या नहीं। इस पर उसका गुनहगार दिल ख़ुद शहादत देगा। लेकिन बफ़:वाएँ अिन्नमा यन्तक़मुज़्ज़अीफ़ (कमज़ोर से बदला लेना शहज़ोर के ख़िलाफ़ॅ शान है) उससे इन्तक़ाम[3] लेना कसरॅ शान समझता हूँ।

उसकी बे-तहज़ीबी पर मुझे अफ़सोस हुआ और इसकी वजह वही मुफ़लिसी है जिसे मैं गुनाह समझता हूँ। अब इल्ज़ामात का जवाब देता हूँ। मैं मुफ़लिसी को गुनाह नहीं कहता। मगर ख़ुद इख़्तियारी मुफ़लिसी[4] को गुनाह समझता हूँ। ख़ुद इख़्तियारी मुफ़्लिसी का सबब अस्राफ़[5] है और इसी लफ़्ज़ के मफ़्हूम[6] को वुसअत[7] देने से और अस्बाब[8] मिल जाते हैं, जिनके जुदा-जुदा नाम हैं; मसलन दूसरे लफ़्ज़ों में इस अस्राफ़ को हम ख़र्च की ज़ियादती और बुख़्ल[9] की कमी भी कह सकते हैं। और उसके अस्बाब काहिली और तनआसानी[10] हैं। अल् आक़िलॉ तक्फ़ीहुल् इशार:[11]।

अक़ाएद के बाब में उसको कुछ लिखना मैं फ़र्ज़ नहीं समझता। इक़रारॅ शहादतैन के बाद किसी को यह हक़ नहीं हासिल हो सकता कि शख़्स मुक़िर[12] के इस्लाम से इन्कार करे और जो इस पर भी मुन्किर हो तो उस मुन्किर पर किसी अम्र के सुबूत के लिए मोजिज़:[13] भी काफ़ी नहीं है। बिहम्दिल्लाह कि मेरे औज़ाअ् व इख़्लाक़ ने मुझ को सिक़ात की[14] नज़रों में वह इज़्ज़त दे रखी है जिसे किसी शख़्स मुन्किर का झूठी क़स्म खाना भी मश्कूक नहीं कर सकता।

बेशक मैंने एक मुतकल्लिम, फ़क़ीर, सक़्क़:, नौजवान फाज़िल को, जिसने अंगरेज़ी और फ्रेंच इस ग़रज़ से हासिल की थी कि मग़रबी मुल्कों में जाकर इस्लामी और ईमानी वाज़ कहे और वहाँ के लोगों को दावतॅ इस्लाम दे या कम अज़् कम उन लोगों के दिलों में इस्लाम और अह्ले इस्लाम की मुहब्बत पैदा करने की कोशिश करे, बतौर हदिया मुतहक़्क़िक़र पाँच सौ रुपिया अपना मज़हबी फ़र्ज़ समझकर नज़र किये थे। ऐसे शख़्स को जिसने अपनी तमाम उम्मीदों को ख़ाक में मिलाकर तमाम ज़िन्दगी कारॅख़ैर के लिए वक़्फ़ कर दी, कातिब नेचरी और बदमज़हब कहता है। और जो किताबें मैं लिखकर शाया करता हूँ, हाशा[15] कि उनमें कुफ़्रो-ज़िलालत हो, बल्कि वह मग़रबी उलूम की

---

१ मदद　२ पकड़वाकर　३ बदला　४ अपने कर्मों कंगाली　५ ज़रूरत से ज़ियाद: ख़र्च　६ आशय　७ विस्तार　८ कारण　९ कंजूसी　१० आरामतलबी का निकम्मापन　११ बुद्धिमान के लिए इशारा काफ़ी है　१२ इक़रार करने वाले　१३ चमत्कार　१४ ज़िम्मेदार लोगों की　१५ शायद ही।

किताबें जिनकी इस वक़्त निहायत ज़रूरत है और हज़ारों बल्कि लाखों बन्दगानें ख़ुदा की भलाई उसमें मुतसव्वुर है, क़ौम और मुल्क की मुफ़्लिसी उसके अदमें इल्म पर मुनहसिर है, मैं ख़ुदा का शुक्र करता हूँ कि मुझे ख़ुदा ने उसके तर्जुमः करने और शाया करने की तौफ़ीक़ मरहमत की। मस्जिद बनवाने या हज्जो-ज़ियारत के नाम से भीक माँगने वालों को मैं अच्छी तरह पहचान लेता हूँ और अला हाज़ल्क़यास उन लोगों को भी जो मुल्क में तअस्सुब फैलाने या सिर्फ़ अपना शिकमपुर करने[1] के लिए लोगों को फ़रेब देकर चन्दे जमा किया करते हैं।

बल्देव के लड़के को पढ़ाने का तान[2] कातिब की सख़ाफ़तें अक़्ल[3] पर दलील है। किसी क़िस्म की नौकरी और मज़दूरी ऐब नहीं। बाज़ उलमाए मिल्लत ने जंगलों से लकड़ियाँ काटकर बाज़ार में फ़रोख़्त करने को हक़ीर न समझा। ख़ुद बाबें मदीनतुल्इल्म[4] हज़रत अली मुर्तज़ा यहूदियों के खेतों में पानी देने को ज़लील न तसव्वुर फ़र्माते थे। अफ़सोस कातिब पेशवायानें दीन के इख़्लाक़ और अक़्वाल[5] से बिल्कुल चश्मपोशी करता है।

मैं फ़ख्र के साथ कहता हूँ कि माधो (पिसर बल्देव) के पढ़ाने पर पाँच रुपये का नौकर था और मैंने हुलास लोहार से लोहारी का काम सीखा और उन कामों से बरसों अपने और अपने अहलो अयाल के लिए मायः ताज[6] मोहय्या किया। मगर कभी मैंने अपने कारें मन्सबी के करने में सुस्ती और काहिली नहीं की। माधो ने मेरी तालीम से बहुत फ़ायदा उठाया। वह इस वक़्त आला दर्जे का मेकानिक है और उसको रेलवे में पाँच सौ रुपया माहवार की नौकरी मिलती थी मगर उसने न की। मेरे कारख़ाने हद्दादी में, जिसको मैंने सिर्फ़ कलों के नमूने बनाकर मुल्क में शाया करने के लिए क़ायम किया है, ख़ुशी से मुहतमिम[7] है और इस कारें ख़ैर में मेरा शरीक है। मैं उसे मिस्ल अपने फ़रज़न्द के समझता हूँ और वह मुझको उसी तरह अपना बुज़ुर्ग और मुरब्बी ख़याल करता है। मुझे फ़ख्र है कि ख़ुदा के फ़ज़्ल से मेरी तालीम बेकार नहीं हुई।

अर्ज़ाक़िम–आबिद लोहार

ग़रीबपरवर सलामत

हक़ीर अर्ज़

फ़िदवी क़ौमें शरीफ़ से है। फ़िदवी के वालिद सरकार अंगरेज़ी में डिप्टी कलेक्टर थे और फ़िदवी के नाना अहदें शाही में रिसालेदार थे और फ़िदवी की नानी नवाब सरवतमहल की मुँहबोली बहन थीं। मगर बिल्फ़ेल ब सबब गर्दिश फ़लकें कज रफ़्तार के नानेंशबीनः को मुहताज[8] है। आपकी दरियादिली और सख़ावत का

---

१ पेट भरने २ कटाक्ष ३ ओछी बुद्धि ४ विद्या के नगर के प्रमुख द्वार ५ शिष्टाचार और कथनों ६ जरूरतों ७ मैनेजर ८ सुबह शाम रोटी को मुहताज है।

शुहरा दूर से सुन के आया है। उम्मीद है कि एक लुक़्मः नान को पहुँचकर ता उम्र दुआएँ दौलत में मसरूफ़ रहे। 'शाहाँ चॅ अजबगर बॅ नवाज़न्द गदारा।'

इलाही आफ़ताबॅ दौलतॅ इक़बाल ता अबदुल् आबाद ताबाँ व दुरख़्शाँ बाद।

अर्ज़ी
फ़िदवी सर्फ़राज़हुसैन
बक़लम ख़ुद

इबारत ज़हरी अर्ज़ी हाज़ा

जलीलुशान रफ़ीउलमकान मिर्ज़ा आबिदहुसैन साहब दाम इक़्बालकुम्। बाद एहदाए हदियए सलाम कि बेहतरीन तोहफ़ए इस्लाम अस्त व इस्तिख़्यारॅ मिज़ाजॅ व हाज रियासतॅ इस्राज बाएसॅ तहरीरॅ हाज़ा यह है कि जनाब मीर सर्फ़राजहुसैन साहब की शराफ़तॅ ख़ान्दानी व नीज़ लियाक़तॅ ज़ाती से कमा हक़्क़हू वाक़िफ़ हूँ। अगर आँ जनाब की मसाइए जमीलः से कोई ओहदाए माक़ूल उनको सरकारॅ अंगरेज़ी में मिल जायगा तो यह मुख़लिसॅ क़दीम निहायत ही ममनून होगा। अद्दाइए इलल् ख़ैर अबुल् ख़ैर, अबुल् ख़ैरात।

सैयद मुकम्मिलुद्दीनु अल्मुलक़ब
ब तकमीलतुल् उलमा

जनाब मौलाना साहब, तस्लीम। अफ़सोस है कि सरकार अंगरेज़ी से कोई मद्दॅ ख़ैरात मेरे हवाले नहीं है, अगर होती भी तो उसमें से मैं साएल को एक हब्बा न देता। इसलिए कि ऐसा शख़्स जो मेहनत करने की क़ूवत रखता हो और शराफ़तॅ ख़ान्दानी जताकर भीक माँगे उसकी इआनत करना क़ौम को भिखमंगा बनाना है। साएल शायद कुछ ख़्वान्दः है, अगर वह मेहनत करने पर आमादः हो जाए तो मैं उसको दस मज़दूरों की जमाअतदारी पाँच आना रोज़ानः दे सकता हूँ। इससे ज़ियादः मैं और कुछ नहीं कर सकता। मुआफ़ फ़रमाइए। साएल ने अपनी अर्ज़ में कलिमात गुस्ताख़ी मेरी निस्बत में लिखे हैं। मसलन शाहाँ चॅ अजब गर...अलख़ इसको मैं उसकी कम इल्मी पर महमूल करता हूँ मगर हैरान हूँ कि जनाब के मुबालिग़ातॅ सरीह और मकाबिरातॅ बय्यन को किस हद तक मैं शुमार करूँ। ख़ादिमुल् उलमा—आबिद

आली जनाब मुअल्लल् अल्क़ाब क़द्रदान हर इल्मो-हुनर फ़ैज़ गुस्तर मिर्ज़ा आबिदहुसैन साहब दामल्ताफ़हू, बाद तस्लीम बसद तक्रीम मारूज़ आँ कि मुद्दतॅ मदीद व अर्सए बईद मुन्क़ज़ी हुआ कि आपकी ख़ैरोआफ़ियत से इस मुख़्लिस क़दीम को इत्तला नहीं हुई। वाक़ई आप अपने दोस्तानॅ क़दीम को बिलकुल ही भूल गए।

'तुम हमें भूल गए हो साहब, हम तुम्हें याद किया करते हैं।'

मुद्दत हुई कि एक पर्चए क़िर्तास से याद शाद न फ़र्माया। दरीं दिला बुलबुलें बोस्तानॅ फ़साहत व क़ुमरिए सरोसितानॅ बलाग़त सादी दौरान व ख़ाक़ानी आवान नवाब अहमदहुसैन ख़ाँ सल्लमहू अल्-मुतख़ल्लिस ब साहिर ने एक क़सीदए बहारियः ज़ू मतलअईन आपकी मद्ह् में तहरीर किया है। अगर्चे आपके फ़ज़ाएलॉ मनाक़िब और मनासिबो-मरातिब बेरून अज़दायरए नज़्मो-बयाँ हैं मगर जो उमूर अयाँ हैं, उनमें से बाज़ के ज़िक्र

असु हसती रथ असवारी झूठा डंफु झूठु पासारी ।
जिनि दीए तिसु बुझै न बिगाना नामु विसारि नानक पछुताना ॥५॥

जब दुनिया से जायेगा धन दौलत साथ न जायेगी
जिससे लिपटा फिरता है मन मूरख काम न आयेगी
कुनबा है या बीवी है या बेटा है या साथी है
क्यों बनता है मालिक सब का कोई न तेरा नाती है
राज भी हो और रंग भी हो धन दौलत का पुश्तारा[1] हो
ऐश जब इतने मिलते हों कब दुनिया से छुटकारा हो
हाथी है या घोड़ा है रथ गाड़ी शुतुर[2] सवारी है
झूठा ढोंग रचाया है यह झूठ नुमायश सारी है
जो मूरख उस बख़्शिश वाले दाता को बिसरायेगा
भूल के उसके नाम को 'नानक' आख़िर को पछतायेगा ॥५॥

गुर की मति तूं लेहि इआने भगति बिना बहु डूबे सिआने ।
हरि की भगति करहु मन मीत निरमल होइ तुमारो चीत ।
चरन कमल राखहु मन माहि जनम जनम के किलबिख जाहि ।
आपि जपहु अवरा नामु जपावहु सुनत कहत रहत गति पावहु ।
सारभूत सति हरि को नाउ सहजि सुभाइ नानक गुन गाउ ॥६॥

सुन नादान नसीहत गुरु की यों तुझ से फ़रमाते हैं
दाना भी जब छोड़ें भक्ती सौ सौ ग़ोते खाते हैं
यारों रब की भक्ति करो भक्ती ही से फल पाओगे
साफ़ तुम्हारा सीना[3] होगा मन को पाक बनाओगे
पाक कमल से चरनों का जब मन में प्रेम बसाओगे
पिछले सारे जनमों के तुम पाप मिटाते जाओगे
नाम की सिमरन आप करो और औरों को भी नाम जपाव
नाम को सुनकर नाम सुनाकर नाम पर रह कर मुक्ती पाव
नाम ही असली सच्ची शै[4] है नाम यह लेते जाओ तुम
मन के इत्मीनान[5] से 'नानक' मालिक के गुन गाओ तुम ॥६॥

गुन गावत तेरी उतरसि मैलु बिनसि जाइ हउमै बिखु फैलु ।
होहि अचिंतु बसै सुख नालि सासि ग्रासि हरिनामु समालि ।

---

१ ढेर,बोझ २ ऊँट ३ हृदय ४ पदार्थ ५ स्थिरता ।

छाडि सिआनप सगली मना साध संगि पावहि सचु धना।
हरि पूंजी संचि करहु बिउहारु ईहा सुखु दरगह जैकारु।
सरब निरंतरि एको देखु कहु नानक जाकै मसतकि लेखु ॥७॥

ग़ुन गाने से तेरे मन का मैल सभी छुट जायेगा
ज़हर ग़रूर तकब्बुर[1] का जो फैला है मिट जायेगा
मन से चिन्ता दूर रहे सुख पायेगा सुख पायेगा
हर दम नाम प्रभू का ले दुख जायेगा दुख जायेगा
छोड़ दे ऐ दिल सब चतुराई चतुराई कुछ काम न आये
साधू की संगत मिल जाये तो सच्ची सच्ची दौलत पाये
सच्चे रब को कर सरमाया[2] फिर सच्चा व्यौहार भी हो
दुनिया में सुख हासिल हो दरगाह[3] में जै जैकार भी हो
एक का जलवा[4] देखे हरसू[5] सब में रब को पाये वह
भाग हों 'नानक' माथे पर फिर ख़ुशक़िस्मत कहलाये वह ॥७॥

एको जपि एको सालाहि एकु सिमरि एको मन आहि।
एकस के गुन गाउ अनंत मनि तनि जापि एक भगवंत।
एको एकु एकु हरि आपि पूरन पूरि रहिओ प्रभु बिआपि।
अनिक बिसथार एक ते भए एकु अराधि पराछत गए।
मन तन अंतरि एकु प्रभु राता गुर प्रसादि नानक इकु जाता ॥८॥

एक प्रभू का नाम लिये जा हम्द[6] उसी की गाये जा
एक प्रभू की याद किये जा मन में नाम बसाये जा
गाये जा गुन गाये जा रब वाहिद[7] है बेअन्त[8] भी है
तन मन से जप नाम उसका वह मालिक से भगवन्त भी है
एक वही है एक वही है एक अकेला आया है
हर सू उसका जलवा है हर शै में आप समाया है
वहदत[9] ही से कसरत[10] निकली एक ही से सब आते हैं
रब[11] वाहिद की पूजा करले पाप सभी मिट जाते हैं
एक प्रभू के प्रेम में जिसने तन मन रंगे, सयाना है
'नानक' गुरु की रहमत से एक रब को उसने जाना है ॥८॥

---

१ अहंकार २ पूंजी ३ ईश्वर के दरबार में ४ तेज ५ हर तरफ़ ६ स्तुति ७ एकमेव, अद्वितीय ८ अनन्त ९ एकत्व १० अनेकत्व ११ प्रभु।

सलोकु

फिरत फिरत प्रभ आइआ
परिआ तउ सरनाइ ॥
नानक की प्रभ बेनती
अपनी भगती लाइ ॥ १ ॥

फिरता फिरता आ गया रब के पाक दुवार
भगती की तौफ़ीक़ हो[1] 'नानक' को सरकार

असटपदी २०

जाचक जनु जाचै प्रभ दानु करि किरपा देवहु हरि नामु ।
साधजना की मागउ धूरि पारब्रहम मेरी सरधा पूरि ।
सदा सदा प्रभ के गुन गावउ सासि सासि प्रभ तुमहि धिआवउ ।
चरन कमल सिउ लागै प्रीति भगति करउ प्रभ की नित नीति ।
एक ओट एको आधारु नानकु मागै नामु प्रभ सारु ॥१॥

तू दाता मैं एक भिखारी लेने आया दान तेरा
नाम का तेरे दान मिले उस दान से हो इहसान तेरा
साध तेरे प्यारे हैं उनके दे चरनों की ख़ाक[2] मुझे
पाक ख़ुदा ऐ पाक ख़ुदा दे ख़ाक की चुटकी पाक मुझे
गाऊँ मैं गुन गाऊँ मैं हर वक़्त तेरे गुन गाऊँ मैं
नाम तेरा हर साँस में लूँ बस तुझ पर ध्यान जमाऊँ मैं
पाक कमल से चरनों से ऐ दाता प्रीत लगाऊँ मैं
तेरी भक्ती काम मेरा हो भक्त तेरा बन जाऊँ मैं
ओट[3] मैं तेरी लेता हूँ है तूही पुश्तीबान[4] मेरा
पाक मुक़द्दस[5] नाम का या रब 'नानक' पाये दान तेरा ॥१॥

प्रभ की दृसटि महा सुखु होइ हरि रसु पावै बिरला कोइ ।
जिन चाखिआ से जन तृपताने पूरन पुरख नही डोलाने ।

---

१ ईश्वर-भक्ति की सामर्थ्य हो २ धूल ३ शरण ४ संरक्षक ५ पवित्र ।

सुभर भरे प्रेम रस रंगि उपजै चाउ साध कै संगि ।
परे सरनि आन सभ तिआगि अंतरि प्रगास अनदिनु लिवलागि ।
बडभागी जपिआ प्रभु सोइ नानक नामि रते सुखु होइ ॥२॥

जिन पर रब की रहमत होगी ख़ूब उन्हें सुख आयेगा
लेकिन कोई कोई होगा जो रब-रस[1] को पायेगा
जिस जिस ने यह रस चक्खा है उसको इत्मीनान हुआ
जम कर पाँव न उखड़ें उसके वह कामिल इन्सान हुआ
प्रेम के रस और रंग से उनका जी दायम[2] भरपूर रहे
संतों की संगत में ऊँचा उनको शौक़ ज़रूर रहे
सब का तक्य:[3] छोड़ के जो बस एक सहारा पाते हैं
मन उनका नूरानी हो वह हरदम ध्यान जमाते हैं
नाम प्रभू का जपने वाले ख़ुशक़िस्मत कहलायेंगे
नाम से जो रंगीन हुये हैं 'नानक' वह सुख पायेंगे ॥२॥

सेवक की मनसा पूरी भई सतिगुर ते निरमल मति लई ।
जन कउ प्रभु होइओ दइआलु सेवकु कीनो सदा निहालु ।
बंधन काटि मुकति जनु भइआ जनम मरन दूखु भ्रमु गइआ ।
इछ पुंनी सरधा सभ पूरी रवि रहिआ सद संगि हजूरी ।
जिसका सा तिनि लीआ मिलाइ नानक भगती नामि समाइ ॥३॥

जो जो ख़्वाहिश सेवक की हो रब पूरी कर देता है
अपने प्यारे सद्गुरु से वह पाक नसीहत लेता है
जिन पर रब की रहमत होगी काम उनके हो जायेंगे
रब के सेवक ख़ुश रहते हैं राहत हरदम पायेंगे
सेवक के सब बन्धन टूटें दुनिया से छुटकारा हो
जीना मरना छोड़ेगा दुख दूर भरम का सारा हो
जो चाहे सो हो जाये हर ख़्वाहिश दिल की पूरी हो
वासिल[4] हो वह ज़ात से रब की हासिल ख़ास हज़ूरी[5] हो
जिसका वह कहलाता था उस मालिक से मिल जायेगा
भक्ती से वह नाम ख़ुदा में 'नानक' आप समायेगा ॥३॥

---

१ परमानन्द २ सदैव ३ आश्रय ४ लीन, तन्मय ५ स्वयं ब्रह्मभाव प्राप्त हो ।

सो किउ बिसरै जि घाल न भानै सो किउ बिसरै जि कीआ जानै ।
सो किउ बिसरै जिनि सभु किछु दीआ
सो किउ बिसरै जि जीवन जीआ ।
सो किउ बिसरै जि अगनि महि राखै गुर प्रसादि को बिरला लाखै ।
सो किउ बिसरै जि बिखु ते काढै जनम जनम का टूटा गाढै ।
गुरि पूरै ततु इहै बुझाइआ,
प्रभु अपना नानक जन धिआइआ ।। ४ ।।

उसको क्योंकर भूलें हम जो मेहनत का फल भूल न जाये
उसको क्योंकर भूलें हम जो काम किये पर फूल चढ़ाये
उसको क्योंकर भूलें हम हर चीज़ का जिससे दान मिले
उसको क्योंकर भूलें हम ज़िन्दा को जिससे जान मिले
उसको क्योंकर भूलें हम जो आग के अन्दर जान बचाये
गुरु की जिस पर रहमत हो वह कोई इसके दरशन पाये
उसको क्योंकर भूलें हम जो सबके पाप मिटाता है
जन्मों के सब टूटे फूटे[1] अपने साथ मिलाता है
मुरशिद[2] कामिल मेरा है यह गुर[3] उसने समझाया
'नानक' मैंने अपने रब पर अपना ध्यान जमाया ।।४।।

साजन संत करहु इहु कामु आन तिआगि जपहु हरिनामु ।
सिमरि सिमरि सिमरि सुख पावहु आपि जपहु अवरह नामु जपावहु ।
भगति भाइ तरीऐ संसारु बिनु भगती तनु होसी छारु ।
सरब कलिआण सूख निधि नामु बूडत जात पाए बिस्रामु ।
सगल दूख का होवत नासु नानक नामु जपह गुनतासु ।।५।।

यारो ! सन्तो ! काम करो एक सबसे अच्छा काम करो
सब को छोड़ो सब को छोड़ो याद प्रभू का नाम करो
सुमरन कर लो सुमरन कर लो सुमरन से सुख पाते जाव
नाम जपो खुद नाम जपो औरों को उसका नाम जपाव
भक्ती प्रेम की नैया पर संसार का सागर पार करो
छोड़ के भक्ती दाता की मत अपनी मिट्टी ख़्वार करो[4]

---

१ जन्म जन्मान्तर के पतितों को २ गुरु ३ मंत्र ४ दुर्दशाग्रस्त करो ।

रब का नाम ख़ज़ाना है सुख राहत जो पहुँचायेगा
डूबे जाने वालों को नाम उसका पार लगायेगा
नाम जपो हक़ नाम जपो दुख दूर करो दुख दूर करो
नाम ख़ज़ाना वस्फ़ों[1] का है 'नानक' जाप ज़रूर करो ॥५॥

उपजी प्रीति प्रेम रसु चाउ मन तन अंतरि इही सुआउ ।
नेत्रहु पेखि दरसु सुखु होइ मनु बिगसै साध चरन धोइ ।
भगत जना कै मनि तनि रंगु बिरला कोऊ पावै संगु ।
एक बसतु दीजै करि मइआ गुर प्रसादि नाम जपि लइआ ।
ताकी उपमा कही न जाइ नानक रहिआ सरब समाइ ॥६॥

प्रीत उगी और प्रेम का रस भी दिल में आया शौक़ यही
मन के अन्दर चाह यही है तन के अन्दर ज़ौक़[2] यही
आखों से दीदार[3] करो दीदार किये सुख पाऊँ मैं
साधों के चरनों को धोकर सुख आनन्द मनाऊँ मैं
मन जिनके रंगीन हुये हैं रब की पाक मुहब्बत में
कोई क़िस्मत वाला पहुँचे उन भक्तों की सुहबत में
बख़्शिश कर एक निअमत मुझ पर एक ही शै[4] का तालिब हूँ
अपने गुरु की रहमत से हक़ नाम जपूँ हक़ नाम जपूँ
उसकी महिमा क्योंकर हो वह फ़हम[5] में किसके आया है
हाज़िर[6] नाज़िर[7] है रब 'नानक' सब में आप समाया है ॥६॥

प्रभ बखसंद दीन दइआल भगत वछल सदा किरपाल ।
अनाथ नाथ गोविंद गुपाल सरब घटा करत प्रतिपाल ।
आदि पुरख कारण करतार भगत जना के प्रान अधार ।
जो जो जपै सो होइ पुनीत भगति भाइ लावै मन हीत ।
हम निरगुनी आर नीच अजान
नानक तुमरी सरनि पुरख भगवान ॥७॥

सब पर बख़्शिश करने वाला आप ग़रीबनवाज़[8] ख़ुदा
भक्तों पर है रहमत उसकी सब पर उसका लुत्फ़[9] सदा

१ गुणों २ चाव ३ दर्शन ४ चीज़ ५ समझ ६ सब जगह मौजूद ७ सब कुछ देखनेवाला ८ दीनदयाल ९ दया ।

बेवालों[1] का वाली[2] है — गोविन्द है वह गोपाल है वह
सबका पालनहार वही है — देता रिज़्क़[3] और माल है वह
सब से अव्वल हस्ती उसकी — ख़ालिक़ है करतार है वह
भक्तों के मन क़ायम उससे — रूहों[4] का आधार है वह
जो जो उसको जपता जाये — पाक वह होता जाता है
भक्ती प्रेम उसी से रखे — मन से प्रीत लगाता है
गुन तो पास नहीं कुछ मेरे — नीच हूँ मैं अनजान हूँ मैं
तेरे साये[5] और अमाँ[6] में — आया अब भगवान हूँ मैं ॥७॥

सरब बैकुंठ मुकति मोख पाए — एक निमख हरि के गुन गाए ।
अनिक राज भोग बडिआई — हरि के नाम की कथा मनि भाई ।
बहु भोजन कापर संगीत — रसना जपती हरि हरि नीत ।
भली सुकरनी सोभा धनवंत — हिरदै बसे पूरन गुरमंत ।
साध संगि प्रभ देहु निवास — सरब सूख नानक परगास ॥८॥

पल भर भी जो अपने मन से — मालिक के गुन गायेगा
जन्नत पाकर मुक्ती पाकर — वह छुटकारा पायेगा
प्यारे रब के नाम की बानी[7] — गर तेरे मन भाई है
शाही तूने पाई है — और तेरी शान बड़ाई है
यह जो तेरे लब पर हरदम — नाम प्रभू का आना है
भोजन है पोशाक है यह — और मीठा मीठा गाना है
काम सब उसके अच्छे हैं — ज़ीशान[8] है वह धनवाला है
जिसने अपने मन के अन्दर — गुरु का मन्तर डाला है
दे संतों की संगत या रब — उनके साथ बसेरा हो
'नानक' को सुख हासिल हो — और ग़म का दूर अँधेरा हो ॥८॥

---

१ असहाय २ संरक्षक ३ रोज़ी ४ जीवों ५ छाया ६ शरण ७ वाणी
८ शान वाला

सलोकु

सरगुन निरगुन निरंकार
सुंन समाधी आपि ॥
आपन कीआ नानका
आपे ही फिरि जापि ॥ १ ॥

गुन वाला बेगुन है वह जिसका रूप न रंग
आप समाध लगाए वह बे-साथी बे-संग
'नानक' अपनी आप ही रचना आप रचाय
सब में खुद महसूस[1] हो सब में आप समाय

असटपदी २१

जब आकारु इहु कछु न दृसटेता पाप पुंन तब कहते होता।
जब धारी आपन सुंन समाधि तब बैर बिरोध किसु संगि कमाति।
जब इसका बरनु चिहनु न जापत तब हरख सोग कहु किसहि बिआपत।
जब आपन आप आपि पारब्रहम तब मोह कहा किसु होवत भरम।
आपन खेलु आपि वरतीजा नानक करनैहारु न दूजा ॥ १ ॥

दुनिया ज़ाहिर जब न हुई थी सारा आलम सोता था
पुन फिर कौन कमाता था और पाप कहाँ से होता था
जब वह आप समाधो में बैठा खुद ध्यान जमाता था
कौन लड़ाई करता था और किससे बैर कमाता था
वरनों[2] की तक़सीम कहाँ थी रिश्ता और न नाता था
खुशियाँ कौन मनाता था ग़म कौन जहाँ में खाता था
यह दुनिया मौजूद न थी बस एक वही रब आली था
माया का कुछ मोह न था संसार भरम से ख़ाली था
खेल उसी का है यह दुनिया उसमें आप समाया है
'नानक' पैदा करने वाला ग़ैर कहाँ से आया है ॥१॥

---

१ अनुभूत, मालूम २ चार वर्ण ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र ।

अिन्नमा कान क़ौलल्मुअ्मिनीन अिज़ा दुअू अिलल्लाहि व रसूलिही लियह्कुम बैनहुम् अँय्यक़ूलू समिअ्ना व अतअ्ना , व अुलाअिक हुमुल्मुफ़्लिहून

बेशक ईमानवालों का क़ौल, जब अल्लाह और उसके रसूल की तरफ़ बुलाये जाते हैं ताकि उनके दर्मियान फ़ैसला किया जाये, यह है कि (ख़ुशी-ख़ुशी) कहते हैं कि हमने सुना और हमने इताअ़त[1] की; वही लोग फ़लाह[2] पाने वाले हैं। [सू० नूर, रु० ७ आ० ५१]

अहादीस

१२६६ मुसलमानों की शानें इताअ़त[1] व तस्लीम[3]

हज़्रत अबू हुरैरः (र०) से रिवायत है कि जब रसूलुल्लाह (स़ल्०) पर यह आयत उतरी—

लिल्लाहि मा फ़िस्समावाति व मा फ़िल्अर्ज़ि व अिन् तुब्दू मा फ़ी अन्फ़ुसिकुम् औ तुख़्फ़ूहु युहासिब्कुम् बिहिल्लाहु।

अल्लाह के लिए है जो कुछ आसमानों और ज़मीन में है और जो कुछ तुम्हारे दिलों में है, उसको छिपाओ या ज़ाहिर करो अल्लाह उसका हिसाब लेगा।

—तो यह बात रसूलुल्लाह (स़ल्०) के असहाब पर गराँ गुज़री[4]। वह आपके पास आये और घुटनों के बल बैठ गये और कहने लगे, या रसूलल्लाह! हम पर वह आ़माल[5] लाज़िम किये गये थे जिनकी हममें ताक़त थी—मसलन नमाज़, रोज़ा, जिहाद, सदक़ः। और अब आप पर यह आयत उतरी है, इसकी हममें ताक़त नहीं। आपने फ़रमाया, क्या तुम अह्लॅ-किताब की तरह कहना चाहते हो जैसे उन्होंने कहा—हमने सुना और नाफ़रमानी की, बल्कि कहो हमने सुना और इताअ़त की। ऐ हमारे रब! तुमसे मग़्फ़िरत[6] चाहते हैं। और हमको तेरी तरफ़ पलटना है।

---

१ आज्ञापालन २ सफलता ३ समर्पण ४ महँगी, भारी ५ कर्त्तव्य ६ माफ़ी।

जब उन्होंने इसका विर्द किया[1] और उनकी ज़बानें रवाँ हो गयीं तो उसके बाद अल्लाह तआ़ला ने यह आयत उतारीः—

आमनर्रसूलु बिमा उन्ज़िल अिलैहि मिर्रब्बिही वल्मुअ्मिनून कुल्लुन् आमन बिल्लाहि व मलाअिकतिही व कुतुबिही व रुसुलिही ला बुफ़र्रिक़ु बैन अहूदिम्मिर्रुसुलिही व क़ालू समिअ़ना व अतअ़ना ग़ुफ़्रानक रब्बना व अिलैकल्मसीरु

रसूल और ईमान वाले उस पर ईमान लाये जो उन पर उनके रब की तरफ़ से उतारा गया और हर एक ईमान लाया अल्लाह पर, उसके फ़िरिश्तों पर, उसकी किताबों पर, उसके रसूलों पर; उसके रसूलों में किसी के दर्मियान हम फ़र्क़ नहीं करते और उन्होंने कहा कि सुना हमने और इताअ़त की हमने, ऐ हमारे परवरदिगार हम तुझसे मग़्फ़िरत चाहते हैं। और हम को तेरी तरफ़ पलटना है। [सू० बक़र रु० ४० आ० २८५]

जब हम सब यह कहने लगे तो अल्लाह तआ़ला ने उनको मन्सूख़ कर दिया और यह आयत उतारी—

ला युकल्लिफ़ुल्लाहु नफ़्सन् अिल्ला वुस्अ़हा लहा मा कसबत् व अ़लैह मक्तसबत्।

अल्लाह किसी को तकलीफ़ नहीं देता मगर उसकी वुसअ़त[2] के मुताबिक़, जो कुछ कमाया अपने ही नफ़ा के लिए और जो बुरा किया तो अपना नुक़सान किया।

फिर अल्लाह तआ़ला ने मुसलमानों की तरफ़ से यह आयत उतारी।

रब्बना ला तुआख़िज़्ना अिन्नसीना औ अख़्तअ्ना।

ऐ हमारे परवरदिगार, हमको न पकड़ अगर हम भूल जायें या ख़ता कर जायें।

अल्लाह तआ़ला ने जवाब में फ़रमाया, हाँ।

रब्बना व ला तह्मिल् अ़लैना अिस्रन् कमा ह्मल्तहु अ़लल्लजीन मिन् क़ब्लिना।

ऐ रब हमारे, हम पर कोई बोझ न रख जैसे तूने अगलों पर रक्खा। फ़रमाया, हाँ।

---

१ बार-बार कहा २ शक्ति, सीमा।

रब्बना व ला तुहम्मिल्ना मा ला ताक़त लना बिही ।

ऐ हमारे रब, न उठवा हमसे (वह बोझ) जिसकी हमको ताक़त नहीं ।

फ़रमाया, हाँ ।

वऽफ़ुअ़न्ना वग़्फ़िर्लना वर्हम्ना अन्त मौलाना फ़न्सुर्ना अ़लल्क़ौमिल्काफ़िरीन ।

और हमको माफ़ करदे और हमको बख़्श दे और हम पर रहम कर, तू हमारा मौला है । काफ़िरों पर हमको मदद दे ।

फ़रमाया, हाँ§ । [मुस्लिम]

बिद्अ़ात[1] की मुमानिअ़त

आयात

…फ़माजाबऽदल् हक़्क़ि इल्लज़्ज़लालु ज ग़ला

नहीं है हक़ के बाद मगर गुमराही [सू० यूनुस, रु० ४ आ० ३२]

…मा फ़र्रत्ना फ़िल्किताबि मिन् शैअिन्…

हमने किताब में किसी चीज़ की कमी नहीं की ।

[सू० अन्आमि, रु० ४ आ० ३८]

……फ़अिन् तनाज़ऽतुम् फ़ी शैअिन् फ़रुद्दूहु अिलल्लाहि वर्रसूलि…

अगर तुम किसी चीज़ में झगड़ो तो उसको अल्लाह और उसके रसूल की तरफ़ पलटा दो । [सू० निसा, रु० ८ आ० ५६]

व अन्ना हाज़ा स़िराती मुस्तक़ीमन् फ़त्तबिअ़ूहु ज व ला तत्तबिअ़ुस्-सुबुल फ़तफ़र्रक़ बिकुम् अ़न् सबीलिही त…

§ यानी अल्लाह ने आपकी यह सब दुआएँ क़ुबूल कीं ।

१ धर्म में नई बातों की मिलावटें ।

और यह मेरा बेशक सीधा रास्ता है, पस उसकी पैरवी करो और दूसरे रास्तों की पैरवी न करो, वह तुमको उस रास्ते से जुदा कर देंगे।

[सू० अन्आम, रु० १६ आ० १५३]

क़ुल् अिन् कुन्तुम् तुहिब्बूनल्लाह फ़त्तबिअूनी युह्बिब्कुमुल्लाहु व यग़्फ़िर्लकुम् ज़ुनूबकुम् ...

कह दो, अगर तुम अल्लाह को चाहते हो तो मेरी पैरवी करो, अल्लाह तुमको चाहेगा। और तुम्हारे गुनाहों को बख़्श देगा।

[सू० आलिअिम्रान रु० ३ आ० ३१]

अहादीस

१६७ बिद्अत ग़ैर-मक़बूल[1] है

हज़्रत आयशः (र०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया जिसने हमारे काम (यानी दीन में) कोई नयी बात पैदा की, जो उसमें नहीं है, तो वह रद्द[2] है। [बुख़ारी-मुस्लिम]

और मुस्लिम की एक रिवायत में है कि जिसने कोई ऐसा अ़मल किया जिस पर हमारा हुक्म नहीं है तो वह रद्द है।

१६८ बिद्अ़त गुमराही है

हज़्रत जाबिर (र०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (सल्०) ख़ुतबा फ़रमा रहे थे।

फ़रमाते फ़रमाते आपकी आवाज तेज़ हो गयी और आँखें सुर्ख़ हो गयीं और आपका ग़ुस्सः ज़ियादः हो गया। मालूम होता था गोया आप एक ऐसे लश्कर से डरा रहे हैं जो सुबह या शाम हमला करने वाला है। और आपने फ़रमाया कि मेरी पैदाइश और क़ियामत इस तरह क़रीब है जिस तरह कलिमः और बीच की उँगली। और फ़रमाते थे बेहतर कलाम अल्लाह की किताब है और बेहतर तरीक़ा मुहम्मद (सल्०) का तरीक़ा है। और बुरे काम नयी बातें हैं। और हर बिद्अ़त गुमराही है। और फ़रमाते थे मैं हर मोमिन का उसके नफ़्स से ज़ियादः मुस्तहिक़ हूँ अगर किसी शख़्स ने माल छोड़ा तो उसके घरवालों के लिए है। और जिसने क़र्ज़ या बच्चे छोड़े तो उसकी ज़िम्मेदारी मुझ पर है। [मुस्लिम]

---

१ अस्वीकृत २ खारिज।

अच्छी या बुरी राह और दस्तूर

आयात

वल्लज़ीन यक़ूलून रब्बना हब्लना मिन् अज़्वाजिना व ज़ुर्रिय्यातिना क़ुर्रत अअ्युनिंव्वज्अल्ना लिल्मुत्तक़ीन अिमामन्

जो लोग कहते हैं कि ऐ हमारे रब हमारी बीवियों में और हमारी औलाद में ठण्डक अ़ता फ़रमा और हमको परहेज़गारों का इमाम बना।

[सू० फ़ुरक़ान, रु० ६ आ० ७४]

व जअ़ल्ना मिन्हुम् अअिम्मतंय्यह्दून बिअम्रिना

हमने उनको इमाम बना दिया, वह हमारे हुक्म के मुताबिक़ हिदायत करते थे।

[सू० अलिफ़्ला'म्मी'म् सज्दह रु० १]

अहादीस

१६६ अच्छी बात की इब्तिदा करने वालों को तमाम अ़मल करने वालों का सवाब मिलेगा

हज़्रत जरीर (र०) बिन अ़ब्दुल्लाह से रिवायत है कि दोपहर के वक़्त हम रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के पास बैठे थे, कुछ लोग नंगे बदन, गले में कम्बल डाले हुए और तलवारों को हमायल[1] किये हुए आये, उनमें अक्सर मुज़र के क़बील: से थे। उनको फ़ाक़:कश देखकर हुज़ूर (स़ल्०) का चेहरॅमुबारक सुर्ख़ हो गया। अन्दर तश्रीफ़ ले गये, फिर बाहर आये और हज़्रत बिलाल (र०) को अज़ान का हुक्म दिया। फिर नमाज़ पढ़ी और ख़ुतबा में फ़रमाया—

या' अय्युहन्नासुत्तक़ू रब्बकुमुल्लज़ी ख़लक़कुम्मिन्नफ़्सिंव्वाहिदतिंव्व ख़लक़ मिन्हा ज़ौजहा व बस्स मिन्हुमा रिजालन् कसीरंव्व निसा'अन् वत्तक़ुल्लाहल्लज़ीतसा'अलून बिही वल्अर्हाम अिन्नल्लाह कान अ़लैकुम् रक़ीबन्

---

१ गले का हार।

ऐ लोगो, अपने परवरदिगार से डरो जिसने तुमको एक जानदार से पैदा किया और उस जानदार से उसका जोड़ा पैदा किया। और उन दोनों से बहुत से मर्द और औरतें फैलायीं, और तुम अल्लाह से डरो जिसके नाम से एक दूसरे से सवाल करते हो और क़राबत का भी लिहाज़ करो। बिलयक़ीन अल्लाह तआ़ला तुम्हारे ऊपर निगिहबान है।

[सू० निसा, रु० १ आ० १]

या अय्युहल्लज़ीन आमुनुत्तक़ुल्लाह वल्तन्ज़ुर् नफ़्सुम्मा क़द्दमत् लिग़दिन् ज

ऐ ईमानवालो ! अल्लाह से डरो और हर नफ़्स देखे कि उसने कल के लिए क्या भेजा है। [सू० हश्र, रु० ३ आ० १८]

किसी ने सद्क़: में दीनार, किसी ने दरहम, किसी ने कपड़े, किसी ने गेहूँ के साअ्[1] और खजूर के साअ् दिये। आपने फ़रमाया सदक़: दो, अगरचि खजूर का एक टुकड़ा ही हो। एक अन्सारी एक थैली लाये। वह इतनी भारी थी कि क़रीब था कि वह थक जायें, बल्कि थक गये थे। फिर पै दर पै लोगों ने लाना शुरू किया। मैंने देखा कि खाने और कपड़े के तूद:[2] लग गये थे। उस वक़्त रसूलुल्लाह (सल्०) का चेहरँ मुबारक चमक रहा था और सुर्ख़ हो रहा था, गोया सोना है। आपने फ़रमाया, जिसने इस्लाम की अच्छी राह निकाली* तो निकालने वाले को अज्र मिलेगा, और जो उस पर अ़मल करेगा उसका अज्र (भी नेक राह निकालने वाले को) मिलेगा, और अ़मल करने वाले के अज्र में कोई कमी न होगी। इसी तरह अगर इस्लाम में कोई बुरी राह निकालेगा तो उस पर गुनाह होगा और उस पर अ़मल करने वाले का गुनाह (भी उस बुरी राह निकालने वाले को) होगा, और अ़मल करने वाले के गुनाह में कोई कमी वाक़िअ् न होगी [मुस्लिम]

वहै० बुरी बात का वबाल पहले पहल करने वाले की गर्दन पर होगा

हज़्रत इब्नि मसऊ़द (र०) से रिवायत है कि नबी (सल्०) ने फ़रमाया कि जो कोई ज़ुल्मन क़त्ल किया जायेगा तो उसका ख़ून आदम

* यानी ऐसे काम का आग़ाज़ किया जिससे दीन और मुसलमानों को नफ़ा पहुँचे और दूसरों को हिम्मत और तरग़ीब हो। मसलन जिहाद में पेशक़दमी, ख़ैरात व इहसान में सबक़त[3] वग़ैरः। न यह कि बिद्अ़ात जो दूसरी क़िस्म में दाख़िल हैं, और वह बुरी राह है, जिसका वबाल क़ियामत तक रहेगा।

१ लगभग पौनेचार सेर २ ढेर ३ स्पर्धा, चढ़ा-ऊपरी।

के पहले बेटे क़ाबील पर होगा इसलिए कि क़त्ल का तरीक़ा उसी ने ईजाद किया। [बुख़ारी-मुस्लिम]

नेकी या बदी की पेशवाई[1]

आयात

…वद्अु अिला रब्बिक…

लोगों को अपने रब की तरफ़ बुलाओ।

[सू० ह़ज्जि, रु० ६ आ० ६७]

अुद्अु अिला सबीलि रब्बिक बिल्हि़क्मति वल्मौअिज़तिल्ह़सनति…

लोगों को अपने रब के रास्ता की तरफ़ अच्छी नसीहत और हिक्मत के साथ बुलाओ। [सू० नह़्लि, रु० १६ आ० १२५]

…व तअावनू अलल्बिर्रि वत्तक़्वा …

और एक दूसरे की नेकी और परहेज़गारी पर मदद करो।

[सू० माअिद:, रु० १ आ० २]

वल्तकुम्मिन्कुम् अुम्मतुंय्यद् अून अिलल्ख़ैरि…

और चाहिए कि हो तुममें से एक जमाअ़त जो लोगों को भलाई की तरफ़ बुलाये। [सू० आलि अिम्रान, रु० १० आ० १०४]

अह़ादीस

१६१ नेक बात पर आमाद: करने का अज्र[2]

ह़ज़्रत अबू मस्अ़ूद अन्सारी (र०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (स़ल्०) ने फ़रमाया, जिसने किसी को नेक बात पर आमाद: किया तो उसके लिए उतना ही अज्र है जितना करने वाले को मिलेगा। [मुस्लिम]

१ नेतृत्व २ प्रतिफल।

१ २/६ २ हिदायत की तरफ़ दावत का सवाब

हज़्रत अबू हुरैरः (र०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया, जिसने किसी को हिदायत की तरफ़ बुलाया तो उसको अ़मल करने वाले की तरह अज्र मिलेगा, और उसके अज्र में कोई कमी न होगी। और जिसने गुमराही की तरफ़ बुलाया तो उस पर ऐसा ही गुनाह है जैसा करने वाले पर, और उस (गुनाह करने वाले) के गुनाह में कोई कमी न होगी। [मुस्लिम]

१ ३/६ ३ अपने ज़रीये से किसी के हिदायत पाने की फ़ज़ीलत[1]

हज़्रत सहल बिन सअ़द (र०) से रिवायत है कि रसूलुल्लाह (सल्०) ने ख़ैबर के दिन फ़रमाया, यह निशान कल मैं ऐसे आदमी को दूँगा जिसके हाथ पर अल्लाह फ़तिह देगा और वह अल्लाह और उसके रसूल को चाहता है। और अल्लाह और उसका रसूल उसको चाहता है। लोगों ने इसी बात पर चर्चा करते हुए रात गुज़ार दी कि देखें किसको निशान दिया जाता है। लोग सुबह ही सुबह रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के पास इस उम्मीद पर आये कि निशान उनको दिया जाये। आपने फ़रमाया अली (र०) बिन अबी तालिब कहाँ हैं। लोगों ने कहा या रसूलल्लाह, उनकी आँखें आशोब कर आयीं। आपने फ़रमाया, उनको बुला लाओ। लोग उनको लाये। रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने अपना लुआबें दहिन[2] उनकी आँखों में लगा दिया। लगाते ही उनकी आँखें अच्छी हो गयीं, गोया कभी दर्द ही न था। आपने उनको निशान दिया। हज़्रत अली (र०) ने कहा, या रसूलल्लाह ! क्या मैं उनसे जंग करता रहूँ ता वक़्ति कि वह इस्लाम ले आयें। आपने फ़रमाया, बराबर चलते रहो, यहाँ तक कि उनके मैदान में उतर पड़ो और उनको इस्लाम की तरफ़ बुलाओ। और जो उनपर अल्लाह का हक़ वाजिब है उसकी ख़बर दो। ख़ुदा की क़सम अल्लाह तआ़ला अगर एक आदमी को भी तुम्हारे ज़रीये हिदायत देगा, वह तुम्हारे लिए सुर्ख़† ऊँटों से बेहतर होगा। [बुख़ारी-मुस्लिम]

१ ४/६ ४ रसूलुल्लाह (सल्०) का रहनुमाई फ़रमाना

हज़्रत अनस (र०) से रिवायत है कि क़बीलः अस्लम का एक नवजवान रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के पास आया और

१ श्रेष्ठता २ थूक।

† सुर्ख़ ऊँट अ़रब में सबसे ज़ियादः क़ीमती चीज़ समझा जाता था।

वन के किसी-किसी अंश में वरुणा तथा पुन्नाग आदि पेड़ों से पैदा होकर अनेक फूलों से मण्डित होने से वनस्थली दर्शकों को संतोष प्रदान कर रही है। (७)

वरुण—जलदेवता, वरुणा का पेड़; देववल्लभ—इन्द्र, पुन्नाग वृक्ष (सुल्ताना चम्पा जिसमें लाल फूलों के गुच्छे लगते हैं); सुमना—देवता, पुष्प। (७)

बनर केउँ प्रदेश दिति छबि धरि।
बिजनित दैत्यगण-रूप अछि धरि। ८।
बिस्तारिछि पवन लीळाकु निरन्तर।
विशेषत मुनि नगरे से मनोहर। ९।

सरलार्थ—वन के कुछ अंशों ने दैत्यमाता दिति की छबि धारण की है, क्योंकि दैत्यमाता ने जैसे दैत्यों (राक्षसों) को जन्म दिया है, वैसे ही इस वन ने राक्षसों के समान अत्यन्त भीषण रूपवाले मुरामांसी (एकांगी) आदि कण्टक-वृक्षों को जन्म दिया है; और दिति जैसे मनोहर कश्यप ऋषि के नगर में सर्वदा अपने पुत्र पवन को खेला रही थीं, वैसे ही पवन इस वन के अगस्तिवृक्ष-पूर्ण किसी अंश में दूसरे प्रदेशों की अपेक्षा अधिकतर क्रीड़ाएँ कर रहा है। अर्थात् अगस्ति वृक्ष से अतिशय ऊँचे होने के कारण अति मन्द पवन से भी झूम रहे हैं।

विशेषः—दिति कश्यप की ज्येष्ठा पत्नी थीं। उनके पुत्र असुर लोग कनिष्ठा अदिति के पुत्रों—देवताओं से भय पाकर बचपन से घर छोड़ चले गये थे। इसलिए दिति पुत्रों को खेला नहीं सकी थीं। पवन दिति से जन्म लेने पर भी देवता थे और इसलिए देवताओं से न डर कर बचपन में घर पर रहे थे और दिति के द्वारा अत्यन्त आदर के साथ पाले-पोसे गये थे। (८-९)

दिति—राक्षस-माता; दैत्य—राक्षस, मुरामांसी नामक एक कंटीला पौधा, एकांगी; मुनिनगरे—कश्यप के नगर में, अगस्ति वृक्षों पर। (श्लेष तथा उपमा) (८-९)

बनर केउँ प्रदेश रञ्जने रञ्जन।
बिनता प्राये अरुण सुपर्ण सुमन। १०।

सरलार्थ—वन का कोई भाग रक्तचन्दन-वृक्षों से सुशोभित होने के कारण गरुड़ माता विनता की तरह दीखता है। क्योंकि विनता अरुण तथा गरुड़—इन दो पुत्रों से सुशोभित होती हैं। उसी प्रकार इस वन के रक्तचन्दन-वृक्ष-संकुल प्रदेश ने भी किञ्चित्-रक्तवर्ण-विशिष्ट कोमल पत्रों को धारण किया है तथा फूलों से सुशोभित हुआ है (१०)

रञ्जने—रक्तचन्दन वृक्षों से, रञ्जन—अनुरागजनक अर्थात् शोभित; विनता—गरुड़ की माता; अरुण—सूर्यसारथि, कुछ लाल वर्ण; सुपर्ण—गरुड़, कोमल पत्र; सुमन—आनन्दमन, फूल। (श्लेष तथा उपमालंकार) (१०)

बनर केउँ प्रदेश कद्रु छबि बहि।
बिहृष्टहर होइछि नागईश्वरहिँ। ११।

सरलार्थ—दूसरे किसी प्रदेश ने नागमाता कद्रु की शोभा धारण की है। नागमाता श्रेष्ठ नागों से सुशोभित होती हैं। वैसे ही यह प्रदेश भी नागेश्वर वृक्षों से सुशोभित होता है। (११)

कद्रु—नागमाता; नागेश्वर—नागश्रेष्ठ, नागेश्वर वृक्ष (श्लेष तथा उपमा) (११)

बनर केउँ प्रदेश संगीतर शाळा।
व्योम लासिका नर्त्तने होइअछि मेळा। १२।
विरळ गन्धर्वगाने ख्यात सातस्वर।
बिताळ होइण राग जात मनोहर। १३।
बसन्त बास करिछि केदारहिँ मेळ।
विचळित ग्रहिँरे सदा सुमरदळ। १४।

सरलार्थ—वन का कोई प्रदेश संगीतशाला के समान शोभित है। संगीतशाला स्वर्गनर्त्तकी के नृत्य से शोभित है। वैसे यह प्रदेश भरत पक्षी के नृत्य से सुशोभित है। गन्धर्वों जैसे सुगायकों के सुन्दर राग तथा तालविशिष्ट सप्तस्वर गान से संगीतशाला गूँज उठती है। उसी तरह वन का और कोई भाग कोयल के अनुरागपूर्ण सप्तस्वरों से (सूक्ष्म स्वरों से) गूँज उठता है। संगीतशाला में ताललयविशिष्ट संगीत गाये जाते हैं। वन में भी ताळ (ताड़) के पेड़ बहुत विद्यमान हैं। संगीतशाला में वसन्तराग वास करता है। उसके साथ केदार राग भी मिलित होकर रहता है तथा उसमें उत्तम मर्द्दल (मृदंग) भी बजते हैं। उसी तरह वन-प्रदेश में भी वसन्त पक्षी (हलदी—वसन्त पक्षी) तथा वृक्षों के मूलों में आलबाल (या क्यारियाँ) सुशोभित हैं, तथा फूलों की पंखुड़ियाँ हवा से विचलित हो रही हैं। (१२-१३-१४)

व्योमलासिका—स्वर्गनर्त्तकी, भरत पक्षी; गन्धर्व—गायक, कोयल; राग—गीत का राग, स्नेह (अनुराग); वसन्त-वसन्त राग, हलदीवसन्त पक्षी; केदार—रागविशेष, क्यारियाँ, आलबाल; सुमरदळ—उत्तम मर्द्दल (मृदंग), फूल की पंखुड़ियाँ। (श्लेष) (१२-१३-१४)

बर्णुथिले सरिबार नुहे ए चरित ।
बिश्राम कले कौशिक मठे रघुसुत । १५ ।

सरलार्थ—उस सिद्धवन की कथा वर्णन करते रहने पर भी समाप्त नहीं होती । वहाँ विश्वामित्र के आश्रम में रामलक्ष्मण ने विश्राम किया । (१५)

बानप्रस्थ गृहिमाने त्वरिते मिळिले ।
ब्रह्मचारी दण्डी आसि आशिष बिहिले । १६ ।

सरलार्थ—रामचन्द्र के आगमन का समाचार पाकर वानप्रस्थाश्रमी तथा गृही तुरन्त आ मिले । ब्रह्मचारियों तथा संन्यासियों ने आकर आशीर्वाद दिया । (१६)

दण्डी—संन्यासी (१६)

बोधि विविध आशने मन ताहाङ्कर ।
बसिले रात्रे चन्द्रकरे अंगणर । १७ ।

सरलार्थ—इसके अनन्तर विश्वामित्र ने नाना प्रकार के भोजन से उन लोगों के मन को सन्तुष्ट किया और रात को चाँदनी में आँगन में उनके साथ बैठे । (१७)

अशन—भोजन; ताहाङ्कर—उनके; अंगणर—आँगन में । (१७)

बिगतभय होइण राक्षसङ्क हेतु ।
बोइले रघुनन्दन आरम्भ हे क्रतु । १८ ।

सरलार्थ—अनन्तर रामचन्द्र ने कहा, "हे मुनिश्रेष्ठ ! अब आप राक्षसों से निडर होकर याग आरम्भ कीजिए । (१८)

विगतभय—निडर; क्रतु—यज्ञ । (१८)

बच प्रकाशरु ऋषि आनन्द होइले ।
बिबिध विधि समिधे यज्ञ आरम्भिले । १९ ।

सरलार्थ—रामचन्द्र के ये वचन सुनकर विश्वामित्र आनन्दित हुए और नाना प्रकार की यज्ञ-सामग्रियों तथा होम-काष्ठों से यज्ञ आरम्भ किया । (१९)

समिध—होमकाष्ठ । (१९)

बीतिहोत्र-प्रिया-नाद श्रवणे अस्रपे ।
ब्यग्रवन्ते परवेश होइले समीपे । २० ।

सरलार्थ—राक्षस लोग अग्नि की प्रियतमा 'स्वाहा' का शब्द सुनकर शीघ्र ही यज्ञ के पास प्रविष्ट हुए (२०)

वीतिहोत्र-प्रिया—अग्नि की प्रियतमा स्वाहादेवी; अस्रपे—राक्षस लोग। (२०)

बरायुध धृत क्रोधे प्रज्वळित मूर्त्ति।
विश्वकेतु नाम पुनः पुनः बोलुछन्ति। २१।

सरलार्थ—वे राक्षस लोग श्रेष्ठ अस्त्र धारण किये हैं। वे क्रोध से प्रज्वलित होकर बार-बार विश्वकेतु का नाम 'मार', 'मार' ('मारो', 'मारो') बोल रहे हैं। (२१)

वरायुध—श्रेष्ठ अस्त्र; विश्वकेतु—कन्दर्प, मार। (२१)

ब्याघ्रगन्ध आघ्राणे गोपरि पळायित।
बोलि बेनि अर्थे रक्ष रक्ष ऋषिव्रात। २२।

सरलार्थ—मुनि लोग 'रक्ष' कहते हुए ऐसे भागने लगे, जैसे गायें बाघ की गंध पाकर भागती हैं। (रक्ष के अर्थ राक्षस तथा रक्षा करो—दोनों हैं।) (२२)

बेनि अर्थे—'रक्ष' के दोनों अर्थों में; रक्ष—राक्षस, रक्ष—रक्षा करो, (यमक); ऋषिव्रात—मुनिसमूह। (२२)

बाणधनु दृढ़े धरि श्रीराम लक्ष्मण।
वीरुँ अन्तरु बाहार ए रव श्रवण। २३।

सरलार्थ—मुनियों के ये ('रक्ष' 'रक्ष') शब्द सुनकर राम तथा लक्ष्मण दोनों धनुष-वाण दृढ़ता से पकड़े लताओं की ओट से निकले। (२३)

वीरुँ—लताओं के मध्य से। (२३)

बोलि एकान्त स्थळर नाम पुनः पुनः।
वाहिनी दुहिङ्कि घेनि तृणर समान। २४।
बातास्त्रे मारीच लक्षे योजने पकाइ।
विभावसु अस्त्रे देले सुबाहु जळाइ। २५।

सरलार्थ—राम-लक्ष्मण दोनों बारबार 'रह'-'रह' (ठहरो-ठहरो) कहते हुए आये और मारीच तथा सुबाहु इन दोनों के सैन्यों को तिनके के समान समझकर पवनास्त्र से मारीच राक्षस को लाख योजन तक उड़ा दिया तथा आग्नेयास्त्र से सुबाहु राक्षस को जला दिया। (२४-२५)

एकान्त स्थळर नाम—एकान्त स्थल का नाम—'रह' (ठहरो); वाहिनी—सेना; बातास्त्रे—पवनास्त्र से; विभावसु अस्त्र—आग्नेयास्त्र। (२४-२५)

बिच्छेदिले लक्ष्मण समस्त सैन्य-करी ।
वंश भाबुँ ताकु से कुठारपाणि परि । २६ ।

सरलार्थ–राक्षस-सेनाओं को बाँस के पेड़ समझकर लक्ष्मण ने उन्हें यों विनाश कर दिया जैसे कि [वनजातीय] शवर कुल्हाड़ी से बाँस-वन को निर्मूल करता है, अथवा राक्षस-सेनाओं को गयासुर के वंशधर समझकर लक्ष्मण ने महादेव की तरह उन सबका विनाश किया । (२६)

'कुल' का एक प्रतिशब्द 'वंश' जिसका अर्थ 'बाँस' भी होता है। अतएव 'वंशभाबु' का अर्थ है राक्षसों के वंश (कुल) को बाँस समझ कर; करी बंश भाबु—गजासुर-वंशधर समझ कर; कुठारपाणि—शवर, महादेव । (२६)

बहुत काळुँ अपूजा पृथ्वीदेवी थिले ।
बिहि रंगशोणिते कि मन्दार पूजिले । २७ ।

सरलार्थ–पृथिवी देवी चिरकाल से अपूजित थीं। (क्योंकि राक्षस लोग मुनियों का यज्ञ नष्ट कर देते थे।) राम-लक्ष्मण दोनों ने पृथिवी को राक्षसों के रक्त से रञ्जित कर दिया। यह देखकर ऐसा प्रतीत हुआ मानो उन्होंने अड़हुल (गहरे लालरंग का जवा-पुष्प) के फूलों से पृथिवी देवी की पूजा की । (२७)

शोणिते—रक्त से; मन्दार—अड़हुल, जवा । (उत्प्रेक्षालंकार) (२७)

बाष्प खषा खसाइला नेत्रुँ चिन्ताकुळे ।
बिष्टि हेला आजुं मो पुत्रङ्क अनुकूळे । २८ ।

सरलार्थ–राक्षसमाता दिति ने चिन्ताकुल होकर आँखों से आँसू बहाए। (उसने सोचा) आज से मेरे पुत्रों के शुभ में अशुभ का प्रवेश हुआ । (२८)

बाष्प—आँसू; खषा[1]—राक्षसमाता दिति; खसाइला[2]—बहाए; बिष्टि—अशुभ, अमंगल; अनुकूळे—शुभ में । (२८)

बसाइले अधः स्वर्ग हटरे त्रिशङ्कु ।
बाहुड़ि से आरम्भिले यज्ञकु निःशङ्कु । २९ ।

सरलार्थ–जिन विश्वामित्र ने कौतुक से राजा त्रिशंकु को अर्द्धस्वर्ग पर चढ़ा दिया था, उन्होंने लौटकर निर्भय मन से फिर यज्ञ आरम्भ किया । (२९)

बासवादि देवे हवि भुञ्जि तोष हेले ।
बाहुड़ पुरकु रामभद्र पचारिले । ३० ।

सरलार्थ—इन्द्रादि देवता हविर्भाग (यज्ञ का भाग) पाकर सन्तुष्ट हुए। (अर्थात् यज्ञ समाप्त हुआ।) अनन्तर रामभद्र ने "हम अब अयोध्या को लौटें" इसके लिए ऋषि की आज्ञा माँगी। (३०)

बिपुळ काम्यक वने थरे भ्रमिय़िबा।
बोलि बाहारिले मुनि घेनि बेनि य़ुबा। ३१।

सरलार्थ—यह सुनकर विश्वामित्र ने कहा, "चलो, हम लोग एक बार बड़े काम्यक वन में (गौतम मुनि के तपोवन में) थोड़ा घूम आवें"। यह कहकर राम-लक्ष्मण को साथ लिये ऋषि चल पड़े (३१)

बाटे से बनरे पड़िथिला दिव्यशिळा।
बिशोउँ रामचरण लागि से अबळा। ३२।

सरलार्थ—काम्यक वन को जाने के मार्ग पर एक सुन्दर पत्थर पड़ा हुआ था। विश्राम के उद्देश्य से रामचन्द्र द्वारा उसके ऊपर पदार्पण करते ही वह पत्थर एक स्त्री बन गया। (३२)

बिशोउँ—विश्राम करने के अभिप्राय से। (३२)

बिस्मय होइ अनाइँ भाबि रघुपति।
बनीतार[1] बनितार[2] प्रभा एकाकृति। ३३।

सरलार्थ—रामचन्द्र ने आश्चर्य से उस पत्थर की ओर देखकर सोचा, "इस काम्यक वन की शोभा तथा इस वनिता (स्त्री) की शोभा, दोनों एक-सी हैं। (३३)

अनाइँ—देखकर; बनीतार[1]—उपवन की, काम्यक वन की; बनितार[2]—स्त्री की (यमकालंकार) (३३)

बनप्रिय[1]-तोषदानी रमणी ए[1] लोके[1]।
वनप्रिय[2]-तोषदानी रमणीए[2] लोके[2]। ३४।

सरलार्थ—यह रमणी मुनि गौतम की आनन्ददायिनी तथा संसार में कमनीय है। यह काम्यक बन भी उसी तरह कोयलों का आनन्ददायक तथा देखने में मनोरम है। (३४)

वनप्रिय[1]—गौतम महर्षि (वन है प्रिय जिनका); तोषदानी—आनन्ददायक; रमणी ए[1]—यह स्त्री; लोके[1]—संसार में; वनप्रिय[2]—कोयल; रमणीए[2]—रमणीय, सुन्दर; लोके[2]-अवलोकनार्थ; (सर्वयमक) (३४)

बिराजि[1] वर-कनक[1] कदम्ब रुचिरे।
बि-राजि[2] वर कनक[2] कदम्ब रुचिरे। ३५।

सरलार्थ–यह श्रेष्ठ रमणी अपने शरीर की कान्ति से शुद्ध सुवर्ण की तरह देदीप्यमान है। यह वन भी विविधि पक्षियों के द्वारा सुशोभित है तथा बरगद, पलास और कदम्ब आदि पेड़ों से विमण्डित है। (३५)

बिराजि[1]—देदीप्यमान; वर-कनक-कदम्ब[1]—श्रेष्ठ या शुद्ध सुवर्णसमूह; वि-राजि[2]—पक्षि-समूह; वर[2]—बरगद, कनक[2]—पलास, कदम्ब—कदम्ब का पेड़। (सर्वयमक) (३५)

बासरे[1] आच्छन्न शोभा तुंग[1] पयोधरे[1]।
बासरे[2] आच्छन्न शोभा तुङ्ग[2] पयोधरे[2]। ३६।

सरलार्थ–यह रमणी अपने दोनों उन्नत स्तनों को वस्त्र द्वारा आच्छादित करके शोभा पा रही है। उसी तरह यह काम्यक बन भी पुष्पसौरभ से परिपूर्ण होकर अत्युच्च नारियल के वृक्षों से आच्छादित है। (३६)

बासरे[1]—वस्त्र से; तुंग[1]—उन्नत; पयोधरे[1]—स्तनों को; बासरे[2]—सौरभ से; तुंग[2]—अत्युच्च; पयोधरे[2]—नारियल के पेड़ों से। (सर्वयमक) (३६)

बेणी[1] केशरे[1] रञ्जन[1] सिन्दूर चितारे[1]।
बेणी[2] केशरे[2] रञ्जन[2] सिन्दूर चितारे[2]। ३७।

सरलार्थ–यह रमणी अपनी केश-निर्मित वेणी तथा सिन्दूर की बिंदी से सुशोभित है। उसी तरह यह वन भी देवताड़, नागकेशर, रक्तचन्दन तथा सिन्दूरचिता आदि वृक्षों से मनोहर दिखाई देता है। (३७)

वेणी[1]—केशों की गूँथी हुई चोटी; केशरे[1]—बालों से; रञ्जन[1]—सुन्दर; सिन्दूर-चितारे[1]—सिन्दूर की बिंदी से; वेणी[2]—देवताड़ बृक्षों से; केशरे[2]—नागकेशरों से; रञ्जन[2]—रक्तचन्दन वृक्ष; सिन्दूरचिता[2]—रक्तवर्ण का वृक्षविशेष। (सर्वयमक) (३७)

बळा[1], मल्लिकढ़ि[1] फुल[1] मण्डन अतुल[1]।
बळा[2], मल्लिकढ़ि[2] फुल[2] मण्डन अतुल[2]। ३८।

सरलार्थ–यह स्त्री पाजेब, मल्लिकढ़ी, करनफूल तथा अतुल (हस्ताभूषण विशेष) आदि गहनों से सुशोभित है। यह वन भी बाड़ी आँवला और अतुलनीय कलियों तथा फूलों से सुशोभित मल्लिका के पौधों से विमण्डित है। (३८)

बळा[१]—पैर का भूषणविशेष, पाजेब; मल्लिकढ़ि[१]—अलंकार विशेष; फुल[१]—करनफूल, अतुल[१]—हाँथ का अलंकार विशेष; बळा[२]—बाड़ी आँवला; मल्लिकढ़ि फुल[२]—बेले की कलियों तथा फूलों से; अतुल[२]—अतुलनीय, अनुपम। (सर्वयमक) (३८)

बिलोकि बिलोकि पुच्छा कले दाशरथि ।
बराङ्गना हेला शिळा कि विषय एथि ? ३९ ।

सरलार्थ—उस वनिता (रमणी) की ओर बार-बार देखकर रामचन्द्र ने विश्वामित्र से पूछा, "पत्थर दिव्य स्त्री बना; इसका विषय (रहस्य) क्या है, जरा बताइए"। (३९)

विश्वामित्र बोले आहे मित्रवंशी शुण ।
बिधाता भग्ने ऊर्वशी सुन्दरिमा टाण । ४० ।

बिधाता सर्वलावण्य धाम करि करूँ ।
बृत्रारि भानु मागिले देखि एहा चारुँ । ४१ ।

सरलार्थ—विश्वामित्र ने कहा, "हे सूर्यवंशी रामचन्द्र, सुनो। विधाता ने उर्वशी के सौन्दर्य-गर्व को भग्न करने के अभिप्राय से सर्वलावण्याधार इस स्त्री (अहल्या) का निर्माण किया। इसकी शोभा देखकर इन्द्र तथा सूर्य दोनों ने विधाता से उसे माँगा"। (४०-४१)

मित्रवंशी—सूर्यवंशी रामचन्द्र; सुन्दरिमा टाण—सौन्दर्य का गर्व; बृत्रारि—बृत्र राक्षस के शत्रु इन्द्र; भानु—सूर्य। (४०-४१)

बुलि धरणी ये आगे आसिब चपळे ।
बामलोचना ताहाकु प्रापति बोइले । ४२ ।

सरलार्थ—विधाता ने कहा, "जो पृथ्वी की शीघ्र परिक्रमा करके पहले लौट आये, उसे ही यह वामलोचना प्राप्त होगी"। (४२)

बच स्फुरुँ भ्रमिगले दुइ देवोत्तम ।
ब्यजन चाळन करुथिले गउतम । ४३ ।

सरलार्थ—ब्रह्मा के मुख से यह वाणी निकलने पर दोनों श्रेष्ठ देवता (सूर्य और इन्द्र) पृथ्वी की परिक्रमा करने के लिए चल पड़े; उस समय वहाँ गौतम ऋषि विधाता के पास बैठे पंखा डुला रहे थे। (४३)

ब्यजन—पंखा। (४३)

बोइले तुम्भे न गल किम्पा ए निमित्ते ।
ब्रह्म प्रदक्षिण करि से कर योड़न्ते । ४४ ।

खांदीं घेउनी । श्रावण तीर्थें हिंडे मेदिनीं । त्या सरोवराचे तीरीं येउनी । उभा राहिला नावेक । ३१ तों तीं वृद्धें म्हणती श्रावणा । आम्हां करवीं उदकपाना । ऐकतां ऐसिया वचना । कावड खालीं ठेविली । ३२ हातीं कमंडलु घेऊन । जीवनांत प्रवेशला श्रावण । दशरथें सांचोल ऐकोन । निर्वाणबाण सोडिला । ३३ सपक्ष बाण हृदयीं भेदला । हातींचा कमंडलु खालीं पडला । देह भूमीवरी टाकिला । प्राण चालिला श्रावणाचा । ३४ म्हणे कोणे सभाग्याचा बाण । करीत आला रामस्मरण । हृदय निवालें संपूर्ण । केलें पावन मजलागीं । ३५ ऐकोनि मनुष्याचें वचन । नृपवर जवळी आला धांवोन । तंव तो पडिलासे श्रावण । रामस्तवन करीतचि । ३६ मग म्हणे कर्म पापकारी । पडली हत्या मजवरी । श्रावण म्हणे राया न करीं । खेद कांहीं सर्वथा । ३७ माझीं मायबापें वृद्धें दीन । तयांसी करवीं उदकपान । मग मी सोडीन प्राण । सत्य

दिन में बहुत बाधाएँ आती हैं, गर्मी बहुत होती है, इसलिए वह रात में यात्रा किया करता । ३० अपने दोनों बूढ़े माता-पिता को कंधे पर (काँवर में) बैठाकर श्रवण पृथ्वी (तल) पर तीर्थ-क्षेत्रों में घूमा करता । वह उस सरोवर के तट पर आकर क्षण भर खड़ा रहा । ३१ तो उन बूढ़ों ने श्रवण से कहा, 'हमें पानी पिलाओ ।' ऐसी बात को सुन कर उसने काँवर को नीचे (धरती पर उतार) रक्खा । ३२ और हाथ में कमण्डल लिये हुए श्रवण पानी में घुसा, तो दशरथ ने आहट सुनकर (एक) तीक्ष्ण बाण चलाया । ३३ पर-सहित (वह) बाण उस (श्रवण) के हृदय में घुस गया, तो कमण्डल हाथ में से नीचे गिर पड़ा । उसने देह को ज़मीन पर गिरा दिया (उसकी देह लुढ़क गयी) । श्रवण के प्राण निकला ही चाहते थे । ३४ वह बोला, 'यह किस भागवान् का बाण है जो (मेरे) राम (नाम) का स्मरण करते हुए आया (आ लगा) है; मेरा हृदय पूर्णतः शान्त हुआ । उसने मुझे पावन किया है ।' ३५ मनुष्य के वचन को सुनकर राजा (दशरथ) उसके पास दौड़ते हुए आ गया, तो (उसने देखा कि) राम का स्तवन करते हुए श्रवण पड़ा (हुआ) है । ३६ तब (राजा ने) कहा—'यह पापकारी कर्म है । मुझे (मनुष्य) हत्या का दोष लग गया ।' इसपर श्रवण बोला, 'राजन्, इसका ज़रा भी खेद न करो । ३७ मेरे माता-पिता वृद्ध और असहाय हैं, उन्हें तुम पानी पिलाओ, तो मैं (सुखपूर्वक) प्राणों का त्याग करूँगा; राजन्, इसे सत्य समझो । देखो,

जाण राजेंद्रा । ३८ दोघें वृद्धें अत्यंत पाहीं । त्यांचे सेवेसी कोणी नाहीं । दशरथ गहिंवरला हृदयीं । शोकाकुलित जाहला । ३९ श्रावण म्हणे दशरथा । उदक दोघां पाजून त्वरिता । मग हे सांगावी वार्ता । नाहीं तरी प्राण त्यागिती । ४० उदक नेतां अयोध्याराणा । वृद्धें म्हणती-बा रे श्रावणा । तंव तो न बोलेचि वचना । कांहीं केलिया सर्वथा । ४१ कां रे श्रावणा न बोलसी । उदक मागितलें येवढे निशीं । बा रे म्हणोन कोपलासी । शिणलासी पाडसा । ४२ उदयाचळीं मावळेल मित्र । शेष सांडील भूमिभार । तीव्र तपेल रोहिणी-वर । तरी क्रोध अणुमात्र न ये तूतें । ४३ जैसें गंगेचें निर्मळ जीवन । तैसें श्रावणा तुझें मन । तान्हया कां रे न बोलसी वचन । राजा ऐकोनि गहिंवरे । ४४ मग अजराजपुत्र बोलिला । म्यां अवचितां श्रावण वधिला । तंव तिहीं धरणी-वर देह टाकिला । प्राण जाहला कासाविस । ४५ आठवोनि श्रावणाचे गुण । दोघें आक्रंदती दीनवदन । ऐसा पुत्र हें

वे दोनों बहुत वृद्ध हैं। उनकी सेवा के लिए (अब) कोई नहीं है।' (यह सुनकर) दशरथ (हृदय में) गद्‌गद हो उठा और शोक से व्याकुल हो गया। ३८-३९ (फिर) श्रवण ने कहा, 'दशरथ महाराज, उन दोनों को जल्दी ही पानी पिलाकर बाद में यह समाचार कहो, नहीं तो वे प्राणों को त्याग देंगे।' ४० दशरथ के पानी ले जाने पर (उन) वृद्ध व्यक्तियों ने कहा—'बेटा श्रवण!' तो वह राजा बहुत कुछ करने पर भी बिलकुल नहीं बोला। ४१ (वे फिर बोले) 'श्रवण बेटा, तू क्यों नहीं बोल रहा है? इतनी रात में पानी माँगा, इसलिए (जान पड़ता है) तू क्रुद्ध हुआ; वत्स, तू बहुत थक गया। सूर्य का उदयाचल पर भी अस्त होगा, शेष पृथ्वी के बोझ को उतार डालेगा, रोहिणी-पति चन्द्रमा प्रखरता से तप्त हो जाएगा; (अर्थात् ये बातें असम्भव हैं, फिर भी वे घटित हो जाएँगी) लेकिन तुझे अल्प-सा भी क्रोध नहीं आएगा। गंगा का पानी जैसा निर्मल है, वैसे ही श्रवण, तेरा मन स्वच्छ (विकार-हीन) है। बच्चा, तू कोई बात क्यों नहीं बोलता?' यह सुनकर राजा गद्‌गद हो गया। ४२-४४ तब अजराजा के पुत्र दशरथ ने कहा—'मैंने अचानक (अनपेक्षित रूप में—अनजाने में) श्रवण का वध किया।' (यह सुनते ही) उन्होंने धरती पर देह गिरा दी। उनके प्राण व्याकुल हो गये। ४५ श्रवण के गुणों का स्मरण कर वे दोनों मलिन मुख से क्रन्दन करने लगे।—'आह! तीनों

त्रिभुवन । शोधितांही न सांपडे । ४६ अहा रे पुत्रा श्रावणा । गंभीरा गुणनिधाना । आमुचे प्राण करिती प्रयाणा । श्रावणा वदन दावीं कां । ४७ या ब्रह्मांडमंडपांत । श्रावणाऐसा नाहीं सुत । जैसीं लक्ष्मी आणि वैकुंठनाथ । तैसीं भावित माता-पिता । ४८ जो न करी मातृपितृ-भजन । जळो तयाचें ब्रह्म-ज्ञान । तो षट्शास्त्रें आला पढून । तरी त्याचें दर्शन न व्हावें । ४९ त्याचें जप तप अनुष्ठान । दान अध्ययन श्रवण मनन । कळा चातुर्य व्यर्थ ज्ञान । जैसें भाषण मद्यपियाचें । ५० तेणें अभ्यासिल्या चौसष्टी कळा । त्या अवघ्याचि जाहल्या विकळा । जयासी मातापित्यांचा कंटाळा । त्या चांडाळा न शिवावें । ५१ माता पिता गुरु देव जाण । चारही दैवतें समसमान । तोचि परम ज्ञाता जाण । न मोडी वचन श्रेष्ठांचें । ५२ म्हणोनि पुत्र एक श्रावण । आठवूनि तयाचे गुण । दोघें पडलीं मूर्च्छा येऊन । जावया प्राण एकवटले । ५३ मग तीं शाप देती प्राण जातां । म्हणती तुझाही पुत्र पुत्र करितां ।

भुवनों में खोजने पर भी ऐसा पुत्र नहीं मिलेगा । हाय ! बेटा श्रवण ! हे गम्भीर ! हे गुण-निधान ! हमारे प्राण (अब) प्रस्थान कर रहे हैं, तो तू अपना मुँह तो दिखा न !' ४६-४७ इस ब्रह्माण्ड रूपी मण्डप में श्रवण जैसा पुत्र नहीं है । वह अपने माता-पिता की लक्ष्मी-नारायण की-सी भक्ति करता था । ४८ जो (पुत्र) माता-पिता की भक्ति नहीं करता, (ब्रह्मज्ञानी होने पर भी) उसका ब्रह्मज्ञान जलकर खाक हो जाए । यदि वह छहों शास्त्रों को पढ़कर भी आया हुआ हो, तो भी उसके दर्शन न हो जाएँ । ४९ उसका जप, तप, अनुष्ठान, दान, अध्ययन, (शास्त्रों-सद्ग्रन्थों का) श्रवण, मनन, कला (का प्रावीण्य), चातुर्य, ज्ञान—यह (सब) वैसे ही व्यर्थ है, जैसे शराबी का बोलना (व्यर्थ) माना जाता है । ५० उसने चौसठ कलाओं का अभ्यास भी किया हो, वे सब विकल (व्यर्थ) हो जाती हैं । जिसे माता-पिता के प्रति उकताहट (उदासीनता) है, उस चाण्डाल को छुएँ तक नहीं । ५१ मान लो कि माता, पिता, देव और गुरु—ये चारों देवता सम-समान हैं । जो इन श्रेष्ठों (गुरुजनों) के वचन को नहीं टालता, उसे ही परम ज्ञानी समझो । ५२ (श्रवण ऐसा ही श्रेष्ठ पुत्र था ।) इसलिए अपने ऐसे (गुणवान्) इकलौते पुत्र के गुणों का स्मरण करते हुए वे दोनों अचेत हो पड़े । उनके प्राण निकल जाने को इकट्ठा हो गये । ५३ तदनन्तर प्राणों के निकलते-निकलते उन्होंने शाप देते हुए कहा—"हे दशरथ,

प्राण जाईल रे दशरथा। आम्हांऐसाचि तत्काळ। ५४
मग तिहीं सोडिला प्राण। रायें केलें तिघांचें दहन। उत्तर-
कार्य संपादून। अयोध्येसी परतला। ५५ मनांत हर्ष मानी
नृपवर। मज शाप जाहला तो केवळ वर। यांचे शापें तरी
पुत्र। हो कां सत्वरं मजलागी। ५६ अयोध्येसी आला दशरथ।
वसिष्ठासी सांगितला वृत्तांत। पुढें द्वादश वर्षेंपर्यंत। दुष्काळ
पडला पृथ्वीवरी। ५७ न वर्षे कदा बलाहक। अत्यंत तीव्र
तपे अर्क। धान्य तृण जीवन सकळिक। नाहीं निष्टंक
पृथ्वीवरी। ५८ गायी ब्राह्मण पीडिले बहुत। दैत्यगुरु परम
कापटचवंत। तेणें जलद आकर्षिले समस्त। वृष्टि एकाक्ष
होऊं नेदी। ५९ वृष्टि जाहलिया परिपूर्ण। सुखी होतील
गोब्राह्मण। ते करितील महायज्ञ। सुरांस पूर्ण बळ तेणें। ६०
वृषपर्वा दैत्येंद्र थोर। त्यासी साह्य जाहला शुक्र। निर्जरभारां-
सहित शक्र। युद्ध करीत तयासीं। ६१ बहुत दिवस जाहला
संग्राम। परी शुक्र कपटी पूर्ण परम। मेघ वर्षों नेदी अधम।

हमारी भाँति 'पुत्र', 'पुत्र' कहते-कहते ही तुम्हारे प्राण तत्काल निकल जाएँगे।" ५४ फिर उन्होंने प्राण त्याग दिये। राजा ने उन (तीनों) का दाह-संस्कार किया और उत्तर-क्रिया पूर्ण करके वह अयोध्या (में) लौट आया। ५५ राजा मन-ही-मन हर्ष मानता (अनुभव करता) था। यह शाप मेरे लिए वर मात्र हो गया है। —इनके शाप से ही क्यों न हो, शीघ्र ही मेरे पुत्र (उत्पन्न) हो जाएँ। ५६ दशरथ अयोध्या में (लौट) आया और उसने वसिष्ठ को समाचार सुनाया। तदनन्तर बारह वर्ष तक पृथ्वी पर अकाल (सूखा) पड़ गया। ५७

(इस अवधि में) बादल कभी भी नहीं बरसे। सूर्य अत्यन्त प्रखरता से तपता था। सब अनाज, घास, पानी—पृथ्वी पर बिलकुल नहीं रहा। ५८ गायें और ब्राह्मण बहुत पीड़ित हो गये। दैत्यों का गुरु (शुक्र) अति कपटी था। उसने सभी बादलों को आकृष्ट किया और वह एकाक्ष (एक आँख वाला) वर्षा नहीं होने देता था। ५९ (क्योंकि उसने सोचा,) यदि पर्याप्त वर्षा हो जाए, तो गो-ब्राह्मण सुखी हो जाएँगे, वे महायज्ञ (सम्पन्न) करेंगे—उससे देवों को पूर्ण शक्ति प्राप्त होगी। ६० वृषपर्वा (नामक) दैत्यों का बड़ा राजा था। शुक्र उसका सहायक हो गया। उससे देवों के दलों सहित इन्द्र युद्ध कर रहा था। ६१ बहुत दिन तक युद्ध हुआ; फिर भी (वह) पूर्णतः कपटी अधम शुक्र मेघों को बरसने नहीं

सुत्रामा चिंताक्रांत बहुत । ६२ वज्रधरासी म्हणे अंगिरासुत । अयोध्येचा राजा दशरथ । तो प्रतापार्क रणपंडित । जिंकील दैत्य क्षणमात्रें । ६३ मग मातली आणी विजयरथा । मूळ पाठविलें दशरथा । मातली सांगे समूळ वार्ता । अनावृष्टि-कारणें जे । ६४ ऐकोनि दैत्यप्रताप अद्भुत । तत्काळ रथीं बैसला दशरथा । तों कैकयी रायास प्रिय अत्यंत । काय बोलत तेधवां । ६५ म्हणे मी समागमें येईन । आणि संग्राम तुमचा पाहीन । राजा म्हणे-तूं सुकुमार पूर्ण । युद्धकंदन ते स्थानीं । ६६ येरी म्हणे तुम्ही जवळीं असतां । मज भय नाहीं सर्वथा । ऐसे तिचे बोल ऐकतां । घेतली रथावरी तेधवां । ६७ निराळमार्गें रथ ते वेळीं । घेऊनि जात चपळ मातली । देवदैत्यांच्या रणमंडळीं । रथ अकस्मात उतरला । ६८ वैकुंठींहूनि विनतासुत । क्षीराब्धितटीं उतरे अकस्मात । तैसा राजा दशरथ । सुरसमुदायांत उतरला । ६९ अजपुत्र दखोनि

देता था । (इससे) इन्द्र बहुत चिन्तातुर हो गया । ६२ तो गुरु बृहस्पति ने इन्द्र से कहा, 'अयोध्या का राजा दशरथ (मानो) प्रताप का सूर्य है । वह युद्ध (कला) का पण्डित है । वह क्षण मात्र में दैत्यों को जीतेगा ।' ६३ इस पर इन्द्र ने मातली (नामक अपने सारथी) को और विजय नामक रथ को दशरथ के पास (उसे लिवा लाने के लिए) निमंत्रक दूत के रूप में भेजा । मातली ने दशरथ को शुरू से वार्ता सुनायी, जिससे अकाल (सूखा) पड़ा हुआ था । ६४ दैत्यों के इस अद्‌भुत प्रताप को सुनकर राजा दशरथ तत्क्षण रथ में विराजमान हो गया, तो उसकी अत्यन्त प्रिय रानी (कैकेयी) उससे क्या कहती है ? ६५ वह बोली–'(महाराज,) मैं (आपके) साथ आऊँगी और आप का युद्ध (कौशल) देखूँगी ।' तो राजा ने कहा–'तुम पूर्ण (अतीव) कोमल हो और उस स्थान पर तो युद्ध (तथा विनाश) है ।' ६६ इस पर उस (स्त्री) ने कहा—'(महाराज,) आपके (मेरे) पास होने पर मुझे बिलकुल भय नहीं है ।' तब उसका ऐसा कथन सुनकर राजा ने उसे रथ में (बैठा) लिया । ६७ उस समय मातली रथ को आकाश मार्ग से चपलता पूर्वक ले गया; देवों-दैत्यों की संग्राम-भूमि में वह रथ अकस्मात उतर पड़ा । ६८ विनता का पुत्र गरुड़ जैसे वैकुण्ठ-लोक से क्षीर-समुद्र के तट पर यकायक उतरता है, वैसे ही राजा दशरथ देवों के समूह के मध्य उतर पड़ा । ६९ दशरथ को देखकर इन्द्र ने प्रेमपूर्वक उसका आलिंगन

पाकशासन। देता जाहला क्षेमालिंगन। दशरथ धनुष्य चढवून। उभा ठाकला रणांगणीं। ७० बाणापाठीं बाण सोडित। जैसे शब्दामागें शब्द येत। कीं मेघ धारा वर्षत। शर सोडित त्याच रीतीं। ७१ जैशा मेघाबाहेर निवडोनी। निघती कल्पांतसौदामिनी। तैसा एकेक बाण तूणीरांतुनी। ओढोनि काढी दशरथ। ७२ दैत्यांचीं शिरें अकस्मात। गगनीं उडती असंख्यात। जैसे वृक्षावरोनि पक्षी उडत। प्रातःकाळीं एकदांचि। ७३ माघारले दैत्यभार तेव्हां। तों पुढें आला वृषपर्वा। कपटकळा युद्धमावा। नाना प्रकारें दावित। ७४ परी दशरथबाणसामर्थ्यें। कापटचविद्या न चले तेथ। जैसें मूर्खाचें वाग्जाळ समस्त। उच्छेदी पंडित एकशब्दें। ७५ जैसा मंत्रवादी महामती। त्यापुढें भूतचेष्टा न चालती। तैशा दशरथापुढें युद्धगती। कदा न चालती तयाच्या। ७६ देखोनि दशरथाचा प्रताप तेव्हां। विरथ जाहला वृषपर्वा। पाठी देऊनि तेधवां। निघता जाहला सवेग। ७७ घृतें शिंपिला

किया (उसे गले लगाया।) (और फिर) दशरथ धनुष्य पर बाण चढ़ाकर खड़ा हो गया। ७० वह एक के पीछे एक बाण चलाता था। जिस प्रकार (वक्ता के मुख से) एक के बाद एक-एक शब्द निकल आते हैं अथवा मेघ से (अविरत) धारा बरसती है, उसी प्रकार दशरथ बाण चला रहा था। ७१ जिस तरह कल्पान्त समय की बिजलियाँ मेघ के बाहर निकलती हैं, उसी तरह दशरथ तरकस में से एक-एक बाण (बाहर) खींच निकालता था। ७२ जैसे वृक्ष पर से सुबह एक बार पक्षी उड़ जाते हैं, वैसे ही दैत्यों के अनगिनत सिर (कटकर) आकाश में सहसा उड़ते थे। ७३ दैत्यों के दल (पराजित हो) जब पीछे हट गये, तो (राजा) वृषपर्वा आगे बढ़ आया। वह नाना प्रकार से कपट-नीति पूर्वक युद्ध की माया (भ्रम में डालने वाले चमत्कार) दिखाता था। लेकिन पण्डित एक शब्द से मूर्ख के समूचे वाग्जाल को काट डालता है, (मूर्ख की एक नहीं चलती) उसी प्रकार दशरथ के बाण की सामर्थ्य से वृषपर्वा की कपट-विद्या की एक न चली। ७४-७५ कोई महाबुद्धिमान ओझा हो, तो जैसे उसके सामने भूत-पिशाचों की कोई कृति नहीं चलती, उसी प्रकार उन दैत्यों की युद्ध-लीलाएँ दशरथ के सामने नहीं चलती थीं। ७६ दशरथ के प्रताप को देखकर और रथहीन होकर, वृषपर्वा विमुख हो बड़े वेग से निकल पड़ा। ७७ घी के सींचने से जैसे अग्नि प्रज्ज्वलित होती है, वैसे ही शुक्र

वैश्वानर। तैसा क्रोधायमान जाहला शुक्र। रथीं बैसोनियां शर। सोडिता जाहला प्रतापें। ७८ जातवेदास्त्र ते अवसरीं। सोडिता जाहला देवांवरी। अयोध्याधीशें झडकरी। जलदास्त्र प्रेरिलें। ७९ शुक्रें वातास्त्र सोडिलें अद्भुत। येरें आड घातले पर्वत। वात कोंडिला समस्त। दैत्यगुरुनें देखिलें। ८० मग सोडिलें वज्रास्त्र। पर्वत फोडिले समग्र। दशरथें सोडिलें माहेश्वर। देखोनि वज्रास्त्र विरालें। ८१ शुक्र परम क्रोधायमान। काढिला एक निर्वाणबाण। रथाचा आंख छेदून। टाकिता जाहला तेधवां। ८२ आंख छेदितां अकस्मात। खालीं पडावा जों दशरथ। तों कैकयी देखोनि धांवत। घालोनि हात आंख धरी। ८३ पर्वताकार रथ थोर। दंडावरी घेतला भार समग्र। वीरश्री-रंगें नृपवर। समाचार नेणे तो। ८४ दशरथें सोडिला निर्वाणबाण। तोडिला कवीचा स्यंदन। अश्वांसहित कुटके करून। रणमंडळीं पाडिला। ८५ विरथ जेव्हां जाहला शुक्र। दशरथें काढिला सूर्यमुख शर। म्हणे

(इससे) क्रुद्ध हो गया (उसकी क्रोधाग्नि प्रज्ज्वलित हो गयी)। वह रथ में विराजमान होते हुए प्रतापपूर्वक बाण चलाने लगा। ७८ उस समय उसने देवों पर अग्नि-अस्त्र चलाया, तो झट से दशरथ ने मेघास्त्र प्रेरित किया (चला दिया)। ७९ शुक्र ने जब अद्‌भुत वायु-अस्त्र फेंका, तो दूसरे (दशरथ) ने (उसके मार्ग में) पर्वतों को बाधा रूप में डाल रक्खा और दैत्यगुरु शुक्र ने देखा कि समस्त वायु अवरुद्ध है। ८० तत्पश्चात् (शुक्र ने) वज्र-अस्त्र चलाया; उसने सब पर्वतों को तोड़ डाला। इसपर दशरथ ने माहेश्वर अस्त्र छोड़ा, जिसे देखकर (शुक्र का) वज्रास्त्र गलकर नष्ट हो गया। ८१ शुक्र अतिशय क्रुद्ध था। उसने एक तीक्ष्ण बाण निकाला। उस बाण से उसने तब रथ के धुरा को छेद डाला। ८२ अकस्मात धुरे को काटते ही, दशरथ ज्यों ही नीचे गिरने को था, त्यों ही कैकेयी ने दौड़ते हुए (आगे बढ़) हाथ लगाकर अक्ष (धुरे) को सम्हाला। ८३ वह रथ तो पर्वत के आकार वाला बड़ा था। उस (कैकेयी) ने उसके पूरे भार को अपने बाहु पर सम्हाल लिया। इधर वीरता के रंग में रंगा दशरथ इस घटना का समाचार नहीं जान पाया। ८४ (इसपर) दशरथ ने (भी) तीक्ष्ण बाण चलाया (और) कवि शुक्र के रथ को तोड़ डाला और उसे टुकड़े-टुकड़े कर अश्वों सहित युद्ध भूमि में गिरा दिया। ८५ जब शुक्र रथहीन हो गया, तो दशरथ ने सूर्य-मुख बाण निकाला और सोचा कि

याचें छेदीन शिर। कापटचमुकुटासहित पैं। ८६ मागुती विचारी अजनंदन। शुक्र तरी केवळ ब्राह्मण। याचा रक्षोनियां प्राण। मुकुट मात्र छेदावा। ८७ निमिष न लागतां गेला बाण। मुकुट पाडिला तळीं छेदून। भयभीत भृगुनंदन। पळता जाहला तेधवां। ८८ देव करिती जयजयकार। पळूं लागला दैत्यभार। जैसा महावात सुटतां समग्र। भूस उडे अंबरीं। ८९ रायें कोदंडासी घातली गवसणी। तूणीर ठेविला आवरण घालोनी। जैसा कुंडामाजी देदीप्य अग्नी। आच्छादित याज्ञिक। ९० दशरथ पाहे सावधान। तों कैकयीनें हात घालून। धरिला असे महास्यंदन। वर्तमान कळलें तें। ९१ आश्चर्य करी नृपवर। आजिचें युद्ध अनिवार। आम्हांसी जयलाभ समग्र। कैकयीनें दीधला। ९२ जैसें घर पडतां अकस्मात। निजबळें उचली बळवंत। तैसा कैकयीनें आजि रथ। सांवरिला रणांगणीं। ९३ खालीं उतरून दशरथ। प्रियेलागीं आलिंगित। म्हणे-दोन वर मागें त्वरित।

मैं इसके मस्तक को कपट मुकुट सहित छेद डालूँगा। ८६ (लेकिन) बाद में अजनन्दन दशरथ ने (फिर) सोचा कि शुक्र तो वस्तुतः ब्राह्मण ही है—(अतः) इसके प्राणों की रक्षा करते हुए इसके केवल मुकुट को काटा जाए; (क्योंकि ब्राह्मण अवध्य है।) ८७ बाण चला और उसने मुकुट को तल में छेदकर गिरा दिया–इसे क्षण भी नहीं लगा। तब भृगुनन्दन शुक्र भयभीत हो भाग गया। ८८ (यह देखकर) देवों ने जयघोष किया। दैत्यों की सेना ठीक वैसे ही भागने लगी, जैसे प्रचण्ड वायु के चलने लगते ही समूचा भूसा आकाश में उड़ जाता है। ८९ राजा ने धनुष को आच्छादित किया और जैसे कोई याज्ञिक (यज्ञकर्ता) प्रज्ज्वलित अग्नि को (यज्ञ) कुण्ड में आच्छादित कर रखता है, वैसे ही उसने तरकस को आवृत कर रक्खा। ९० दशरथ ने (जब) ध्यान से देखा तो उसे यह बात मालूम हो गयी कि कैकेयी ने हाथ डालकर उस महारथ को सम्हाल रक्खा है। ९१ राजा को आश्चर्य हुआ। (उसे प्रतीत हुआ कि) आज का युद्ध अनिवार (भीषण) था; उसमें कैकेयी ने ही हमें सम्पूर्ण जय का लाभ करा दिया। ९२ जैसे घर के अचानक ढह जाने पर कोई बलवान (पुरुष) उसे अपनी शक्ति से उठाए, वैसे ही आज कैकेयी ने रणांगण में (गिरते) रथ को सम्हाल लिया। ९३

एहि बुलि राजा सुखे बंचिला रजनी * उठिलन्त प्रभाते नृपति शिरोमणि
स्नान दान करिया बसिला सिंहासने * चौपाशे उपासि आछे पात्र मंत्रिगणे ३८७
सेहि बेला इन्द्र असुरत पाइया त्रास * त्रिदशे सहिते आइला नृपतिर पाश
देवे समे इन्द्रक देखिया नृपबर * गाव चालि उठि करि अनेक सादर ८८
बसिबाक दिलन्त इन्द्रक सिंहासन * त्रिदशक दिला आनि सुवर्ण आसन
देवे समे आसने बसिला पुरन्दर * पाद्य अर्घ दिया पूजिलन्त नृपवर ८९
नमस्कार करि राजा पुछिलन्त काज * राजाक सादरि मातिलन्त देवराज
शुनियोक नृपति आमार प्रयोजन * हारिलो त्रिदशे आमि असुरत रण ९०
महाबलवन्त आति असुर दुर्म्मति * खेदाया देवक काढ़ि लैला अम्रावती
तुमि बिने आमार सुहृद आन नाइ * आपद कालत एवे हुयोक सहाय ९१
देवतात अधिक तोमार पराक्रम * जगततो नृपति तोमाक नाहि सम
रणे जिनि सबे असुरक करि हत * त्रिदश देवक राजा स्थापियो स्वर्गत ९२
असुरत हारि लाज पाइलो देवगण * लैलोहो शरण असुरक करा रण
बिनय बचन आति शुनि बासवर * प्रणति पूर्ब्बक मातिलन्त नृपबर ९३
हैबाहो सहाय रणे मारिबो असुर * प्राणदान करिबो राखिबो स्वर्गपुर
हेन शुनि बासव हरिषमन भैला * देवगण सहिते स्वर्गक चलि गैला ९४
सूर्य्यबंशे राजा हेन नाहि एकोजन * प्राणदान खुजिलेओ हैबे निबर्त्तन

बाँटकर खा लेना ।। ३८६ ।। यह कहकर राजा ने सुख से रात काटी। सबेरे शिरोमणि नृपति उठे। स्नान-दान कर वे सिंहासन पर बैठे। चारों ओर मंत्रीगण और पात्र-मित्र बैठे हैं ।। ३८७ ।। उसी समय इन्द्र असुरों से त्रस्त होकर त्रिदश देवताओं के साथ नृपति के पास आया। नृपबर ने देवताओं के साथ इन्द्र को आते देखा तो उठकर उनकी आवभगत की ।। ८८ ।। इन्द्र को बैठने के लिए उन्होंने सिंहासन दिया और त्रिदश देवताओं के लिए स्वर्ण-निर्मित आसन दिये। देवताओं के साथ पुरन्दर ने आसन ग्रहण किया तो दशरथ ने उनकी पाद्य-अर्घ्य देकर पूजा की ।। ८९ ।। नमस्कार करने के उपरान्त राजा ने काम पूछा। देवराज ने सादर राजा को सम्बोधित किया। सुनो राजा, मेरा प्रयोजन सुनो। देवासुर संग्राम में मैं हार गया हूँ ।। ९० ।। यह दुराचारी असुर बड़ा ही बलवान है, इसने देवताओं को खदेड़ कर अमरावती छीन ली। तुम्हारे सिवा मेरा कोई मित्र नहीं—अब मेरी विपत्ति के समय मेरी सहायता करो ।। ९१ ।। तुम्हारा पराक्रम देवताओं से भी अधिक है, संसार में तुम्हारे समान दूसरा नृपति नहीं है। रण में असुर को वाण से मार कर त्रिदश देवताओं को स्वर्ग में स्थापित करो ।। ९२ ।। असुरों से हार कर देवता बड़े लज्जित हुए। तुम्हारी शरण ली है, अब असुर से युद्ध करो। वासव का विनय-वचन सुनकर नृपवर ने प्रणाम कर कहा ।। ९३ ।। रण में मैं सहायक बनूँगा और असुर को मार गिराऊँगा, देवताओं के प्राणों की रक्षा करूँगा और स्वर्गपुर को बचा लूँगा। ऐसा सुन कर इन्द्र प्रसन्न हुआ और देवताओं के साथ स्वर्ग चला गया ।। ९४ ।। सूर्यवंश में ऐसा एक भी राजा नहीं है जिससे प्राण भी दान मांगने पर किसी को विमुख लौटना पड़ा हो।

दशरथर स्वर्गयात्रा आरु असुर वध

अनन्तरे दशरथ नृपति प्रधान * सैन्य समे करिलन्त स्वर्गक पयाण ३९५
पूर्ब्बे स्वर्ग लैला बलि इन्द्रक खेदाइ * सिकालत विष्णु भैला देवर सहाय
पुनरपि स्वर्ग काढ़ि लैलन्त दानव * दशरथरूपे सहाय भैलन्त माधव ३९६
सैन्य समन्विते गैला राजा दशरथ * रथे चड़ि असुर सेनात उपगत
धनु धरि टंकार करिला महाबल * भये चमकिला आति असुरसकल ३९७
नाना अस्त्र नृपति लागिल बरिषित * शरे फुटि असुर भैगैल जर्ज्जरित
समुखे नापारि जानि असुर निस्खले * माया करि गैला कतो गगनमंडले ३९८
आकाशक गैया माया करिला बिस्तर * नाना अस्त्र बरषिला राजार उपर
हेन देखि ब्रह्मअस्त्र जुरिला गुणत * एतेकते असुरर माया भैला हत ३९९
महाबले राजा ब्रह्मअस्त्रक एरिल * बेगे ज्वलि असुरर हियात परिल
एको गोट बाणे हुया सहस्रेक बाण * लक्ष लक्ष असुर सेनार लैला प्राण ४००
परि गैल रणत असुर असंख्यात * उठिया लागिल पुनु असुरर माथ
आराधिया असुरे ब्रह्मात पाइ बर * ब्रह्मार अस्त्रत मृत्यु नाहि असुरर ४०१
सेहि हेतु ब्रह्मास्त्रत गोटेको नमरे * मारि पुनु पुनु उठि उठि रण करे
महाकोपे ब्रह्मबाण असुरे प्रहारे * जाके जाके राजात परय एकेबारे ४०२
रणत पंडित राजा नघाटन्त तात * ब्रह्मअस्त्र ब्रह्मबाणे करन्त बिघात
पाचे एक महा अस्त्र हानिया पठाइल * असंख्यात असुरक काटिबे लागिल ४०३

दशरथ की स्वर्गयात्रा और असुर वध

इसके बाद नृपतियों में प्रधान दशरथ अपनी सेना के साथ स्वर्ग रवाना हो गये ।। ३९५ ।। इससे पूर्व, इन्द्र को खदेड़कर जब (असुरों ने) स्वर्ग छीन लिया था, उस समय विष्णु देवताओं के सहायक बन गये थे । फिर (दुबारा) दानवों ने स्वर्ग छीन लिया तो दशरथ के रूप में माधव (भगवान्) सहायक बन गये ।। ३९६ ।। राजा दशरथ सेना के साथ गये और रथ में चढ़ कर असुर सेना से भिड़ गये । महाबली ने धनुष टंकार किया जिससे सारे असुर भय से चौंक पड़े ।। ३९७ ।। राजा विभिन्न प्रकार के अस्त्र बरसाने लग गये । वाण से बिंधे असुर जर्जरित हो गये । सामने असमर्थ हो कितने ही दुष्ट असुर माया कर गगनमंडल में चले गये ।। ३९८ ।। आकाश में पहुँच कर उन लोगों ने माया का बहुत विस्तार किया और राजा पर विभिन्न अस्त्र बरसाये । ऐसा देख कर उन्होंने धनुष पर ब्रह्म अस्त्र लगाया, इससे असुरों की माया जाती रही ।। ३९९ ।। राजा ने महाबल से ब्रह्म अस्त्र फेंका, वेग से जलते हुए वह जाकर असुर के हृदय पर लगा । एक वाण से वह सहस्र वाण बन गया और लाख-लाख असुर-सेना के प्राण उसने ले लिये ।। ४०० ।। रण में असंख्य असुर गिरे किन्तु पुनः असुरों के सिर जमने और इस प्रकार वे पुनः जीवित होने लगे । असुर ने ब्रह्मा की आराधना कर वर प्राप्त किया था कि ब्रह्मा के अस्त्र से असुर की मृत्यु नहीं होगी ।। ४०१ ।। इसी कारण ब्रह्मास्त्र से पूरा पूरा वह नहीं मरता । मरने के बाद भी फिर वह उठकर युद्ध करने लग जाता । असुर महाकोप से ब्रह्म वाण का प्रहार करने लगा और वह झुंड के झुंड राजा की सेना में आकर गिरने लगे ।। ४०२ ।। राजा रण में पंडित हैं और उससे नीचा नहीं देखते । वे ब्रह्मअस्त्र से ही ब्रह्मवाण का मुकाबला करते । पीछे एक महाअस्त्र फेंक कर मारा और

रथे चड़ि दशरथ रणत सुजान * काटिला दानवगण हानि चक्रबाण
हेन देखि असुरर वर वर बीर * दशन कामुरि कोपे झंकारिया शिर४०४
करिलेक नाना अस्त्रगण बरिषण * बाटते काटिया सबे करिलेक छन
हेन देखि असुर रणत अनिब्बार * पुनरपि शरबृष्टि करिला अपार४०५
बिन्धिलेक निसन्धि राजार कलेवर * बाणबिषे जर्ज्जरित भैला नृपबर
अधिक किटाइल राजा पाया शरचोट * महाकोपे हानिल गन्धब्र्ब अस्त्रगोट४०६
आकाश प्रकाशि शरपाट जाय चलि * असुर सेनात लगाइला खलमलि
महाबेगे गैया शर परम प्रचंड * बाणबिषे सेनाक करिला लंडभंड४०७
शर हानि रंग चाहि आछे महाराज * दैत्यर लागिल युद्ध आपोनार माज
गन्धब्र्ब अस्त्रर महा महिमा प्रचुर * मरे काटाकाटि करि समस्ते असुर४०८
शर हानि केहो कारो माथा बेलगावे * काहाको दोहार केहो करे खांडाघावे
कंकालत काटि काको करय दुखान * केहोजने बाणे हानि लवे कारो प्राण४०९
केहो घाड़ मोचारि पकाया छिंडे मंड * जाठीर प्रहारे कारो भसारय तुंड
चवरर चोटे केहो कारो दान्त सारे * कारो हिया छिरे केहो परशु कुठारे १०
केहो कारो नाक काण करे खान खान * केहो काको गैया कंकालत मारे हान
केहो बाणे हानि काटे उरु शिर कर * भुमित परिया केहो करे धरफर ११
बाणबिषे केहो पृथिवीत ढलि परे * आधाकाटा दैत्य केहो परिया बागरे
निदारुण शरे फुटि कारो प्राण जाय * मरो मरो बुलि कतो परिया डेराइ १२

उससे असंख्य असुर कटने लग गये ।। ४०३ ।। रण में कुशल दशरथ रथ पर चढ़कर चक्रवाण चलाते हुए दानवों को काटने लगे। ऐसा देखकर असुरों में बड़े-बड़े वीर भी दाँत से (होंठ) काट कर सिर झटकने लग गये ।। ४०४ ।। फिर विभिन्न प्रकार के अस्त्रों की वर्षा की और रास्ते में सभी को काट कर ध्वंस कर दिया गया। ऐसा देख कर रण में दुर्द्धर्ष असुरों ने फिर से अपार बाणों की वर्षा की ।। ४०५ ।। राजा के शरीर पर कोई ऐसा स्थान न बचा जहाँ बाण न चुभे हों। बाण के विष से राजा का शरीर जर्जर हो गया। बाणों का आघात पाकर राजा अधिक सन्नद्ध हो गये और अत्यन्त क्रोध से उन्होंने गन्धर्व अस्त्र फेंका ।। ४०६ ।। जब आकाश को प्रकाशित करता हुआ वह बाण चला तो असुरों की सेना में खलबली मच गई। वह परम प्रचंड बाण महावेग से जाकर अपने विष की ज्वाला से उस सेना को तितर-बितर करने लगा ।। ४०७ ।। बाण चलाने के उपरान्त महाराज कौतुक से देखने लगे कि दैत्यों में आपस में लड़ाई होने लग गई। गन्धर्व अस्त्र की बड़ी महिमा है। उसके कारण सारे असुर आपस में मारकाट मचाकर मरने लगे ।। ४०८ ।। बाण चलाकर कोई किसी का सिर शरीर से बिलग कर देता तो कोई किसी को खड्ग के आघात से दो टुकड़े कर डालता, किसी को कमर के पास से काट कर दो खंड कर डालता तो कोई बाण चलाकर किसी के प्राण ले लेता ।। ९ ।। किसी की गर्दन मरोड़ कर कोई उसका मुंड नोच फेंकता, नो कोई भाले की चोट से किसी का थूथन छेद डालता, किसी के दाँत कोई झाँपड़ मार कर गिरा देता तो कोई फरसे के प्रहार से किसी का कलेजा (तक) काट डालता ।। १० ।। कोई किसी के नाक-कान काट कर टुकड़े-टुकड़े कर डालता, तो कोई जाकर किसी की कमर पर चोट करता, कोई बाणों से किसी की जाँघ शिर और हाथ काट डालता तो कोई धरती पर पड़ा छटपटाता रहता ।। ११ ।। बाण के विष से मूर्छित होकर कोई जमीन पर लुढ़क पड़ता तो कोई अधकटा दैत्य दर्द से लोट पोट होने लगता। भीषण बाण से घायल होकर किसी के प्राण चले

केहो लर देय पलाइबाक नाहि स्थान * नृपतिर शरे खेदि खेदि लवे प्राण
असुरर तेजे रणभूमि गैल तल * मरे दैत्य दानव देवर कुतूहल १३
अस्त्र एरि अन्तरीक्षे आछे दशरथ * अन्यो अन्ये असुर आपुनि भैला हत
समस्ते असुर मरि गैल यमालय * राजार बिक्रम देखि देवर विस्मय १४
लक्षकोटि असुर क्षणेके भैल हत * लागिल चमक आति इन्द्रर मनत
येन मेघ गुचि भैल प्रसन्न आकाश * असुर मरिल देवे देखिल प्रकाश १५
अवशिष्ट दैत्य पलाइ गैल दशोदिश * दशरथ नृप मने परम हरिष
अनायासे नृपवरे जिनिलेक रण * जय जय शंखनाद करे देवगण १६
इन्द्र पद लैबे दुष्ट दैत्यगण आइल * आछोक इन्द्रपद निज प्राणको हराइल
पर श्री आशा करि गैल रसातल * रण जिनि पाचे दशरथ महाबल १७
बिपरीत प्रकाश करिल महाशय * तिमिर बिनाशि येन सूर्येर उदय
राजा रण जिनिलन्त देवर हरिष * शंखध्वनि करि पुरिलन्त दशोदिश १८
आनन्दे दुन्दुभि बाद्य बाजे असंख्यात * राजार शिरत सिंचिलन्त पारिजात
बखानन्त पुरन्दर राजार बिक्रम * धन्य धन्य दशरथ नृपति उत्तम १९
आमाको जिनिलो यिटो प्रचंड असुर * रणे जिनि नृपति करिला ताक चर
नाहि नुपजीब राजा तोमार समान * एहि बुलि इन्द्रे करिलन्त बहुमान २०
पूजिला त्रिदशे नृपतिर बाहुबल * राजाक मातिला पुनु देव आखंडल
राज्य राखि दिला मोक असुरक मारि * तोमार गुणक आमि शुजिते नापारि २१

जाते तो कितने ही डर के मारे "मरा मरा" कह कर चिल्लाते ।। १२ ।। कोई दौड़ लगाता लेकिन उसे भागने का ठौर नहीं मिलता; नृपति का बाण खदेड़-खदेड़ कर उसके प्राण ले लेता। इस प्रकार रणभूमि में असुरों का सारा रोब-दाब खत्म हो गया। दैत्य-दानव मर रहे हैं यह देखकर वेवताओं को कौतूहल होने लगा ।। १३ ।। अस्त्र फेंककर दशरथ अन्तरीक्ष में ठहरे हुए हैं। आपस में एक दूसरे पर प्रहार कर असुर स्वयं ही मर रहे हैं। सारे असुर मर कर यमालय चले गये। राजा का ऐसा पराक्रम देखकर देवताओं को बड़ा विस्मय हुआ ।। १४ ।। क्षण भर में लाखों करोड़ों असुर मर गये यह देखकर इन्द्र के मन में बड़ा विस्मय हुआ, मानों बादल छट जाने से सारा आकाश साफ हो गया। इस प्रकार असुरों को मरते देखकर देवताओं ने मानों प्रकाश देख लिया ।। १५ ।। मरने से बचे दैत्य दशो दिशाओं में भाग गये। राजा दशरथ मन ही मन बड़े हर्षित हुए। नृपवर ने अनायास ही रण में विजय प्राप्त कर ली। देवता जयध्वनि करते हुए शंखनाद करने लगे ।। १६ ।। दुष्ट दैत्य इन्द्र का पद हड़पने के लिए आए थे। इन्द्रपद पाना तो दूर उलटे उन लोगों ने अपनी जान ही गँवा दी। दूसरे की सम्पदा की आशा कर वे सब चौपट हो गये। रण-विजय के पश्चात् महाबली दशरथ वीरता की आभा से इस प्रकार उज्वल हो उठे मानों अन्धकार का नाश कर सूर्य का उदय हुआ हो। राजा ने रण जीता और देवता हर्ष-मग्न हुए। उन्होंने शंखध्वनि से दशों दिशाएँ भर दीं ।। १७-१८ ।। आनन्द से असंख्य दुन्दुभि बजने लगे और राजा के सिर पर पारिजात पुष्प बरसाये गये। पुरन्दर ने राजा के पराक्रम को बखाना—"उत्तम नृपति दशरथ धन्य हैं।" १९ ।। "मुझको जिस प्रचंड असुर ने हराया था, राजा ने रण में उसे हरा कर उसको चूर-चूर कर डाला। तुम्हारे समान कोई राजा आजतक उत्पन्न नहीं हुआ"—यह कर इन्द्र ने दशरथ का बहुत सम्मान किया ।। २० ।। देवताओं ने राजा के बाहुबल की प्रशंसा की। फिर इन्द्रदेव ने राजा से कहा—"असुर को मार कर तुमने मेरे राज्य की रक्षा की, तुम्हारे

पूर्ब्बे नारायणे येन बंचि दानवक * अमृतक पियाइलन्त देवतासबक
सेहिमते असुरक मारिया नृपति * रक्षा करि दिला मोक पुरी अम्रावती २२
तयु महायश राशि रँल त्रिभुवने * घुषिबेक तोमार कीर्त्तिक सर्ब्बजने
एहिमते राजाक प्रशंसि बारंबार * राजाक दिलन्त दिव्य बस्त्र अलंकार २३
दिला दिव्यरथ अष्ट घोटके सहित * वायुत अधिक महावेगे बिपरीत
रथ पाया भैल आति हृरिष बिस्तर * मनत सन्तोष दशरथ नृपबर २४

दशरथे कैकेयीक दुटा बर दिबलै अंगीकार करार विबरण

इन्द्र समे देवतात मागिया मेलानि * अयोध्याक आनन्दे आसिला महामानी
दिव्य रथे चड़ि दशरथ महाराज * प्रबेशिला गैया निज ओवारिर माज४२५
दिव्य सिहासनत बसिला राजा गइ * स्वामी आसिबार पाचे देखिया कैकेयी
सादरे प्रणाम आसि करिला सुन्दरी * आश्वासिला नृपति ताहाक हाते धरि २६
महारण करि श्रम पाइला नृपबर * ईषत कुंचित मुख परिल झामर
देखि महादइ नानामत सेवा करि * स्वामीर श्रमक दूर करिला सुन्दरी २७
नाना भावे नृपतिर चित्त सन्तोषिला * कैकेयीक चाइ राजा बचन बुलिला
सेवा करि सन्तोष कराइलि देवी मोक * खोज मोत जेहि लागे दिबो बर तोक २८
महादइ बोले सत्य करियोक आगे * तेवेसे मागिबो बर जेहि मोक लागे
शुनि सत्य अंगीकार करिला नृपति * सत्ये बोले येहि खोजा ताके दिबो सती २९

गुणों का ऋण मैं चुका नहीं सकता। प्राचीनकाल में जिस प्रकार नारायण ने दानवों को धोखा देकर सारे देवताओं को अमृत पिलाया था उसी प्रकार हे नृपति, तुमने असुर को मार कर मेरी अमरावती की रक्षा की। तुम्हारी महान् यशराशि त्रिभुवन में फैल गई। तुम्हारी कीर्त्ति को सभी लोग बखानते रहेंगे"। इस प्रकार बारबार राजा की प्रशंसा कर इन्द्र ने राजा को सुन्दर वस्त्र और अलंकार भेंट किये ॥ २१-२३ ॥ इन्द्र ने दशरथ को आठ घोड़ों का एक सुन्दर सा रथ दिया जिसका वेग वायु से तीव्र था। रथ पाकर राजा बड़े प्रसन्न हुए। इस प्रकार नृपवर दशरथ को मन में सन्तोष प्राप्त हुआ ॥ २४ ॥

दशरथ द्वारा कैकेयी को दो वर देने का वादा

इन्द्र सहित सारे देवताओं से विदा माँगकर, महामान्य दशरथ आनन्द से अयोध्या चले आए। सुन्दर रथ पर सवार हो महाराज दशरथ ने अपनी हवेली में प्रवेश किया ॥ ४२५ ॥ राजा दशरथ दिव्य सिंहासन पर जाकर बैठ गये। बाद में, मेरे पति आ गये हैं यह देखकर कैकेयी ने आकर उनको सादर प्रणाम किया। राजा ने उसका हाथ थाम कर उसको आश्वासन दिया ॥ २६ ॥ भीषण युद्ध करने के कारण महाराज दशरथ को काफी परिश्रम करना पड़ा था। उनका चेहरा झटक गया था और उसमें झुर्रियाँ आ गई थीं। यह देखकर महादेवी ने उनकी कई तरह से सेवा की। उस सुन्दरी ने पति की थकान को दूर किया ॥ २७ ॥ उसने विभिन्न प्रकार से नृपति के चित्त को सन्तुष्ट किया। कैकेयी की ओर देखते हुए राजा ने कहा— "हे देवी, तुमने मुझको सेवा के द्वारा सन्तुष्ट किया है इसलिए तुम मुझसे जो कुछ भी माँगोगी वही वर तुम्हें दूंगा" ॥ २८ ॥ तब महादेवी ने कहा, मेरे निकट सच्ची प्रतिज्ञा करो कि जो वर मैं माँगूंगी वही तुम मुझको दोगे। यह सुनकर राजा ने उनसे

कुजीत कैंकेयी पुछिलन्त माति आनि * बर दिबे चाहे राजा करि सत्य बाणी
कुजी बोले बर माव नलेबा एखन * यदि बर दिबाक राजार आछे मन ३०
समय पाइलेसे बर मागिबा राजात * शुनिया कैंकेयी बोले करि योरहात
शुनियोक प्रभु बोलो स्वरूप बचन * मोक बर दिबाक तोमार आछे मन ३१
एतिक्षणे तोमात नलैबो मइ बर * समयत खुजिले दिबाहा नरेश्वर
एहिमते दशरथ भार्जाये सहित * नानाविध भोग भुंजिलन्त मनोनीत ३२
पात्र मंत्रीसमे राज्य करे नृपवर * गैला काल बहि सात सहस्र बत्सर
अनन्तरे ग्रहगति दैवर बिपाक * महाव्रण गोट हुआ पीड़य राजाक ३३
गुह्यर भितरे व्रण भैला आति टान * बेदनात राजार संकले येन प्राण
शुखाइ गैल मुख पानी नाहिके जिभात * नाहिके चेतन येन पागल साक्षात ३४
पात्र मित्र पुरोहित आसिला सकल * महादइगण सब भैलन्त बिकल
निरन्तरे लोकर चिन्तार नाहि पार * प्राणर संशय आसि मिलिल राजार ३५
नाहि भात पानी एको हरिल चेतन * आसिलन्त बैद्य धन्वन्तरिर नन्दन
महामन्त्रे जारिया औषध दिला आनि * नृपतिक बैद्ये पाचे बुलिलन्त बाणी ३६
चाइबो तोमाक मइ करिया जतन * उपायासे रहे राजा तोमार जीवन
घिण एरि तोमार गुह्यत महाराज * मुख दिया हुपिया करोक पुंज बाज ३७
बैद्ये हेन उपदेश बचन बुलिला * अधिके राजार आवे बेदना मिलिला
इटो मोर कार्य साधिबेक कोनजन * चिन्ताबिषे अतिशय भैला अचेतन ३८
चेतन कराइल पाचे सबे मिलि धरि * राजार सम्मुख भैला कैंकेयी सुन्दरी
बोलन्त मूर्च्छित तुमि न हैबा नृपति * इ कार्य तोमार मइ साधिबो सम्प्रति ३९

सच्ची प्रतिज्ञा की—"हे सती, तुम जो कुछ भी माँगोगी वही दूँगा" ।। २९ ।। तब कुबड़ी मन्थरा को बुलाकर कैकेयी ने पूछा—"राजा ने मुझे सत्य-वचन दिया है, वह मुझको वर देना चाहते हैं । कुबड़ी ने कहा, माँ इस समय वर मत लो । यदि राजा का वर देने का मन है तो समय आने राजा से वह वर माँग लेना । यह सुनकर कैकेयी ने हाथ जोड़कर कहा, हे प्रभु सुनो, मेरा अपना वचन सुनो । मुझको वर देने को तुम्हारा मन हुआ है पर इस समय मैं तुमसे वर नहीं लूँगी । समय पर माँगने से हे नरेश्वर वह वर देना । इस प्रकार से दशरथ ने अपनी भार्या के साथ मनचाहा भोग-विलास किया ।। ३०-३२ ।। इस प्रकार राजा दशरथ अपने मंत्री तथा पात्रमित्रों के साथ राज्य करने लगे । सात हजार वर्ष बीत गये । इसके अनन्तर ग्रहों के फेर से या दैववश राजा के एक बहुत बड़ा फोड़ा हुआ जिससे उनको बड़ी पीड़ा पहुँची ।। ३३ ।। गुदा के भीतर फोड़ा पक गया, दर्द के मारे मानों राजा के प्राण निकल जाएँगे । मुँह सूख गया, जीभ पर नमी न रही । चेतना जाती रही मानों मूर्त्तिमान पागल हों ।। ३४ ।। पात्र-मित्र पुरोहित सभी आ पहुँचे । सारी महादेवियाँ व्याकुल हो गयीं । सभी लोगों में चिन्ता की सीमा नहीं रही कि राजा के प्राण संकट में हैं ।। ३५ ।। भोजन तथा जल के बिना उनकी चेतना जाती रही । धन्वन्तरी के समान नन्दन वैद्य आया । उसने महामंत्र से भस्म कर औषध दिया । बाद में वैद्य ने महाराजा से कहा—।। ३६ ।। तुमको मैं यत्नपूर्वक नीरोग करूँगा किन्तु उपाय से ही तुम्हारे प्राण बच सकते हैं । हे महाराज, यदि कोई घृणा त्याग कर मुँह से चूस कर तुम्हारी गुदा से पीप निकाल दे तो तुम्हारा रोग दूर हो सकता है ।। ३७ ।। वैद्य ने जब ऐसा उपदेश दिया तो चिन्ता के कारण राजा की पीड़ा और अधिक बढ़ गयी । मेरा यह कार्य कौन करेगा, यह सोचते हुए अतिशय चिन्ता रूपी विष से वे फिर अचेतन

कैकेयीर बाणी शुनि भैला सबे त्रास * किमत कार्यक सती करिलन्त सास
नृपतिर गुह्यत कैकेयी मुख दिल * बायु धरि देवी टान करिया हुम्पिल ४०
भोसरिल व्रण सबे पुंज भैल बाज * गुचिल बेदना स्वस्थ भैल महाराज
व्रणपीडा एराइया हरिष आति भैला * कैकेयीर मुख चाइ मातिबाक लैला ४१
सार्थक करिलो बिहा तोमाक सुन्दरी * महाव्रण बेदनात जाओं मइ मरि
तोमारेसे प्रसादे रहिल मोर प्राण * नाहि आन प्रिया आरो तोमार समान ४२
कराइला सन्तोष कर्म्म करि गरिहित * लैयो जेहि लागे बर मनर बांछित
शुनिया कैकेयी बाक्य बुलिला राजाक * पूर्ब्बे एक बर दिया आछाहा आमाक ४३
भक्ति देखि आरो बर दिबे खोजा मोक * सभार माजत सत्य करि बुलियोक
जेतिक्षण जिबा बांछो दिबा सेहि बर * सत्य करि बोला राजा सभार भितर ४४
ताके दिबो जिबा मोत खोजा येतिक्षण * हेन शुनि कैकेयीर तुष्ट भैला मन
बारम्बार राजा कैकेयीक दिया बर * दैवर निर्ब्बन्ध आति आछय पूर्ब्बर ४५
ताक एराइबाक लागि काहार शकति * आतपरे कथा आवे शुनिया सम्प्रति

पुत्र नोहोवात दशरथर असन्तोष आरु बशिष्ठर उपदेश

सात शत भार्या बिहा करिला नृपति * नभैल कहातो हन्ते पुत्र उतपति ४६
महा मनदुखे बसि गुणे महाशय * न भैल सन्तति करो किमत उपाय
नेराइलोहो मइ पित देवतार ऋण * नरहिल बंश मोर भैलो धर्महीन ४७

हो गये ।। ३८ ।। सब लोग मिल मिलाकर फिर उनको होश में लाये। सुन्दरी कैकेयी राजा के सामने आई। बोली, हे राजा तुम फिर अपना होश मत गँवाना, तुम्हारा यह कार्य मैं पूरा करूँगी ।। ३९ ।। कैकेयी के वचन सुनकर सब लोग डर गये। किस प्रकार इस सती ने यह कार्य करने का साहस किया। राजा की गुदा पर कैकेयी ने मुँह रखा—साँस रोककर देवी ने जोर से चूसा ।। ४० ।। फोड़ा फटकर उससे सारा मवाद निकल आया। पीड़ा दूर हो गयी और महाराज स्वस्थ हो गये। फोड़े की पीड़ा से मुक्त होकर वे बड़े प्रसन्न हुए और कैकेयी के मुख की ओर देख वे कुछ कहने को उद्यत हुए ।। ४१ ।। हे सुन्दरी, तुमसे मेरा विवाह सार्थक हुआ। इस महाव्रण की पीडा से मैं मर रहा था, तुम्हारी ही कृपा से मेरे प्राण बचे। हे प्रिये, तुम्हारे समान दूसरी कोई भी स्त्री नहीं है ।। ४२ ।। ऐसा अटपटा कार्य कर तुमने मुझको सन्तुष्ट किया है। अपने मन की इच्छा के अनुसार कोई भी वर मांग लो। यह सुनकर कैकेयी ने राजा से कहा, तुमने इससे पूर्व भी मुझको एक वर दे रखा है ।। ४३ ।। मेरी भक्ति देखकर तुम मुझे माँगने पर और वर दोगे ऐसा सभा के बीच सत्यवचन दिया है। जिस समय जो इच्छा होगी वही वर दोगे, सभा में खड़े होकर यह सत्यवचन बोलो ।। ४४ ।। "जब कभी माँगोगी जो भी माँगोगी वही दूँगा"—ऐसा सुनकर कैकेयी का मन प्रसन्न हुआ। बार बार राजा कैकेयी को वर देते हैं इसके पीछे दैव का लेखा पूर्व से बना हुआ है ।। ४४५ ।। उससे कतराने की शक्ति भला किसमें है। इसके बाद इसकी कथा आवेगी, अभी यह सुनो।

पुत्र न होने के कारश दशरथ का असन्तोष और वशिष्ठ का उपदेश

नृपति ने सात सौ नारियों से विवाह किया किन्तु किसी से भी पुत्र नहीं हुआ ।। ४४६ ।। बड़े दुःख में बैठे महाशय चिन्ता करने लगे—"सन्तान उत्पन्न नहीं हुई, अब कौन सा उपाय किया जाय। मैं पिता और देवताओं का ऋण न चुका सका,

एहिमते नृपति चिन्तित दिने राति * पाचे बशिष्ठक राजा आनाइलन्त माति
आनो मुनि समस्तक मातिया आनिल * सबाहाते आपोनार दुख निवेदिल ४८
न भैल आमार पुत्र शुना मुनिगण * मिछा राज्यभोग मोर निष्फल जीवन
श्राद्ध तर्पण यज्ञ करो अपर्यन्त * अपुत्रक देखि देव पितृ नलवन्त ४९
यत यज्ञ पितृ कर्म्म करो निते नित * बिष्ठात अधिक बुलि नलवे किंचित
पुत्रर निमित्ते यज्ञ करिलो बिस्तर * नाहि पुत्र सिओ ब्यर्थ भैल निरन्तर ५०
बहुकाले मोक अन्ध मुनि शाप दिल * सियो शाप मोत एतकाले नफलिल
मुनिरो बचन ब्यर्थ भैल मोर ठाइ * आछोक पुत्रर शोक दरशन नाइ ५१
हेन शुनि नृपतित पुछिल बशिष्ठ * केन बुलिलन्त मुनि कहा मोत निष्ठ
राजाइ बोलन्त मुनि शुना कहो सार * गैलो घोर अरण्यक मृग मारिबार ५२
मुनिपुत्र जल भरे ताहाक नजानि * प्रहारिलो शर हस्ती हेन मने मानि
सेहि शरे सिन्धु मुनि तेजिलन्त प्राण * देखि गैया भैलो मइ मृतक समान ५३
अन्धकर पाशे पाचे गैलो शव लैया * सकल बृत्तान्त तान्त निबेदिलो गैया
पुत्रर सन्तापे मुनि शापिलन्त मोक * मरिबि नृपति तइ पाया पुत्रशोक ५४
पुछिलो हरिष मइ तान शाप शुनि * केमने हैबेक पुत्र कैयो महामुनि
ऋष्यश्रृंगे यज्ञ आसि कराइबे तोमाक * तेबे हैबे पुत्र मुनि बुलिलन्त बाक ४५५
अन्धकर कथा यत कहिलो बशिष्ठ * कोथा आछे ऋष्यश्रृंग नजानोहो निष्ठ
आरो एक कथा कहो शुनिया सम्प्रति * दुर्ब्बासा ऋषिक पाइ करिलो भकति ४५६

मेरा वंश नहीं रहा अतः मैं धर्महीन हो गया" ।। ४४७ ।। इस प्रकार राजा रातोदिन चिन्तित रहने लगे। बाद में राजा ने वशिष्ठ को बुलवा भेजा। अन्य सब मुनियों को भी बुलवा भेजा। सभी से उन्होंने अपना दुख कह सुनाया ।। ४८ ।। हे मुनिगण, सुनो, मेरे कोई पुत्र नहीं हुआ। अतः यह राज्यभोग करना मेरे लिए व्यर्थ है, मेरा जीवन निष्फल है। आज तक श्राद्ध, तर्पण, यज्ञ जो कुछ भी मैंने किया है मुझको अपुत्रक देखकर मेरे पुरखों ने और देवताओं ने उनको ग्रहण नहीं किया है ।। ४९ ।। जितने भी यज्ञ और पितृ-कर्म आदि मैं नित्य-प्रति करता रहा उनको विष्ठा से अधिक न समझ कर उन्होंने ग्रहण नहीं किया। पुत्र के निमित्त भी विस्तार पूर्वक यज्ञ किया। पुत्र नहीं हुआ और वह भी निरन्तर व्यर्थ ही गया ।। ५० ।। बहुत दिनों पहले अन्ध मुनि ने मुझको शाप दिया था वह शाप भी इतने दिनों में नहीं फला। मेरे लिए मुनि का वचन भी व्यर्थ हो गया। पुत्रशोक पाना तो दूर पुत्र का दर्शन ही अभी तक मुझे नहीं हो सका ।। ५१ ।। ऐसा सुनकर वशिष्ठ ने राजा से पूछा, मुनि ने क्यों ऐसा कहा मुझसे सच-सच बताओ। राजा ने कहा, सुनो मुनि, संक्षेप में कहता हूँ। एक बार घोर अरण्य में मैं मृग का शिकार करने के लिए गया ।। ५२ ।। मुनिपुत्र पानी भर रहा है यह न जानकर, हाथी जानकर मैंने उस पर बाण से आघात किया। उसी बाण से सिन्धु मुनि ने प्राण त्याग दिया। जाकर उसे देखने के बाद मैं मृत के समान हो गया ।। ५३ ।। इसके पश्चात् वश लेकर मैं उसके पिता अन्ध मुनि के पास गया। उनसे जाकर मैंने सारा विवरण कह सुनाया। पुत्र के शोक से उस अन्धे मुनि ने मुझको शाप दिया––ऐ राजा, तू (भी) पुत्र शोक से मरेगा ।। ५४ ।। उनका शाप सुनकर मैंने हर्ष से पूछा, हे महामुनि, बताओ मुझको पुत्र कैसे होगा। मुनि ने कहा, ऋष्यश्रृंग आकर तुम्हारा यज्ञ करेंगे तभी तुमको पुत्र होगा ।। ४५५ ।। इस प्रकार दशरथ ने वशिष्ठ से अन्ध मुनि की सारी बातें बता दीं। ऋष्यश्रृंग कहाँ हैं यह ठीक-ठीक मालूम नहीं। और एक बात बताता हूँ।

बीजी वस्तु जोईए जेह, शकट भरीने लीधी तेह,
प्रधानने कहे राजा वात, पूर्वदेश जजो साक्षात् । १५ ।
समुद्र बेटमां रहेजो जई, अन्य कोई जेम जाणे नहि,
त्यां वर-कन्याने परणावजो, हुं तेडावुं त्यारे आवजो । १६ ।
एवो प्रपंच करीने राय, वर-कन्याने कर्यां विदाय,
निशा समे चाल्या निरधार, पवनवेगे खेड्या तोखार । १७ ।
पूर्व समुद्रने कांठे जई, नावमांहे बेठा सज्ज थई,
समुद्रमध्ये राख्युं वहाण, अथाग जळ ज्यां छे निर्वाण । १८ ।
अर्धकोशनुं मोटुं नाव, रचना मंदिर केरो भाव,
रह्या सरव ते ठामे ठरी, चार दिवस वीत्या अनुसरी । १९ ।
रावणने ते जाण ज थयुं, सागरमां जे वहाण ज रह्युं,
दशमुखने थयो क्रोध अपार, हवडां जईने मारुं ठार । २० ।
रावण चाल्यो पामी त्रास, पंखीवत् ऊड्यो आकाश,
निशा समे ते आव्यो त्यांह्य, वहाण छे जे सागर मांह्य । २१ ।
असुरे लाग जोई सरवदा, कन्या काढी लीधी तदा,
गदा एक मारी निरवाण, भांगी मूको कीधुं वहाण । २२ ।

दूसरी वस्तुएँ जितनी चाहिए थीं, उतनी गाड़ी में भरकर लीं (गयीं)। (फिर) राजा ने प्रधान से यह बात कही—'(तुम) स्वयं पूर्व देश में (की ओर) जाओ। १५। समुद्र के एक टापू (द्वीप) में जाकर रहो, जिससे अन्य कोई यह जान न पाए। वहाँ वर और वधू का विवाह कराओ (और) जब मैं बुलाऊँ तब आओ'। १६। ऐसा छल-प्रपंच करके राजा ने वर और वधू को बिदा किया। रात के समय वे निश्चय-पूर्वक चले गये। उन लोगों ने घोड़ों को वायु-वेग से दौड़ाया। १७। पूर्व समुद्र के किनारे जाकर वे सुसज्ज होकर नौका में बैठे। अन्त में समुद्र के मध्य में उन्होंने नौका को रक्खा, जहाँ अथाह पानी है(था)। १८। वह नौका आधा कोस बड़ी थी। उसकी रचना मन्दिर की-सी थी। उस स्थान पर वे सब रहे। इसके बाद चार दिन बीत गये। १९। (परन्तु) सागर में जिस प्रकार नौका रही, उसका ज्ञान रावण को हो ही गया। (तब) दशमुख रावण को अपार क्रोध आया। (उसने सोचा) मैं अभी जाकर (उन्हें) जान से मार डालता हूँ (मार डालूँगा)। २०। रावण आकुल होकर चला। वह पक्षी की तरह आकाश में उड़ा। रात के समय वह वहाँ आया, जहाँ सागर के मध्य में नौका थी। २१। उस राक्षस ने पूरा मौका देखकर वधू को (नौका में से) निकाल लिया

कन्या लेई चाल्यो दुर्मति, दैव तणी नव जाणे गति,
लंकामां आव्यो ते राय, पेटीमां घाली कन्याय। २३।
एक मच्छने सोंपी तेह, जत्न करीने राखजे एह,
मच्छे बेटमां पेटी धरी, चारो चरतो जोतो फरी। २४।
रावणे जाण्युं रिपु क्षे थयो, मन हरखीने मंदिर गयो,
मागी ब्रह्मानी आज्ञाय, नगरमांहे लावीश कन्याय। २५।
हरि-इच्छा मोटी बळवंत, तेनो कोई न जाणे अंत,
जेनी साह्य करे जगदीश, सकळ दुःख वामे ते दीश। २६।
नाव भंग ते ज्यारे थयुं, सर्वे जळमां बूडी गयुं,
एक ऊगर्या दशरथ राय, साह्य करी श्रीवैकुंठराय। २७।
वहाण पाटियुं आव्युं हाथ, दशरथ बाझ्या ते संगाथ,
सुगम समीर थयो तेणी वार, आवी छीप्युं बेट मोझार। २८।
जे ठेकाणे पेटी हती, त्यां आव्या दशरथ महामति,
मीन गयो छे करवा आहार, दशरथ आव्या बेट मोझार। २९।

और जोर से एक (बार) गदा मारकर नौका को तोड़ डाला। २२। वह दुर्बुद्धि राक्षस कन्या को लेकर चला। दैव की गति जानी नहीं जाती। एक पेटी में कन्या को रखकर वह लंका में आ गया। २३। उसने वह (पेटी) एक मत्स्य को सौंप दी (और कहा—) 'इसे यत्न-पूर्वक रखो।' मत्स्य ने वह पेटी एक टापू में रखी और इधर-उधर घूमते हुए वह चारा खाता हुआ उसे देखता रहता। २४। रावण ने जान (समझ) लिया कि शत्रु का क्षय हो गया (अतः) मन में वह आनन्दित होकर घर (प्रासाद) गया। (उसने सोचा कि) ब्रह्मा की आज्ञा माँगकर मैं कन्या को नगर में लाऊँगा। २५। (परन्तु) हरि की इच्छा बलवती होती है। कोई उसका अन्त नहीं जानता। जगदीश जिसकी सहायता करता है, उसके सब दुःख उसी स्थान पर नष्ट हो जाते हैं। २६। जब नौका भंग हो गयी, तो सब (लोग) पानी में डूब गये। (लेकिन) वैकुण्ठराय भगवान ने सहायता की (जिससे) एक (मात्र) दशरथ (ऊपर आकर) बच गये। २७। नौका का (एक) तख्ता उसके हाथ आया, तो दशरथ उससे सट (चिपक) गये। उस समय हवा (उनके) अनुकूल हुई। इसलिए वह तख्ता टापू में आकर छिप गया। २८। (इस प्रकार) जिस स्थान पर पेटी थी, उसी स्थान पर महामति दशरथ आ गये। (इधर) वह मत्स्य भोजन करने गया, (उधर) दशरथ टापू में आ गये। २९।

दीठी पेटी पासे गया, उघाडतामां विस्मे थया,
कौशल्या कन्या सर्वदा, अजनंदन जोई हर्ख्या तदा । ३० ।
एटले नारद आव्या त्यांह्य, वर-कन्या बेठाँ छे ज्यांह्य,
गांधर्वविवाह मुनिए करी, परणाव्यां आशिष ऊचरी । ३१ ।
वर-कन्यानी प्रत्ये एव, मुनिए वचन कह्युं ततखेव,
तमो दंपती मंगळरूप, थशे पुत्र त्रिभुवनभूप । ३२ ।
तमारा भाग्य तणो नहि पार, रमा रमण लेशे अवतार,
एक पहोर रहेजो आ ठार, पछे जशो निज नगर मोझार । ३३ ।
बे जण घाल्यां पेटीमांह्य, हती तेम अडकावी त्यांह्य,
धीरज राखजो मनमां सही, नारद चाल्या एवुं कही । ३४ ।

वलण (तर्ज बदलकर)

नारद चाल्या धीरज आपी, परणावी वर-कन्याय रे,
कहे दास गिरधर ए ईश्वर इच्छा, ते केम मिथ्या थाय रे ? । ३५ ।

* * *

उस पेटी को देखकर वे (उसके) पास गये । (उसे) खोलने पर वे चकित हो गये । तब कौसल्या वधू को देख कर अजनन्दन दशरथ आनन्दित हो गये । ३० । इतने में नारद वहाँ आये, जहाँ वर और वधू बैठे थे । मुनिवर ने उन्हें आशीर्वाद देते हुए गान्धर्व विवाह पद्धति से उनका परिणय कराया । ३१ । मुनि नारद ने वर और वधू के प्रति तत्क्षण यह वचन कहा—‘ तुम दम्पती (पति-पत्नी) मंगल-रूप हो; त्रिभुवन का राजा तुम्हारा पुत्र होगा । ३२ । तुम्हारे भाग्य का पार नहीं है । रमारमण (भगवान् विष्णु) तुम्हारे यहाँ अवतरित होंगे । एक प्रहर भर इस स्थान पर ठहरो—बाद में अपने नगर में जाओगे ’ । ३३ । (तदनन्तर) उन्होंने उन दोनों को पेटी में रखा और उस पेटी को जैसी थी वैसी बन्द कर दिया । ‘ मन में धीरज रखो ’—ऐसा कहकर नारद चले गये । ३४ ।

वर-वधू का विवाह कराकर और उन्हें धीरज देकर नारद चले गये । गिरधरदास कहते हैं—यह ईश्वरेच्छा है; वह कैसे मिथ्या (झूठी) हो सकती है ? । ३५ ।

* * *

अध्याय–७ (ब्रह्मा के साथ जाकर पृथिवी-देवतादिक का क्षीरसागर में नारायण से प्रार्थना करना)

राग धनाश्री

सुणो श्रोता विवेकी जंन, रूडी रामकथा पावंन,
मुनि दशरथने परणावी, गया कुशळ वात जणावी । १ ।
हवे लंकामां ते दीश, सभा मांहे बेठो दशशीश,
विधि साथे हसीने वचन, बोल्यो मंदबुद्धि दशानन । २ ।
कर्युं वचन तमारुं फोक, कोण बळियो हुंथी त्रिलोक,
कर्यो लग्न तणो में भंग, मार्यो दशरथ बहु जनसंग । ३ ।
कन्या हरण करीने लाव्यो, निरभे थकी पाछो आव्यो,
विधि बोल्या हसीने वाण, सुण रावण साचुं जाण । ४ ।
लख्या अंक मटे नहि एह, वर-कन्या परण्या तेह,
त्यारे रावण कहे केम मानुं? मारे हाथे कर्युं नथी छानुं । ५ ।
जो परण्यां होय वर-कन्याय, तो जे मागो ते आपुं न्याय,
विधि कहे जो थयां हशे लगन, तो हुं मागीश थईने मगन । ६ ।

अध्याय–७ (ब्रह्मा के साथ जाकर पृथिवी-देवतादिक का क्षीरसागर में नारायण से प्रार्थना करना)

श्रोताओ, विवेकवान् लोगो, (यह) सुन्दर पवित्र रामकथा सुनो। नारद मुनि ने दशरथ का विवाह कराया और वे कुशल-वार्ता बताकर चले गये । १ । अब उस दिन लंका में दशानन रावण (राज) सभा में बैठा था। वह मन्दबुद्धि रावण हँस कर विधाता से बोला । २ । 'तुम्हारा वचन मैंने व्यर्थ कर डाला। त्रिभुवन में मुझसे कौन बलवान् है? मैंने विवाह को भंग कर डाला और अनेक लोगों सहित दशरथ को मार डाला । ३ । कन्या (वधू) को हरण कर लाया और निर्भय होकर वापस आया।' (तब) विधाता ने हँस कर यह बात कही, 'रावण, सुनो। यह सत्य समझ लो; (यह) लिखा अंक (भाग्य में लिखित बात) मिटता नहीं। वर और वधू का विवाह हो गया (है)।' तब रावण ने कहा—'(यह मैं) कैसे (सत्य) मानूँ? मेरे हाथ से किया (काम) छिपा नहीं है । ४-५ । यदि वर और वधू का विवाह हुआ हो, तो जो न्याय (संगत बात) माँगोगे, दूँगा।' (इसपर) विधाता ने कहा—'यदि विवाह हुआ (सिद्ध) होगा, तो मैं अति प्रसन्न होकर माँगूँगा'। ६ ।

सुणी ऊठ्यो तदा लंकेश, जे अधरमी अमंगळ वेश,
ते समुद्रनी तीरे आव्यो, पेला मच्छने पासे बोलाव्यो । ७ ।
लाव्य पेटी में आपी जेह, लेई जाऊं मंदिर तेह,
चाल्यो मच्छ महाबळ वापी, तत्काळ ते आणी आपी । ८ ।
सहु देखे सभाना जन, पेटी लईने आव्यो दशानन,
सभामांहे मूकी तेणी वार, मनमांहे छे हरख अपार । ९ ।
उघाडीने जुए जेटले, वर-कन्या दीठां तेटले,
महा मनोहर जेनो वेश, देखी विस्मे थयो लंकेश । १० ।
पछी क्रोध करी तेणी वार, करमां खडग ग्रह्युं निरधार,
एथी शत्रु थशे उत्पन्न, माटे एने पमाडुं पतन । ११ ।
मारवाने ऊठ्यो जेटले, ब्रह्मा आवी ऊभा तेटले,
तें आप्युं' तुं मुजने वचन, ते पाळ हवे राजन । १२ ।
वर-कन्या जो परण्यां होय, जे मागे ते आपुं सोय,
में कह्युं ते थयुं छे साचुं, माटे आप्य हुं तुजने जाचुं । १३ ।
कहे दुष्ट ना जीवता मूकुं, वेरी हाथ आव्यो केम चूकुं ?
ए विना जे मागो ते आपुं, आज शीश हुं एनुं कापुं । १४ ।

यह सुनकर लंकाधिपति रावण उठा—वह अधर्मी था और अमंगल वेश पहने हुए था। वह समुद्र-तट पर आ गया और (तदनन्तर) उसने उस मत्स्य को पास बुलाया। ७। (उसने कहा)—'मैंने जो पेटी दी थी, उसे लाओ। मैं उसे मन्दिर (प्रासाद) में ले जाता हूँ (जाऊँगा)।' (तब) वह महाबलवान् मत्स्य चला गया और उसने तत्काल (उस पेटी को) लाकर दिया। ८। सभा के सब लोगों ने देखा—रावण पेटी ले आया। उस समय उसने सभा में पेटी छोड़ी (रखी), तो उसके मन में अपार आनन्द था। ९। ज्यों ही खोलकर देखा, त्यों ही (उसमें) वर और वधू को देखा। उनका वेश अति मनोहर था। (उन्हें) देखकर लंकेश रावण विस्मित हो गया। १०। बाद में उस समय क्रोध करके उसने निश्चयपूर्वक खड्ग हाथ में लिया। (उसने सोचा—) इनसे (मेरा) शत्रु उत्पन्न होगा, इसलिए इन्हें मैं नष्ट कर डालता हूँ। ११। ज्यों ही वह उन्हें मार डालने उठा, त्यों ही ब्रह्माजी आकर खड़े हो गये। (उन्होंने कहा)—' हे राजन्, तुमने मुझे अभिवचन दिया (है); अब उसका पालन करो। १२। (तुमने कहा था कि) यदि वर और वधू का विवाह हुआ हो तो जो माँग लिया जाए, वह (तुम्हें) मैं दूँगा। (अब) मैंने जो कहा, वह सत्य हुआ है। इसलिए मैं तुमसे जो माँगता हूँ,

कौशल्याए सुण्यां वचन, त्यारे थरथर ध्रूजे तन,
आपे धीरज दशरथराय, शाने अबळा करे छे चिंताय ? । १५ ।
हुं छुं क्षत्री केरो तंन, शुद्ध सूरजकुळ पावंन,
आवे मारवा जो आ दीश, खूटी नाखुं एनां दश शीश । १६ ।
एम दशरथ धीरज दे छे, विधि रावण प्रत्ये कहे छे,
आप्य माग्युं मुने आ वार, तारो थशे जश विस्तार । १७ ।
एम वीनवता विधि वाणी, एवे आव्यां मंदोदरी राणी,
कह्यां नीति वचन संबंध, समजाव्यो असुर मद-अंध । १८ ।
स्वामी एने मारे शुं थाय ? काळ विश्व सकळने खाय,
आवरदाए सहु जन मरे, तेमां ए बापडां शुं करे ? । १९ ।
आगे भूप मोटा चक्रवरती, जेनी आण पृथ्वीमां फरती,
ते समे पामी काळे ग्रह्या, नथी अमर कोईए रह्या । २० ।
एवुं जाणीने हे राजन, आपो ब्रह्माने माग्युं वचन,
सुणी राणी तणो प्रतिबोध, ऊतर्यो रावणनो क्रोध । २१ ।

वह मुझे दो ' । १३ । (तब रावण ने) कहा—' दुष्ट को मैं जीवित नहीं छोड़ता (छोड़ूँगा) । वैरी हाथ आया तो (उसे) कैसे चूकूँ (छोड़ दूँ) ? इसके सिवा जो माँगोगे, वह देता हूँ (दूँगा) । आज इसका सिर मैं काटता हूँ (काटूँगा)' । १४ । कौसल्या ने ये बातें सुनीं, तो उसका शरीर (भय से) थरथर काँपने लगा । तब दशरथ राजा ने (उसे) धीरज दिया और कहा—' हे स्त्री, तुम चिन्ता क्यों कर रही हो ? । १५ । मैं शुद्ध (पवित्र) सूर्यवंश में उत्पन्न क्षत्रिय का पुत्र हूँ । यदि इस समय (मुझे) यह मारने आए तो मैं इसके दसों मस्तक काट डालूँगा' । १६ । दशरथ (इधर) कौसल्या को धीरज बँधा रहा है, तो उधर विधाता रावण से कहता है—' इस समय मैं जो माँगूँ, वह मुझे दो; तुम्हारी कीर्ति विस्तार को प्राप्त होगी ' । १७ । विधाता के इस प्रकार (रावण से) विनती करने पर रानी मन्दोदरी उस समय (वहाँ) आयीं । उन्होंने नीति के सम्बन्ध में वचन कहे और मदान्ध असुर (रावण) को समझाया । १८ । (उसने कहा—) 'स्वामी, इन्हें मारकर क्या होगा ? काल सारे विश्व को खा जाता है । आयु (के अन्त) में सब लोग मरते हैं । उनमें यह बेचारा क्या करे ? । १९ । पहले भी (पूर्वकाल में) बड़े चक्रवर्ती राजा, जिनकी सत्ता पृथ्वी भर पर चली, काल द्वारा पकड़ लिये गये । उस समय, किसी के रखने (रक्षण करने) पर भी वे अमर नहीं (बने) रहे । २० । ऐसा जानकर हे राजन्, (ब्रह्मा का) माँगा

सोंप्यां विधिने वर-कन्याय, रंगमहेलमां रावण जाय,
ब्रह्माए पछी देवनी साथ, पेटी पहोंचाडी आपी हाथ । २२ ।
ते मूकी गया पुर मांहे, अज राजा तणुं घर ज्यांहे,
पिता पुत्रने जोई हरख्यो, वधू सहित आव्यो ते नीरख्यो । २३ ।
कही दशरथे मांडी वात, अथ इति थई जे ख्यात,
एम दशरथ आव्या घेर, एवी अकळ ईश्वरनी पेर । २४ ।
एक समे दशानन शूर, नीकळचो पृथ्वीमां भूर,
आव्यो अलकापुरीनी पास, दीठी सुंदरी रूप प्रकाश । २५ ।
छे कुबेरना पुत्र ज तणी, वधू अंगनी शोभा घणी,
तेने झाली दशानन अंध, कामे भूल्यो विवेकसंबंध । २६ ।
ते सतीने चढचो मन कोप, बोली लज्जा करीने लोप,
अल्या वृद्ध, शुं आचरे आम? तुं श्वशुर पिताने ठाम । २७ ।
तोये मान्युं नहि दशशीश, त्यारे अबळाने चढी रीस,
पछी तेणीए दीधो शाप, तुं भोगवजे तारुं पाप । २८ ।

हुआ वचन उन्हें दो (अपना वचन पूरा करो)।' रानी का यह उपदेश सुनकर रावण का क्रोध उतर गया। २१। तब रावण ने विधाता को वर और वधू सौंप दिये और वह रंगमहल में गया। तदनन्तर ब्रह्माजी ने देवों के हाथों में पेटी देकर पहुँचवा दी। २२। वे (पेटी को उस) नगर में छोड़ गये जहाँ अज राजा का घर (प्रासाद) था। पिता (अपने) पुत्र को देखकर आनन्दित हो गये। वह वधू-सहित आया है, यह भी उन्होंने देखा। २३। जो बात (घटना) प्रख्यात हो गयी थी, उसे दशरथ ने अथ से इति तक (पिता से) कहा। इस प्रकार दशरथ (अपने) घर आये। ईश्वर की रीति (करनी) ऐसी अगम्य होती है। २४। एक समय (यह) शूर दशानन (रावण) पृथ्वी पर घूमने निकला। वह (कुबेर की) अलकापुरी के पास आया। (वहाँ) उसे एक उज्ज्वल रूपवाली सुन्दरी दिखायी दी। २५। वह कुबेर के पुत्र की वधू थी। उसके शरीर की शोभा (सुन्दरता) बहुत थी। काम के कारण दशानन विवेक के बारे में (विचार) भूल गया और अन्ध (विवेकहीन) होकर उसने उसे पकड़ लिया। २६। तो उस सती के मन में क्रोध आया। वह लज्जा (संकोच) को छोड़कर (अर्थात् प्रकट रूप में) बोली, 'अरे बूढ़े, यहाँ तू क्या करता है? तू (मेरे लिए) श्वशुर-पिता के स्थान पर है'। २७। दशानन इससे नहीं माना, तो उस नारी को (अधिक) गुस्सा आया। बाद में उसने (रावण को) शाप दिया—'तू अपने पाप (के फल)

आवुं कर्म करे भयरहित, तारो क्षे थाजो कुळसहित,
एवुं सांभळी लाज्यो राय, तेने मूकी चाल्यो महाकाय । २९ ।
एम अधरम करतो असुर, पृथ्वीमांहे भरतो भूर,
अति वाध्यो बळ अहंकार, एनां पाप तणो नहि पार । ३० ।
धरा उपर असुर अनेक, फरे कहेतां न आवे छेक,
मार्या अनेक मुनिवर ब्रह्म, करे राक्षस हिंसाकर्म । ३१ ।
शुभ जज्ञ कोणे नव थाय, ते देखी भंग करवा जाय,
गौब्राह्मण पाम्यां कष्ट, दुःख दे छे दानव नष्ट । ३२ ।
बंधीखाने पड्या छे देव, ते तो सेवा करे नित्यमेव,
थयो पृथ्वी उपर अति भार, सहेवायो नहि निरधार । ३३ ।
वसुधा गौरूपे थई, ते प्रजापतिने शरणे गई,
कह्यां दीन वचन अपार, नथी सहेवातो में भार । ३४ ।
एवे देव सकळ त्यां आव्या, साथे शिवजीने तेडी लाव्या
विधि कहो कंई हवे उपाय, जेथी दुष्टनो नाश ज थाय । ३५ ।

को भोग । भयरहित होकर तू ऐसा काम कर रहा है, तो तेरा कुलसहित नाश हो जाए'। यह सुनकर राजा (रावण) लज्जित हुआ। उसे (स्त्री को) छोड़कर वह महाकाय (रावण) चला गया। २८-२९। वह राक्षस ऐसा अधर्म करता, पृथ्वी पर दूर-दूर (तक) भ्रमण करता। उसका बल एवं अहंकार अति बढ़ गया। उसके पाप का कोई पारावार नहीं (रहा) था। ३०। पृथ्वी पर अनेक राक्षस घूमा करते। उनकी संख्या का अन्त कहने में नहीं आ सकता। उन्होंने अनेक ऋषियों—ब्राह्मणों को मार डाला। वे राक्षस हिंसाकार्य किया करते थे। ३१। किसी का शुभ यज्ञ (पूरा) नहीं होता था, (क्योंकि) उसे देखकर वे (राक्षस) उसे भंग करने जाते। (उनसे) गो-ब्राह्मण कष्ट को प्राप्त हो गये। वे मुए दानव (इस प्रकार) दुःख पहुँचाते थे। ३२। देव बन्दीवास में पड़े हैं। वे तो नित्य ही उसकी सेवा किया करते हैं। पृथ्वी पर अतिशय (पाप का) भार हो गया। वह निश्चय ही (उसके द्वारा) नहीं सहा जाता। ३३। (तब) पृथ्वी गौ-रूप धारण कर प्रजापति की शरण में गयी। उसने (उनसे) अपार दीन वचन कहे—मुझसे यह भार सहन नहीं किया जाता। ३४। इसी बीच सब देव वहाँ आये। साथ में वे शिवजी को बुला लाये। (उन्होंने विधाता से कहा—)'हे विधाता अब, कोई उपाय बताओ, जिससे इन दुष्टों का नाश ही हो जाए। ३५।

धर्मोत्तरुडु, गृताध्वरुडु, श्रीकरुडु । धर्मशास्त्रपुराण तात्पर्यपरुडु
अजुनि नंदनुडु बाल्यादिगा नियति । ब्रजल बालिंचिन परमपावनुडु
जंभारिकै पोयि शंबरासुरुनि । दंभंबणगिंचि सुत्रमुनिचेत
मंदारपुष्पदामंबु गैकॉन्न । यिंदुमतीपुत्रु डिनुकुलाधिपुडु
तेजंबु गांतियु दॅगुवयु नेर्पु । राजसंबुनु नुदारतयु धैर्यंबु
मॉदलैन सद्गुणंबुल प्रोदियगुचु । नुदयार्कुगति दन युग्रतेजंबु
दीपितंबै येडुदीवुल बर्व । भूपालतिलकमै पॉलुपॉन्द नेलु
नन्नरनाथु कुलांगनामणुलु । मुन्नूटयेबंड्रु; मुख्यलैयंदु
नचलित सौशीलययैन कौसल्य । कुचकुंभ निर्जितकोक यौकैक२५०
यनघचरित्रयौ ना सुमित्रयुनु । विनुतिकॅक्किरि द्रयीविद्यलोयनग
निलमीद नतनिकि हितपुरोहितुलु । पॉलचु वसिष्टादि पुण्यसंयमुलु
अनघात्मुडु धृष्टि यनुवाडु विजयु । डनुवाडु सिद्धार्थुडनुवाडु मरियु
नर्थसाधकुडु जयंतुडु नीति । थीर्तु डशोकुंडु धीमंतुडैन
मंत्रपालकुडु सुमंत्रुडु ननग । मंत्रुलुगलरॅनमंड्रु नातनिकि
नामंत्रुलंदरु ननोन्यहितुलु । स्वामिकार्य विचार चतुर मानसुलु

(वे) धर्मविरत या श्रेष्ठ, कृताध्वर (जिसने यज्ञ किए हों), श्रीकर, धर्म-शास्त्र-पुराणों के तात्पर्य के ज्ञाता, अज के पुत्र, बाल्यावस्था से ही नियमानुसार प्रजा पर शासन करनेवाले परम पावन (स्वभाव वाले), इन्द्र के काम पर जाकर, शंबरासुर के दम्भ का भंग कर, सुत्राम (इन्द्र) से मन्दार-पुष्पों की माला को प्राप्त करने वाले थे। वे इन्दुमती के पुत्र और इस (प्रख्यात) सूर्य-कुल के अधिप थे। वे तेज, कान्ति, साहस, चातुर्य, राजस (रजोगुण), उदारता, धैर्य आदि सद्गुणों के भण्डार, उदयार्क (उदयकालीन सूर्य) की भाँति अपने उग्र तेज से प्रदीप्त, सप्तद्वीपों में यशस्वी, भूपाल-तिलक (राजाओं के शिरोमणि)—इस प्रकार शोभायमान होकर शासन करते थे। उस नरनाथ (राजा) के कुल-स्त्रियाँ (धर्मपत्नियाँ) साढ़े तीन सौ थीं। उनमें मुख्य थीं, अचलित सौशील्य वाली कौसल्या, कुचकुम्भ-निर्जित परिधान वाली कैकेयी, ।। २५० ।। —अनघ चरित्र वाली वह सुमित्रा। —वे (तीनों) मानों विख्यात त्रयीविद्याएँ हों। इस पृथ्वी पर उनके हितैषी पुरोहित वसिष्ठ आदि पुण्यसंयमी थे। पुण्यात्मा धृष्टि, विजय, सिद्धार्थ और अर्थसाधक, जयन्त, नीतिवेत्ता अशोक, धीमन्त और मन्त्रपालक सुमन्त्र नामक उनके आठ मन्त्री थे। वे सभी मन्त्री परस्पर हितू, स्वामी-कार्य के विचार में चतुर मन वाले, दूसरों (शत्रुओं) के मर्म के भेदन करने के उपायों

परमर्म भेदनोपायधौरेयु । लरसि प्रजारक्ष याचरिंपुदुरु
नट्टिवारॅनमंड्रु नखिलकार्यमुल । बट्टुन दिद्द दीर्पनु जालिकॉलुव
नष्टाक्षरमुल बाहाष्टकंबुननु । स्रष्टयै वॅलयु नारायणुकरणि
दशरथुंडलरॅ नातनिदेशमुननु । गृशुडु गॉण्डीडु रोगियु दरिद्रुंडु२६०
जारुंडु मरियु ननाचारुंडु बुण्य । दूरुंडु ग्रूरुंडु दुच्छुंडु शठुडु
मंदुंडु मरिलेरु मंदुनकैन । नंदरु मणिकुंडलाद्यलंकृतुलु
नंदरु धर्मपरायणचित्तु । लंदरु विहितकुलाचाररतुलु
नंदरु सकलशास्त्रादि पारगुलु । नंदरु श्रीविष्णु नतिभक्तिपरुलु
श्रीचंदनमुन राज्यमेपु दीपिंप । भूचक्रमॅल्ल नेर्पुन नेलियेलि
प्रकट राज्यांगसंपद देलि तेलि । योकनाडु दशरथुंडुल्लंबुलोन२६६

दशरथुडु पुत्रकामेष्टि चेय नालोचिंचुट

दनकु संततिलेमि दलपोसि वगचि। तनकु नायुवु वेग तगबोवु ननुचु
मनमुन गुंदुचु मरियु नावॅण्ट । दन मंत्रिवरुल नंदरनु रप्पिंचि
घनमुग गॉलुविच्चि घनत गूर्चुण्डि। तन मंत्रिवरुल नंदर जूचि पलिकॅः

में निपुण थे। वे विचारपूर्वक प्रजा की रक्षा करते थे। समस्त कार्यों को उचित रूप में संभाल सकनेवाले ऐसे आठ (मंत्रि-) जनों द्वारा सेवा-प्राप्त, अष्टाक्षर और अष्ट भुजाओं से युक्त स्रष्टा के समान नारायण की तरह विलसित महाराज दशरथ (सर्व-प्रकार) सुशोभित थे। उनके देश में दुर्बल, चुगलखोर, रोगी, दरिद्र—॥ २६० ॥

—व्यभिचारी, और अनाचारी, पुण्य-रहित (पापी), क्रूर, हीन (नीच), शठ, (अथवा) मंद एक भी व्यक्ति नहीं था। सभी मणिकुण्डल आदि से अलंकृत, सभी धर्मपरायण चित्त वाले, सभी विहित (निर्दिष्ट) कुलाचार-निरत, सभी सकल शास्त्र-रूपी समुद्र के पारंगत, सभी श्रीविष्णु के अनन्य भक्त थे। इस प्रकार प्रकट-उत्साह के साथ, समस्त राज्य और भूचक्र (भूमण्डल) का कुशलता के साथ शासन कर, अधिक राज्य-सुख भोग कर, एक दिन दशरथ मन में—॥ २६६ ॥

दशरथ का पुत्र कामेष्टि करने के लिए विचार करना

—अपनी सन्तान-हीनता के बारे में विचार कर, दुखी होकर, अपनी आयु शीघ्र ही ढल जाएगी—यह सोचकर, मन में क्षुब्ध हुए और उसके बाद अपने सभी मन्त्रि-श्रेष्ठों को बुलवाया। सम्भ्रान्त रूप से उन्हें सभा में आसन देकर, शोभायुत आसनासीन होकर, अपने सभी मंत्रिवरों की ओर

'बॅक्कु दानंबुलु बॅक्कु धर्ममुलु । बॅक्कु यागंबुलु बॅक्कुव जेसि
पॅक्कॅंड्लु मंटि; शोभितकीर्ति गंटि;। मक्कुव मी वंटि मंत्रुलु गलुग
गॉदुवलेदेमिट, गॉडुकुलु लेनि ।कॉदवयॉक्कटि गानि; कुलमुद्धरिंचु
कॉडुकुलु लेकुन्न गोटि पुण्यमुल । बडयरुत्तमलोक पदवुलॅव्वरुनु;
गान पुत्रुल गानगा नाकु वलयु । गान येनिक लोकमुलॅल्ल मॅच्च
दलकॉनि यश्वमेधमु सेसि, पिदप । नॅलमि तो बुत्रकामेष्टि वेल्चॅंदनु
ई यागमुलचेत हितमु रंजिल्ल । बायक पुत्रुल बडसॅद नेनु'
अनि चॅप्प वारलु नतिसंभ्रममुन । मनमुन संतोषमग्नुलैयुन्न
ना मंत्रिवर्युल नंदर जूचि । ता मदि नूहिंचि तगवॉप्प बलिके;
'ननुपमंबुग नेनु नश्वमेधंबु । विनयंबुनं जेसि विबुधुलु मॅच्च
बुत्तुलकॉरकुनै पुत्रकामेष्टि । नेत्रोत्सवंबुग ने जेयुवाड
ननि तगु पनुलकु नंदर बनुप । ननघुलु मरि वसिष्टादुलु वच्चि
निलचिन स्रॉक्कुचु नॅलमि दोड्तॅच्चि ।पलिकॅनु वारितो बार्थिवोत्तमुडु

देखकर (वे) बोले, 'अनेक दान, अनेक धर्म (-कार्य), अनेक यज्ञ प्राचुर्य से करते हुए ॥ २७० ॥

—(मैं) अनेक वर्ष जीवित रहा। बड़ी कीर्ति पाई, आप जैसे स्नेही मन्त्रियों के होने पर (मुझे) केवल पुत्र होने के अभाव के सिवा और किसी बात का अभाव नहीं है। कुल का उद्धार करनेवाले पुत्रों के बिना कोई भी (व्यक्ति) पुण्यवानों की कोटि और उत्तम लोक में स्थान प्राप्त नहीं कर सकता। अस्तु, मेरे भी पुत्र उत्पन्न होने चाहिए। इसलिए मैं, संसार में प्रशंसित होने की इच्छा से अश्वमेध (यज्ञ) करूँगा। बाद में सोत्साह पुत्र-कामेष्टि हवन करूँगा (यज्ञ करूँगा)। इन यज्ञों के कारण (मेरा) हित-रंजन होगा, मैं अवश्य पुत्रों को प्राप्त करूँगा'। ऐसा कहने पर उनके (अर्थात् मंत्रियों के) अति सम्भ्रम के साथ मन में संतोषमग्न रहते समय, उन सभी मंत्रिवर्यों की ओर देखकर, (राजा ने) स्वयं मन में विचार किया और न्याय (बुद्धि)-युक्त हो बोले—'अनुपम रूप से मैं अश्वमेध (यज्ञ) को—विनीत भाव से करूँगा, जिसकी विबुध लोग प्रशंसा करेंगे। पुत्रों के लिए पुत्रकामेष्टि को नेत्रोत्सव (दर्शनीय) रूप में मैं करूँगा'। ॥ २८० ॥

ऐसा कहकर उचित (आवश्यक) कार्यों के लिए सबको भेजने के बाद पुण्यात्मा वसिष्ठ आदि आकर खड़े हो गए। (तो राजा) साष्टांग प्रणाम कर, आनन्द के साथ (उन्हें) लिवा लाये, उनसे पार्थिवोत्तम (राजाओं में श्रेष्ठ दशरथ) यों बोले—'हे अनघ (पुण्यात्मा) वसिष्ठ !

'अनघ! वसिष्ट! संयमुलार! यिपुडु। घनमैन हयमेधकंबु ना चेत
जेयिंचि पुत्रैकसिद्धि नोंदुटकु। जेयिंपुडी यिष्टि जॅच्चॅर्' नन्न
नलवड नी चेयु हयमेधमखमु। नॅलकॉनि येमिंक निर्वहिंचॅदमु
मदि नॅन्न शक्यमॅ मखराज महिम। यिदिगाक पुत्रकामेष्टियु जेय
दनयुल गांचॅदु धन्यमानसुल,। ननवुडु हर्षिंचि यवनिनायकुडु
नंदर् बनचि शुद्धातंबु सॉच्चि। सुंदरीमणुल का शुभवार्त जॅप्पि
यनुरक्ति नेकांतमैयुन्न वेळ। ननघुंडु सूतुडिट्लनियॅ भूपतिकि २८९

ऋश्यशृंग वृतांतमु

'धरणीश! नीकु संतानसंप्राप्ति। वॅरवैन कथ मुन्नु विन्नाड नेनु २९०
भूमिश! विनुमंगभूमीशु कॉडुकु। रोमपादुडु गुणारूढुंडु दॉल्लि
यॅमि पापमुननो यॅरुग जॉप्पडक। यामहिलो वर्षमु कुर्वदय्यॅ
दानेलि पालिंचु धरणिपैनॅन्दु। वानलुलेकुन्न वगलनु जॅन्दि
वरमुनींद्रुल चेत वर्षहोममुलु। परुवडि सेयिंचि पडियराकुन्न

हे संयमियो (मुनियो)! अब महान् हयमेध (यज्ञ) को मुझसे सम्पन्न करवाकर, एक पुत्र की प्राप्ति के लिए इस यिष्टि (यज्ञ) को शीघ्र करवाइए'। ऐसा (राजा के) कहने पर (उन्होंने) कहा—'युक्तविधि से तुम्हारे द्वारा सम्पन्न हयमेध यज्ञ का उचित रीति से हम अब निर्वाह करेंगे। यज्ञों में श्रेष्ठ उस (हयमेध) की महिमा का वर्णन क्या सम्भव है? (नहीं है)। यही नहीं, पुत्रकामेष्टि भी करने पर धन्य-मन वाले पुत्रों को प्राप्त करोगे'। ऐसा (मुनियों के) कहने पर हर्षित होकर अवनीश्वर (राजा) ने सबको बिदाकर, अन्तःपुर में प्रवेश किया और सुन्दरी मणियों (रानियों) को वह शुभ-समाचार कह सुनाया। सप्रेम एकान्त में (अकेले) रहते समय, अनघ सूत ने भूपति से इस प्रकार कहा —॥ २८९ ॥

ऋष्यशृंग वृत्तान्त

—'हे महाराज! आपको सन्तान-प्राप्ति का साधन किस प्रकार होगा, इस सम्बन्ध में एक कथा पहले ही मैंने सुनी है ॥ २९० ॥

—हे भूमीश! उसे सुनिए। अंगराज के पुत्र गुणवान् रोमपाद के राज्य में, न जाने किस पाप से, वर्षा नहीं हुई। अपनी परिपालित-शासित धरणी (पृथ्वी) पर कहीं वर्षा के न होने से दुखी होकर, (उन्होंने) श्रेष्ठ मुनीन्द्रों से वर्षाहोम (वर्षा के निमित्त अनेक हवन) करवाये। किन्तु फिर भी वर्षा के न होने से राजा को अतिशोक से व्यथित देखकर वे

भूरिशोकंबुन बॉगुलुचुनुन्न । याराजु गनुगॉनि यम्मुनुलनिरि
'यो महीपालक ! यो राजचंद्र । यी महिपै वानलिट बर्वुटकुनु
नॉक युपायंबु मेमॉगि जॅप्पुवार । मकलंकमति तोड ननुवॉन्द जेयु
परहितोन्नतुड़ु विभांडक सुतुड़ु । चिरपुण्यनिधि ऋश्यश्रृंगुडनुवाड़ु
नगधैर्य! पुट्टिननाटिनुंडियु । नगरराष्ट्रंबुलॅन्नड़ु नॅरुंगमिनि
नतडॅन्दु नाड़ुवारनु पेरु नॅरुग । डतड़ु दापसवृत्ति नडवुलनुंड़ु ३००
वसुधेश! यतडिदु वच्चिन जालु; । वॅसबायु नी यनावृष्टि दोषंबु'
नावुड़ु 'मुनिनाथु नगरि केरीति।रावितु' ननि विचारमु सेसि तॅलिसि
यतड़ु वच्चुटकुनु नात्म जिंतिंचि । मतिमंतुलगुनट्टि मंत्रुल बिलिचि
मुनुलनु रप्पिचि मुदमॉप्प नड़ुग । मुनुलुनु मंत्रुलु मुदमुतो जॅप्प
मनमुन संतोष महिमशोभिल्ल । मनुलमाटलु विनि मोदंबु मीऱ
नुंडॅनु भूकांतुडॉगि मौनुलनिरि । 'दंडिग नो राज! तलपोसि यिपुड़ु
वारकांतलनॅल्ल वसुधेश! पंपु । वारक वॅन्टने वनमुनकिपुड़ु
दंडिग भक्ष्यमुल् दगमदिमॅच्च । मॅण्ड़ुग धनमुल मेटि वस्तुवुलु
बॅट्टि पंपुमु नीवु पॅम्पुतो नंत । गट्टिग गांतलु गड़ु ब्रौढ सतुलु

मुनि बोले, 'महीपालक ! हे राजचन्द्र ! इस पृथ्वी पर, यहाँ वर्षा होने के लिए एक उपाय हम क्रमशः बताएँगे। अकलंकमति से (उस उपाय को) संगत रूप से करो। हे नगधैर्य, (पर्वत के समान धैर्य वाले !) पर-हितकरने में उन्नत विभाण्डक का पुत्र, चिरपुण्य-निधि ऋष्यश्रृंग, जन्म से (आज तक) नगर और राष्ट्र के बारे में कभी कुछ जानकारी न रखने के कारण, स्त्रियों के नाम तक से अनभिज्ञ है। वह तापसी वृत्ति में जंगलों में (ही) रहता है ॥ ३०० ॥

हे वसुधेश ! उसका यहाँ आना पर्याप्त है, (उसके आते ही) यह अनावृष्टि का दोष तुरन्त दूर हो जायगा'। इसे (कहने) पर (राजा) सोचने लगा, 'मुनिनाथ को नगरी में कैसे बुलाऊँ ?' उसके (ऋश्यश्रृंग के) आने की बात मन में सोचकर, (राजा ने) मतिमंत (बुद्धिमान) मंत्रियों और मुनियों को बुलाकर, प्रसन्न चित्त से (उपाय) पूछा। मुनियों (और) मंत्रियों ने अति प्रसन्नता से (उपाय) बताया। मुनियों की बातें सुनकर भूकान्त (महाराज) मन में अत्यधिक हर्षित हुए। मुनियों ने कहा, 'हे राजन् ! यत्नपूर्वक अभी वार-वनिताओं को तुरन्त वन में भेज दो। हे वसुधेश ! मन को प्रसन्न करनेवाले विविध खाद्य (मिष्टान्न), पर्याप्त धन (और) श्रेष्ठ वस्तुएँ देकर तुम उन (वेश्याओं) को सहर्ष भेजो।

दिन्नगनटुपोयि तॅऱगॉप्प गांचि । मन्ननचे मौनि महिम वीक्षिंचि
तिय्यनिभक्ष्यमुल् तॅऱगॉप्पनिच्चि । नॅय्यंबुचे मदि नॅऱि गरगिंचि
याटल बाटल देट माटलनु । बाटलगंधुलु बदिलुलै निलचि
मनसॅल्ल गरगिंचि मऱिवॅण्ट नंटि । मनसिजाकारुलु मऱि मायवन्नि
यॅच्चुग निटुराग नतडु वॅन्दगिलि । वच्चुनु निंदुकु वसुधेश! विनुमु'
अनि चॅप्पि मुनिवर्युलटु चनिरंत । घनमुगा ना राजु गरुण ना रात्रि
मनमलरग नुंडि गरुनाडु लेचि । मुनुलनु दलचुचु मुदमॉप्प नंत
ननुरक्ति गडुप्रोडलगु वारसतुल । विनुत यौवनरूप विभ्रमवतुल
मनसिजमोहन - मंत्र - देवतल । बनिचॅ नॉप्पॅडु वारि बाटिंचियतडु
अतिवलम्मुनियुन्नयडविकि बोयि । यतनि याश्रमभूमि कल्लन जेरि
चतुर नर्तन कळा संगीत गतुल । नतनिकि दम यॉप्पुलर्थि जूपुटयु
नापुण्यनिधि वारुलाडुवारगुट । रूपिप नेरक रुचुल जॉप्पडक
यलसयानमुल नी यडविलो नॉप्प । मॅलिगॅडु निवि वितमृगमुलो काग

तब वे अति प्रौढ़ सुन्दरियाँ सीधे वहाँ जाकर, उपाय से (उस मुनि को) देखकर, मुनि की गरिमामयी महिमा को देखकर—॥ ३१० ॥

—यत्न से मधुर मिष्टान्न देकर, प्रेम से (उनके) मन को सकौशल विचलित करेंगी। क्रीडाओं (विविध विलास-चेष्टाओं), गीतों और स्वच्छ (मोहक) वचनों से (वे) पाटलगंधियाँ (रमणियाँ) सावधानी से (उनके) मन को पूरी तरह से रसमय बना देंगी। फिर उनका पीछाकर, मनसिजाकार(मनसिज मन्मथ के सदृश रूप वाली)वे कामिनियाँ (अपना) मायाजाल फैलाकर, यहाँ वापिस आएँगी, (तो) वे (ऋष्यश्रृंग) भी उनके पीछे-पीछे यहाँ आएँगे। हे वसुधेश ! सुनो (हमारी बात)'। ऐसा कहकर मुनिश्रेष्ठ चले गए। तब वह राजा उस रात को स्निग्ध और अति प्रसन्नचित्त रहा। दूसरे दिन (प्रातः) उठते ही उसने मुनियों का स्मरण करते हुए बड़ी प्रसन्नता और अनुरक्ति के साथ अत्यन्त प्रौढ बार-वनिताओं (वेश्याओं) को, जो अनुपम यौवन, रूप और छल-छन्द से युक्त, कामदेव के मोहनमन्त्र के सदृश मोहक, और अत्यंत चतुरा थीं, उनको (वन में) भेजा। वे युवतियाँ वन में गईं जहाँ वह मुनि था। उसके आश्रमस्थल के निकट पहुँचकर, चतुर नर्तन-कला, संगीत की गतियों और अपने विलास (हाव-भाव) द्वारा उसको आकर्षित किया ॥ ३२० ॥

—वे पुण्यनिधि (ऋष्यश्रृंग) यह न जान सके कि वे स्त्रियाँ हैं, (और संगीतादि से भी) परिचित न होने के कारण सोचने लगे कि (सम्भवतः) वे इस वन में मनोहर गति से मंद विचरण करनेवाले अनोखे मृग हैं।

यनुचुंड नॉक्कनाडतिवलु ब्रीति । दनुजेर वच्चिन दप्पक चूचि
चन्नुल पेरड्गि चन्नुल मीद । नुन्न हारमुल नुद्देश मडिगि
'माकु गॉम्मॉकटि मस्तकमुननु । मीकु गॉम्मुल रॅण्डु मॅऱ सॅ रॉम्मुननु
नॅंवृक्षमुल गल्गॅ निवि यपूर्वमुलु । नीवल्कलमुलतिमृदुलंबुलरय
मा जटाबंधंबु माट्किवि गावु । मी जटाबंधमु ल्मॅऱुगुल बॉदलॅ
मेनि बूडिदपूत मेल्तावि बोट्टु । वीनुलविंदु मी वेदनादमुलु
कनिविनि यॅऱुग मिक्काननभूमि । मुनुलकु मी वेषमुलु गलवॉक्कॉ
यॅक्कडि मुनु' लन्न नितुलाघनुड्‌ु ।चिक्कुट भाविंचि चॅलगि नव्वुचुनु३०
'नानुपूर्विग श्रुतिहारियै साम । गानंबु वाडि चक्कग बदक्रममु
शुद्ध मार्गंबुन जूपंग नेर्तु । मिद्धरमा चर्य लॅऱुग मी तरमॅ ?'
यनि नेर्पु माटल ना मुनिस्वामि । गनुब्रामि मऱियु नक्कन्यकामणुलु
'यॅव्वरितनयुड ? वॅव्वड ? वेल । यिव्वनंबुन नुंडु? टॅऱिंगिपु' मनुडु
अमलकीर्तुल बुण्युडगु विभांडकुनि। कॉमरुंड ऋश्यश्रृंगुडु ना पेरु
विपुल मनोनिष्ट वॅलय नीयडवि । दपमुसेयुटकुनै दगिल वर्तितु

एक दिन (उन) युवतियों के प्रेमयुक्त हो अपने पास आने पर उन्हें ध्यानपूर्वक देखा; स्तनों के नाम पूछकर, स्तनों पर स्थित हारों के उद्देश्य (प्रयोजन) के बारे में पूछा (और बोले—) 'हमारे तो सिर पर एक ही श्रृंग (सींग) है। (परन्तु) आपके तो उर पर दो श्रृंग शोभायमान हैं। आपके वल्कल (वस्त्र) अति मृदुल प्रतीत होते हैं। ये अपूर्व (वल्कल) किस वृक्ष से प्राप्त हुए हैं ? आपके जटाजूट हमारी जटाओं के समान नहीं हैं, (वे तो) चमक रहे हैं। (आपके) शरीर पर मली हुई राख श्रेष्ठ सुगन्ध दे रही है। आपके वेदनाद (वेदपाठ) कानों को मधुर लगते हैं। इस कानन-भूमि में (ऐसा दृश्य) न देखा है, न सुना है। कहीं मुनियों के भी ऐसी वेषभूषा होती है ? आप कहाँ के मुनि हैं ? (ऐसा) कहने पर (उन) स्त्रियों ने उस महान् व्यक्ति को (अपने जाल में) फँसते देखकर, सोत्साह मुस्कुराते हुए कहा—॥ ३३० ॥

—'परम्परा से (प्राप्त) श्रुतिमधुर (कर्णप्रिय) सामगान गाते हुए, शुद्ध रीति से पदन्यास करके (हम) दिखा सकती हैं। इस पृथ्वी पर हमारी चेष्टाएँ (कौशल) जानना क्या आपके वश की बात है ? (नहीं है)।' (ऐसा) कहकर अपने चतुर वचनों से उस मुनिनाथ को भ्रम में डालकर फिर उन कन्या-मणियों (सुन्दरियों) ने पूछा, (आप) 'किसके पुत्र हैं ? कौन हैं ? क्यों इस वन में रहते हैं ? बताइए'। तब (मुनि ने कहा—) 'अमल कीर्तियुक्त पुण्यात्मा विभांडक का मैं पुत्र हूँ। मेरा

भागीरथी स्नानपरत मा तंड्रि । योगिपुंगवुलतो नॉगि नेगिनाडु
ऑण्डु देशमुल नॅरुगक यिचट । दंडिमै दपमुलुदगनॉप्प जेसि
कदलकयुन्नाडु घनत मा तंड्रि । सदमलचित्तुडै सद्भक्तिनिपुडु
विनुडु मीरिचटिकि विच्चेयुकतन । ननघुंडनैति गृतार्थुडनैति ३४०
मा तंड्रि गृपचेत मट्रियु निच्चटनु । नाततंबुग तपमनुवॉन्द नॅपुडु
सेसि यिच्चट नुंदु जतुरततोड । वासिगा वनमुलवरुस मिम्मुलनु
गनिनयप्पुडु नाकु गडु जोद्यमय्यॅ । ननुवॉन्द बोदमा याश्रममुनकु ?'
ननि मुनुलनि वारि नाश्रमंबुनकु । गॉनिपोयि ऋश्यश्रृंगुडु बूजिचॅ
नॅलनाग लम्मुनि यिच्चिन पूज । ललरुचु गैकॉनि, यतनि वीक्षिचि
'मुनिवर! मा वनंबुन दॅच्चिनार । मनुपमफलराजि' यनुचु लड्वमुलु
नतिरसंबुल मनोहरमुलैनट्टि । यतिरसंबुलु, वड, ललरुमंडॅगलु
सारमौ रसमुल चवुलग्गलिप । बेरु सॅप्पगरानि पॅक्कु भक्ष्यमुलु
निच्चिन नमलुचु नॅडनॅड जवुल । मॅच्चुचु दनिसि या मॅलतल जूचि
ग्रुक्किळ्ळु म्रिंगुचु गॉसरि यड्गुचुनु। जॉक्कुचु नंदंद सॉरिदि जेचाचि ५०

नाम ऋष्यश्रृंग है । अत्यधिक मनोनिष्ठा-युक्त हो इस वन में तप करने में निरत होकर रहता हूँ । मेरे पिताजी भागीरथी में स्नान करने की इच्छा से योगिपुंगवों के साथ गए हुए हैं । अन्य देशों को न जानकर (न जाकर वे) बड़ी तपस्याएँ करते हुए, सदमलचित्त तथा सद्भक्तियुक्त हो, यहीं अचल निवास करते हैं । सुनिए, आपके यहाँ पधारने के कारण मैं पापरहित हुआ, कृतार्थ हुआ ॥ ३४० ॥

—अपने पिता जी की कृपा से सुविधापूर्वक निरन्तर तप करते हुए मैं (भी) यहीं रहता हूँ । इन वनों में आप जैसे मनोरमों को देखने पर मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ । सुविधा हो तो आश्रम में चलें !' (ऐसा) कहकर (उन्हें) मुनि समझकर, अपने आश्रम में ले जाकर, ऋष्यश्रृंग ने उनकी पूजा की (आदर-सत्कार किया) । उन युवतियों ने उस मुनि की पूजाएँ (आतिथ्य) प्रसन्नता से स्वीकार कीं और उसे निहार कहा, 'हे मुनिवर ! अपने वन से (हम यह) अनुपम फल-राशि लाए हैं' । यह कहकर लड्डू, मनोहर अतिरस, बड़े, स्वादिष्ट मंडेग (गेहूँ से बनी एक प्रकार की मिठाई), स्वादिष्ट लगनेवाले अनेकानेक भक्ष्य (मिठाइयाँ) उनको दीं । (उन्हें) खाते और बीच-बीच में स्वाद की प्रशंसा करते हुए, मुग्ध होकर, उन सुन्दरियों की ओर देखते, लार की घूँट पीते हुए (लार टपकाते हुए), बार-बार माँगते, परवश होकर हाथ फैलाते हुए (कहते—) ॥ ३५० ॥

सामीजी कहते हैं कि मद भरी माया सब (लोगों) को आकर्षित कर उन्हें उलझन में डाल कर उनकी बुद्धि हर लेती है तथा उन्हें संकट में डाल देती है; पर जिस गुरुमुख भक्त को माया के इस वास्तविक रूप का ज्ञान हो जाता है वह कामना-रूपी सागर को पार करके (इच्छाओं से पार होकर) ज्ञान के मार्ग पर अग्रसर हो जाता है ॥ ६३ ॥

माया मध भरी, सूरत धारे सोहिणी ।
पुठीअ लाए पंहिंजे कयाई ख़लिक चरी ।
सामी सुधर जन खे, पेई ख़बर खरी ।
विया सिध तरी, पहुता पूरण पद में ॥ ६४ ॥

मदभरी माया ने सुन्दर रूप धारण करके लोगों को अपने पीछे पागल बना दिया है । सामीजी कहते हैं कि जब प्रेमी भक्तों को (माया की धोखे-बाज़ी का) वास्तविक ज्ञान हो जाता है तब वे सिद्ध-पुरुष इस (माया) को पार कर आत्म-पद प्राप्त कर लेते हैं ॥ ६४ ॥

माया महा छलु, परे रहे को सुर्मो ।
जंहिंखे शौक़ सचे जो, चाढ़ियो गुरूअ अमलु ।
सुन्ह सिधि स्वरूप खों, पासे थिए न पलु ।
एन अभेद अचलु, सामी माणिनि सान्ति सुखु ॥ ६५ ॥

महाछलिनी माया से वही शूरवीर बच सकता है जिसे श्रेष्ठ गुरु ने (परमात्मा के) सच्चे स्वरूप का अनुरागी बना दिया है । सामीजी कहते हैं कि वे (परमात्मा के) सच्चे स्वरूप से एक क्षण के लिए भी अलग नहीं होते बल्कि वे (सदैव) मौलिक, भेदरहित एवं अंचल सुख-शान्ति भोगते रहते हैं ॥ ६५ ॥

माया माउ बणी, मोहे मुसाए सभखे ।
सामी खसे सारु धनु, खूह में विझे खणी ।
कयुसि गुमु ज्ञाति सां, कंहिं हर्जन हथुहणी ।
घर में घर धणी, ड्ठिो जंहिं अभेदु थी ॥ ६६ ॥

सामीजी कहते हैं कि माया माँ बनकर सब को अपनी ओर आकर्षित कर उन्हें आपत्ति में डाल देती है एवं सार रूपी धन छीनकर उन्हें (प्रपंच रूपी) कुएं में डाल देती है । पर जब कोई संत पुरुष किसी (मनुष्य) पर कृपा का हाथ रखकर, अपने ज्ञान से उस माया को नष्ट कर देता है, तब अभेद (आत्मा एवं परमात्मा में किसी भी प्रकार का भेद न समझकर)

रूप से वह व्यक्ति अपने मनमंदिर में ही मनमंदिर के स्वामी परमात्मा का दर्शन पा जाता है ॥ ६६ ॥

माया मिठाई, खाई जीअ ख़ोआरु थिया ।
भवनि भौसागर में, सामी सदाई ।
व्रिले कंहिं गुर्मुख खे, अन्भय में आई ।
पंहिंजी पराई, ताति मेटे तद्रूपु थिया ॥ ६७ ॥

सामीजी कहते हैं कि माया रूपी मिठाई खाकर जीव व्यर्थ ही बदनाम हो रहे हैं एवं भवसागर में भटक रहे हैं। यह माया किसी विरले गुरुमुख की ही समझ में आ सकती है। ऐसा ज्ञानी गुरुभक्त अपने और पराए की भावना भूलकर (परमात्मा के साथ) तद्रूप हो जाता है ॥ ६७ ॥

माया मित्रु बणी, मोहे मारे सभखे ।
रोले पंहिंजे राज्ञ में, सदा साणु खणी ।
सामी बचियो को सुर्मो, साधुअ जी सरणी ।
घर में घर धणी, अचलु ड्रिठो जंहिं आदिजो ॥ ६८ ॥

माया मित्र बनकर सबको अपनी ओर आकर्षित कर मार (नष्ट कर) देती है, वह सभी को अपने अज्ञानरूपी राज्य में भटकाती रहती है। सामीजी कहते हैं कि जिसने अपने मनमंदिर में ही मनमंदिर के स्वामी परमात्मा को अचल रूप से विराजमान देख लिया है ऐसा कोई सच्चा शूरवीर ही सच्चे साधु की संगति से इस माया से बच सका है ॥ ६८ ॥

माया मिरेई, रचिया ठाह ठगीअ जा ।
मारे मूर्खनि खे, ड्राइणि ड्रुख ड्रेई ।
व्रिले कंहिं गुर्मुख खे, सामी सुधि पेई ।
लोक परलोक ब्रई, लंघे चढ़ियो लख्य ते ॥ ६९ ॥

माया ने सब धोखे के ही ठाट रचे हैं। वह डाइन मूर्खों (अज्ञानी मनुष्यों) को दु:ख देकर उन्हें नष्ट कर देती है। सामीजी कहते हैं कि किसी विरले गुरुमुख को ही इसका भेद समझ में आसकता है जिससे वह लोक-परलोक दोनों को पार कर अपने लक्ष्य की ओर अग्रसर होता है ॥ ६९ ॥

माया मध मातो, सामी सभु संसारु थी ।
कोर्युनि में को हिकिड़ो, आत्म रंगि रातो ।
मिली साध संगति सां, कंहि साहिबु सुञातो ।
वारे खतु खातो, कढियाईं कल्पत जो ॥ ७० ॥

सामीजी कहते हैं कि सारा विश्व माया के मद में मस्त है। करोड़ों में से ऐसा कोई एक ही (मनुष्य) आत्मज्ञान के रंग में रंगा हुआ है जिसने साधुओं के संग से परमात्मा को पहचान लिया है तथा माया रूपी बहीखाते को मिटा दिया है (माया से मुक्त हो बैठा है) ॥ ७० ॥

माया मति मोगी, मोहे कई मूढ़नि जी ।
पछिन ज्ञाणी पाणखे, सदा फिरनि सोगी ।
माणे सुख स्वरूपजो, को जाग्यो जोगी ।
अनन अरोगी, सामी रहे स्वभाव में ॥ ७१ ॥

माया ने मूर्खों को मोहकर उनकी बुद्धि मन्द कर दी है, अतः वे अपने को नाशवत् समझकर सदैव दुःखी होकर भटकते रहते हैं। सामीजी कहते हैं कि कोई ज्ञानवान् योगी ही स्वरूप के सुख को भोगता है एवं ईर्ष्या के रोग से मुक्त होकर अपनी ही मस्ती में मग्न रहता है ॥ ७१ ॥

माया मति मारी, लोभाए लोकनि जी ।
खंयो वतनि खुशि थी, ख़ोआरीअ जी खारी ।
सदा कनि समुझ रे, जतन ऐ जारी ।
सामी चए सारी, विया विञाए आर्‌जा ॥ ७२ ॥

माया ने लोगों को ललचाकर उनकी बुद्धि नष्ट कर दी है, अतः वे प्रसन्नतापूर्वक निंदा की पिटारी उठाये हुए घूम रहे हैं। वे सदैव बिना सोच-विचार के यत्न एवं युक्तियाँ करते रहते हैं। सामीजी कहते हैं कि इसी प्रकार वे अपनी आयु गँवाकर इस संसार से चले जाते हैं ॥ ७२ ॥

माया मंझि उदासु, विरले को गुर्मुख रहे ।
जंहिं मिली साध संगति सां, कयो अन्तरि मुखि अभ्यासु ।
पर्चीं द्रिठाई पाण में, चेतन चिदाकासु ।
सामी ज्ञाणे नासु, जगतु सभु जगदीस रे ॥ ७३ ॥

जिसने साधुओं के संग से अन्तरमुख हो अभ्यास किया है ऐसा कोई विरला गुरुमख भक्त ही माया से विमुख रह सकता है। सामीजी कहते हैं

कि उसने प्रसन्न हो अपने आप में ही चेतन चिदाकाश (परमात्मा) को देखा है तथा जगदीश्वर के सिवा सारे विश्व को नश्वर माना है ॥ ७३ ॥

माया मंझि उदासु, व्रिले को गुर्मुख रहे ।
जंहिं मिली साध संगति सां, कयो अन्तरि मुखि अभ्यासु ।
जींए घटनि में आकाश, तींए साक्षी द्रिसे सभमें ॥ ७४ ॥

जिसने साधुओं के संग से अन्तरमुख हो, अभ्यास किया है ऐसा कोई विरला गुरुमुख भक्त ही माया से विमुख रह सकता है । जिस प्रकार अनेक घड़ों में एक ही आकाश दिखाई देता है, उसी प्रकार वह भी सब (जीवों) में एक ही परमात्मा को देखता है ॥ ७४ ॥

विशेष—आकाश एक है लेकिन उसकी परछाई अलग-अलग घड़ों में अलग-अलग रूप से पड़ती है, यदि घड़े को तोड़ दिया जाय तो भी आकाश नहीं टूटता (नष्ट होता) है । उसी प्रकार परमात्मा एक ही है लेकिन उसकी ज्योति सब जीवों में समाई हुई है; पर भ्रमवश मनुष्य उसे अलग ही मानता है । पर जो ज्ञानी है उन्हें आत्मा एवं परमात्मा में किसी भी प्रकार का भेद दिखाई नहीं देता ।

माया मंझि उदासु, व्रिले को गुर्मुखु रहे ।
कयो जंहिं गुर ज्ञाति सां, अन्तरि मुखि अभ्यासु ।
चढ़ी द्रिठाईं चेत ते, अन्भय जो आकासु ।
सामी ज्ञाणे नासु, द्रष्टमानु सन्सार खे ॥ ७५ ॥

सामीजी कहते हैं कोई विरला गुरुमुख ही माया से उदास रहकर गुरु के ज्ञान के सहारे, अन्तर्मुख हो अभ्यास करता है, एवं विकारों से ऊपर उठकर ज्ञानरूपी आकाश को देखता है, एवं दृश्यमान संसार को नाशवान् मानता है ॥ ७५ ॥

माया मंझि उदासु, रहनि साधूजन सूर्मा ।
अची अजगैबी लग़ी जिनि खे प्रेम प्यास ।
सामी मिली स्वरूप सां, थिया ख़िल्वती ख़ास ।
बेहद कनि विलास, चढ़ी चेतन चिटते ॥ ७६ ॥

माया से वे शूरवीर साधुजन ही उदास रहते हैं, जिन्हें अचानक ही प्रेम की अनोखी (रहस्य भरी) प्यास आ लगती है । सामीजी कहते हैं कि वे चैतन्य रूपी चट्टान पर चढ़कर पवित्र एवं एकान्तवासी होकर

परमात्मा के स्वरूप से मिलकर, अनन्त परमात्मा के साथ विलास करते हैं (समाधि अवस्था में ईश्वर के साथ वार्तालाप करते हैं) ॥ ७६ ॥

माया मंझि उदासु, व्रिले को गुर्मुख रहे ।
सो द्रष्टमान सन्सार खे, निश्चे ज्राणे नासु ।
सामी साधसंगति जो, वठे भंवर जां वासु ।
जींए घटनि में आकासु तींए साक्षी द्रिसे सभ में ॥ ७७ ॥

माया से कोई विरला ही गुरुमुख उदास रहता है एवं इस दृश्यमान संसार को निश्चय ही नाशवान मानता है। सामीजी कहते हैं कि वह भ्रमर की तरह सत्संग का आनन्द लूटता रहता है, (जिस प्रकार भ्रमर फूलों का रस चूसता है, पर कभी भी तृप्त नहीं होता है, उसी प्रकार माया से विमुख जीव भी सत्संग से कभी तृप्त नहीं होता है।) एवं जिस प्रकार घड़ों में एक ही आकाश दिखाई देता है उसी प्रकार वह सभी जीवों में एक ही परमात्मा को प्रत्यक्ष देखता है ॥ ७७ ॥

माया मंझि उदासु, सामी रहनि सापुरुष ।
जीअण मरण दुःख सुख जी, मन में रखनि न आस ।
साक्षी ज्राणी सभ में, थिया दासनि जा दास ।
कटे अविद्या फास, त्रढ़िया अन्भय अछते ॥ ७८ ॥

सामीजी कहते हैं कि उत्तम पुरुष ही माया से उदास रहते हैं तथा मन में जीने-मरने एवं दुःख-सुख की आशा से रहित रहते हैं। वे सब में परमात्मा को प्रत्यक्ष समझकर सबके सेवक बने रहते हैं और अविद्या रूपी फाँसी को काटकर ज्ञान रूपी मार्ग पर अग्रसर होते हैं ॥ ७८ ॥

माया मंझि पर्सनु, मूर्ख रहनि मति रे ।
भोग्रे भोग्रे भर्म जा, खोहिनि मानुष्य तनु ।
माणे सुखु स्वरूप जो, को जाग्रयो साधू जनु ।
मेटे सभु मननु, सीतलु थियो सामी चए ॥ ७९ ॥

सामीजी कहते हैं कि बुद्धिहीन मूर्ख व्यक्ति ही माया में प्रसन्न रहते हैं एवं भ्रम के भोग भोगकर अपना मानव-शरीर व्यर्थ ही नष्ट करते हैं। कोई जागृत साधु ही चिन्तन-मनन से ऊपर उठकर शान्ति स्वरूप परमात्मा के मिलन का सुख भोगता है। (ब्रह्मानन्द को प्राप्त होता है।) ॥ ७९ ॥

माया मंझि मगनु, मूर्ख रहनि मति रे।
कालु न ड्रिसनि कन्ध ते, नितु तके थो तनु।
जागी जुर्यो पाणसां, को प्रेमी पूरनु।
जंहिंखे आतम धनु, सामी ड्रिनो सतिगुरूअ ॥ ८० ॥

माया में बुद्धिहीन मूर्ख ही मस्त रहते हैं। वे कन्धे पर सवार मृत्यु को निरन्तर अपने शरीर की ओर ताकते हुए नहीं देखते हैं। सामीजी कहते हैं कि जिसे सतगुरु ने आत्म-धन दिया है वही पूर्णप्रेमी जागृत हो अपने आप (परमात्मा) से मिल सकता है॥ ८० ॥

माया मंझि मगनु, मूर्ख रहनि मति रे।
भोग़े भोग़े भर्म जा, खोहिनि मानुष्य तनु।
ज्ञाणे सुखु स्वरूप जो, को जाग़यो साधू जनु।
मेटे सभु मननु सीतलु थिए सामी चए ॥ ८१ ॥

मूर्ख बुद्धिहीन होकर माया में ही मग्न रहते हैं। वे भ्रम के भोग भोगकर, अपने मानव-शरीर को नष्ट करते हैं। सामीजी कहते हैं कि कोई जागृत (ज्ञानवान्) साधु-पुरुष ही अपने स्वरूप के सुख (आत्मानन्द) को समझकर, सोच मिटाकर, शान्त हो सका है ॥ ८१ ॥

माया मंझि मगनु, मूर्ख रहनि मति रे।
जुदा ज्ञाणी पाण खे, धार्नि नाना तनु।
सामी सिक वारनि खे, मिल्यो आत्म-धनु ॥
अन्भय आतम अनु, सफा कयाई सुर्तिसाँ ॥ ८२ ॥

मूर्ख (अज्ञानी) ही बुद्धिहीन होकर माया में मग्न रहते हैं। वे अपने को अलग मानकर (आत्मा और परमात्मा में भेद समझकर) नाना प्रकार के शरीर (जन्म) धारण करते रहते हैं। सामीजी कहते हैं कि परमात्मा से प्रेम करने वालों को ही आत्म-धन मिल सका है, क्योंकि उन्होंने ध्यान (मेडीटेशन) से आत्मज्ञान रूपी अन्न को [अज्ञान रूपी चोकर से] स्वच्छ कर दिया है। [ज्ञान मिलने के पश्चात् ध्यान एवं अभ्यास से दृढ़ बनाया है।] ॥ ८२ ॥

माया मंझि मगनु, मूर्ख रहनि मति रे।
जुदा ज्ञाणी पाण खे, धार्नि नाना तनु।
सामी माणे सेज सुखु, को प्रेमी पूरनु।
अन्भय आतम धनु, घिरी लधो जंहिं घरमों ॥ ८३ ॥

मूर्ख (अज्ञानी) ही बुद्धिहीन होकर माया में मग्न रहते हैं। वे अपने को (परमात्मा से) अलग मानकर नाना प्रकार के शरीर धारण करते रहते हैं। सामीजी कहते हैं कि ऐसा कोई पूर्णप्रेमी, जिसने (हृदय रूपी) घर में झाँककर आत्म-ज्ञान रूपी खजाना पा लिया है, वही परमात्मा के मिलन का आनन्द प्राप्त कर सका है ॥ ८३ ॥

माया मंझि मग़िरूरु, मूर्ख ज्ञाणनि मति रे ।
सति ज्ञाणी सन्सार खे, सामी सहनि सूरु ।
कालु न डि्सनि कन्ध ते, थोकरे नितु कलूरु ।
राजा राउ मजूरु, मारे जंहिं मिटी कया ॥ ८४ ॥

सामीजी कहते हैं कि मूर्ख एवं बुद्धिहीन (व्यक्ति) माया में मग़रूर (घमंडी) रहते हैं। वे संसार को सत्य मानकर दुःख सहते रहते हैं। जो राजाओं, महाराजाओं तथा मज़दूरों आदि सभी को मारकर मिट्टी में मिला देती है, ऐसी अपनी ज़िन्दगी के दिनों को गिनने वाली सदा अपने कंधे पर सवार मृत्यु को भी वे लोग नहीं देख पाते ॥ ८४ ॥

माया मंझि मस्तानु, मूर्ख रहनि केतिरा ।
कालु न डि्सनि कन्ध ते कशूं बीठो कानु ।
वर्तनि वेद वीचारसां, के नेहीं निरअभिमानु ।
भग़ति डि्नी भग़वान, जंहिं खे पर्चो पहिंजी ॥ ८५ ॥

माया में कितने ही मूर्ख मस्त रहते हैं, वे अपने कन्धे पर तीर-तानकर खड़ी हुई मृत्यु को नहीं देखते हैं। पर जिन्हें भगवान ने प्रसन्न होकर अपनी भक्ति दी है वे निरभिमानी (अभिमान-रहित) प्रेमी ही सोच-समझ कर वेदों के अनुसार आचरण करते हैं ॥ ८५ ॥

माया मंझि मुक्ति, विरलो को गुर्मुख रहे ।
जंहिंखे डि्नी सतिगुरूअ, सामी जोग़ जुग़ति ।
सम डि्से जिति किति, अन्भय पुरुष अख्युनिसाँ ॥ ८६ ॥

सामीजी कहते हैं कि माया से वही विरला गुरुमुख मुक्त रहता है जिसे सतगुरु ने योग-युक्ति दी है, अतएव वह अपनी आँखों से सभी जगह अन्भय पुरुष (परमात्मा) को देखता रहता है ॥ ८६ ॥

माया रचाई, कूड़ी रांदि कल्पत जी।
व्रिले कंहिं गुर्मुख खे, अन्भय में आई।
सामी मिली स्वरूप सां, ममत्व मिटाई।
सम थी सदाईं, माणे मौज मुक्ति जी॥ ८७॥

सामीजी कहते हैं कि माया ने कल्पना (भ्रम) का झूठा खेल रचा है। किसी विरले गुरुमुख को ही माया का यह (खेल) समझ में आ सका है, जिसके बाद परमात्मा के स्वरूप से मिलकर, ममत्व मिटाकर, सदैव सम होकर मुक्ति का आनन्द प्राप्त कर सका है॥ ८७॥

माया रचायो, कूड़ो ठाहु ठगीअ जो।
सामी तंहिं में सभ खे, मोहे मुंझायो।
व्रिले कंहिं गुर्मुख खे, अन्भय रसु आयो।
पंहिंजो परायो ख़्यालु छद्दे ख़ामोशु थियो॥ ८८॥

सामीजी कहते हैं कि माया ने धोखे का झूठा ठाठ रचा है, उस (ठाट) में आकर्षित कर उसने सबको उलझन में डाल दिया है। किसी विरले गुरुमुख को ही आत्मज्ञान का आनन्द प्राप्त हो पाता है जिससे वह अपने-पराये के भाव को भूलकर शान्त हो जाता है॥ ८८॥

माया सभि मोहे, जीअ कया वसि पंहिंजे।
सामी सन्त अचाह खे, सघे कीन जोहे।
विधा जंहिं खोहे, पंजई पर पक्षीअ जा॥ ८९॥

सामीजी कहते हैं कि माया ने सब जीवों को आकर्षित कर अपने वश में कर लिया है पर ऐसे निष्काम (कामना-रहित) सन्तों की ओर, जिन्होंने (मन रूपी) पक्षी के पांचों ही पंखों (काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार) को नष्ट कर दिया है, उनकी ओर वह (माया) अपनी दृष्टि नहीं उठा सकती॥ ८९॥

माया सभु मांधाणु, अणहून्दो उभो कयो।
मूर्ख तंहिं में मति रे, हणनि पंहिंजो पाणु।
रहे अलेपु आकास जाँ, को नेहीं निरब्राणु।
सामी सज्रण साणु, मिली नित मौजाँ करे॥ ९०॥

माया ने ऐसा अस्तित्वहीन प्रपंच खड़ा कर रखा है, जिसमें मूर्ख (अज्ञानी) बुद्धिहीन होकर अपने आप को नष्ट कर रहे हैं। सामीजी

मदनन दर्पमं किडिसि माण्दरॆं तम्म तपः प्रभावदिं
मदयुतरप्प वादिगळ दर्पमनोवददिर्पि तत्सभा-
सदरभिवर्णिपंतु तपदिं श्रुतदिं भुवनसिद्धिगा
स्पदरॆनिसिर्दरॆन्बॆनरियॆं पॊगळल् शुभकीर्तिदेवरं ॥ २२ ॥
कोडिडॆं वासुपूज्यमुनियॊळ् मरूळादपॆं चित्तजन्म नीं-
नोड निजाप्त वर्गदळवं मलयानिलनस्थिरं रण-
क्रीडॆगॆ निल्वने परभृतं निनगप्पनॆं युद्धदॊळ् बिगु-
र्तोडदॆं माण्बने मृगधरं मधुपं प्रथनक्कॆं योग्यने ॥ २३ ॥
आवॊम्वादि कथात्रय प्रवणदॊळ् विद्वज्जनं मॆच्चॆं वि-
द्यावष्टंभमनप्पुकॆयदु परवादि क्षोणिभृत्पक्षमं
देवेंद्रं कडिदंददिंदॆं कडिदं स्याद्बाद विद्यास्यदिं
त्रैविद्यश्रुतकीर्ति दिव्यमुनिवोळ् विख्यातियं ताळ्दिदं ॥ २४ ॥
श्रुतकीर्ति त्रैविद्य ❊ व्रति राघवपांडवीयमं विबुध चम-
त्कृतियॆनिसि गतप्रत्या ❊ गतदिं पेळ्दमलकीर्तियं प्रकटिसिदं ॥ २५ ॥
गणधररं श्रुतदॊळ चा- ❊ रण ऋषियरनमल चरितदॊळ् योगिजना
ग्रणिगॆणॆयॆन्नदॆं मिक्कर- ❊ नॆणॆयॆम्बुदॆं वीरणंदि सैद्धांतिकरॊळ् ॥ २६ ॥

अपने तपके प्रभाव से कामदेव के दबदबे को दबाकर, वाद-विवाद में प्रतिवादियों के अभिमान को मिटाकर, सभासदों से प्रशंसित होकर, शास्त्र-ज्ञान से विश्वप्रसिद्धि पानेवाले को शुभकीर्तिदेव कहने के अतिरिक्त और किसी तरह से (उनकी) प्रशंसा करना मैं नहीं जानता। २२ हे काम-देव, वासुपूज्य मुनि से होड़ लेने की इच्छा मत रखो। वह शक्ति तुममें नहीं है। तुम्हारे मित्रवर्ग में मलयानिल अस्थिर है। अन्यों से पोषित कोयल युद्ध में ठहर कैसे पायेगा? भौंरे कहीं युद्ध करते हैं? मृगधरचंद्र समर-भूमि को पीठ दिखाकर क्या भागे बिना रहेगा? २३ वादों में पाण्डित्य दिखाकर, विद्वज्जनों से प्रशंसित होकर, जिस तरह देवेन्द्र ने गिरिशिखरों को अपने वज्रायुध से काटा था उसी तरह अपने विद्याबल रूपी शस्त्र से प्रतिवादियों के आक्षेपों को काटनेवाले त्रिविद्या-पारंगत श्रुतकीर्ति मुनि के समान प्रख्याति किसने पाई है? २४ त्रिविद्याव्रती श्रुतकीर्तिमुनिवर्या-जी ने चमत्कृतिपूर्ण उत्कृष्ट रामायण महाभारतों की रचना करके विद्वानों से प्रशंसित होकर श्रेष्ठ (परम) कीर्ति पाई है। २५ जिनदर्शन में गणधरों को, पवित्र चारित्र में चारण ऋषियों को वीरणंदि सैद्धातिक से तुलना न करके क्या सामान्यों से (तुलना) कर सकते हैं? २६ स्वसामर्थ्य से हरि हर ब्रह्म को पराजित करनेवाले कामदेव की अपनी तपज्वाला से

हरिहर हिरण्यगर्भर ❋ नुरवर्णॅयिं गॅल्द कामनं दीप्र तपो-
भरदिंदुरिपिदरॅनॆ बि- ❋ त्तरिसदरार् वीरणंदि सैद्धांतिकरं ॥ २७॥
उपदेशंगॅय्दु काव्यच्छलदिनखिल धर्मंगळं लोकमं ध-
र्मपथ प्रस्थानदॉळ् योजिसि परम पुराणंगळं पेळ्दु कल्पां-
त परीतख्यातियं ताळ्दिद परम कविज्येष्ठरादर तदीयां-
घ्रिपयोजंगळ् मदीयाशय मणिभवनक्कक्कॆ पुष्पोपहारं ॥ २८ ॥
मृदुपद वंधमं बगॆय भावद मॅयसिरियं रसप्रवा-
हद नॅलॅवॅर्चॆनिबरिदु भाविसि भाविसि मॅच्चि मॅच्चि पॉ-
ण्मिद पुलकंगळिं नयनदॉळ् करेगण्मिद हर्षबाष्पव-
र्षदिननुरागमं पडॆव सज्जन संस्तवमॉन्दॆ सालदे ॥ २९ ॥
वाराशिय मणिगणमं ❋ क्रूर कुळीरक्कॆ सुगिदुसांयात्रिकनें
तारने कृतिवेरल् बगे ❋ दारने सत्कवि निसर्ग दुर्जन भयदिं ॥ ३० ॥
विकसित चंपकक्कॅरगि बंडुणलॉल्लद चंचरीक ना-
सिकमन शेषमं बॅळगॆ तिग्मकरं दॅसॅगाणदिर्प कौ-
शिकनयनंगळं सुकवि काव्यमनालिसि काय्व दुर्जन
प्रकरद कर्ण कोटरमनेकॅयॉ माडिदनब्जविष्टरं ॥ ३१ ॥
पडॅदं रजोधिकं विधि ❋ पॅडॅवणियं फणियनमृत रसमं विषमं
कडलं सुरियं मळॆयं ❋ सिडिलं पडॅदंतॆ सुजनरं दुर्जनरं ॥ ३२ ॥

वीरणंदि सैद्धातिकों ने जला दिया तो उनकी प्रशंसा कौन नहीं करेगा ? २७ काव्यहेतु से समस्त धर्मों का उपदेश करके, जग को सद्धर्मपथ पर चलाकर, श्रेष्ठ पुराणों की रचना कर, कल्पांतर-कीर्ति पानेवाले पूर्ववर्ती प्रवर कवियों के चरणकमल मेरे इच्छारूपी रत्नभवन के पुष्पाहार बनें । २८ मृदु पद-रचना को, भावना के सौंदर्य को और रस-प्रवाह के प्राचुर्य को पूर्णतः समझकर, पसंद करके उससे उत्पन्न रोमांचन के आनंदाश्रु को बहानेवाले सहृदय-वृंद की पसंद ही मेरे लिए पर्याप्त नहीं होगी ? २९ जिस तरह जहाज का व्यापारी क्रूर जल-प्राणियों से डरकर समुद्रतल में रहनेवाली रत्नराशि लाये बिना नहीं रहता, उसी तरह सत्कवि जग के दुर्जनों से डर कर काव्य-रचना किए बिना नहीं रह सकता । ३० ब्रह्म ने खिले चम्पक पुष्पों में झुककर मकरंद को न चूसनेवाले भ्रमरों को नाक, सूर्य के चमकते समय (उसे) न देखनेवाले उल्लुओं को आँखें और सुकवियों के काव्यों को न सुननेवाले दुर्जनों को कान न जाने क्यों दिये ? ३१ ब्रह्म ने, जिसमें रजोगुण अधिक है, जिस तरह रात और सूर्य, अमृत और विष, समुद्र

रसमं भावमनर्थमं रचनॅयं काव्यज्ञरारय्दु भा-
विसि नांदीपद नायकाभ्युदय पर्यंतंबरं कूडॅ शो-
धिसि नोळ्की रघुवंशराम कृतियॉळ् पत्तॅण्टु पद्यंगळं
पॉसॅवॅ यत्नदिनाद्यरद्यतनरेकारादॉडं पेळरे ।। ३३ ।।
रागद्वेष निबंधमप्प कृतियं निर्बंधदिं बंधमिं
बागर्थं पोसतागॅ पेळ्दखिलमं रागाविलंमाळ्प वि-
द्यागर्वग्रह पीडितर् स्वपरबाधाहेतुवं दुस्तरो-
द्योग क्लेशिनरागि बित्ति बॅळॅवंतक्कुं विषोद्यानमं ।। ३४ ।।
पॉगळ्दु महात्मरूज्ज्वलमॅनिप्प गुणंगळनुज्ज्वल प्रसि-
द्धिगॅ पॉलनागदुज्जलिसिद प्रतिम प्रतिभा प्रभावदिं
पॉगळ्दु दुरात्मरं मॉगदॉळिर्दुगुळं पॉरगिक्कलाद ना-
लगॅयवनॅत्तु नालगॅयॉळोदिदवं कृतिये कृतार्थने ।। ३५ ।।
भेदिसॅ भानु भानु तममं तरिसंदु पदार्थमं परि-
च्छेदिसि काण्बवोल् जनविलोचनप्रतिम प्रभावर-
प्पादि कवीश्वरर नडॅद पद्धतियिं तनगर्थ शुद्धिवे-
त्तादॉरॅयंगमें नडॅवुदच्चरिये कविराज वीथियॉळ् ।। ३६ ।।
नायकनन्यनागॅ कृति विश्रुतमागदुदात्त राघवं
नायकनागॅ विश्रुतमॅनिप्पुदु विस्मयकारियल्तु का-

और हवा, वर्षा और गणगर्जन का साथ-साथ निर्माण किया है, उसी तरह सज्जनों एवं दुर्जनों की एक साथ सृष्टि की है। ३२ इस रघुवंश की रामकथा में नान्दी पद से नायकाभ्युदय तक रचित आठ-दस पद्यों में रस, भाव, अर्थ को काव्यज्ञ परखें। ३३ कवि अपने विद्यागर्व के कारण, रागद्वेष से दोषपूर्ण कृति को हृदयंगम ढंग से नक ह्कर उसमें बाधक बनता है, तो वह स्वयं में एवं औरों में विष के उद्यान का निर्माण करता है, और कुछ नहीं। ३४ महात्माओं की उज्ज्वल प्रसिद्धि के कारणीभूत गुणों का वर्णन करके उनकी अप्रतिम प्रतिभा की प्रशंसा किए बिना, दुर्जनों के मुँह की थूकी हुई जूठन की तरह, कृति निर्माण करनेवाला कवि और उसकी कृति क्या कृतार्थ हो सकती है? ३५ सूर्य अंधकार चीर देता है तो लोगों को हर वस्तु स्पष्ट दिखाई देती है। उसी तरह अप्रतिभ प्रतिभावान पूर्ववर्ती कवियों के राजमार्ग में कदम बढ़ाकर कृतकृत्य होना मेरे लिए क्या असाध्य (कार्य) है? ३६ कथा-नायक साधारण हो तो कृति प्रख्यात नहीं हो सकती। उदात्त राघव

लायसदिं विनिर्मिसिद कंठिकँ कांचनमालॅयंतुपा-
देयमॅनिक्कुमे विषममॉप्पदॉडावुमॉप्पलार्कुमे ॥ ३७ ॥
विगताष्टादश दोषरप्प जिनरूं ज्ञानाधि सम्पन्नर-
प्प गणाधीश्वररूं क्रमंबिडदँ मुन्नं पेळ्दुदं श्राव्य का-
व्यगुण ख्याति निमित्तमल्लदँ शुभध्यानार्थियँ पेळलां
बगॅदंदँ रघुवंश रामकथे पेळ्वंतन्य सामान्यमे ॥ ३८ ॥
रवि मारिट्टॊळॅदं विमत्तळमनाशा सीमॅयं दांटुव-
न्नॆवरं तन्न करंगळिंदॅनॅ पॅरंगें मॉग्गॅ मुन्नं गण-
प्रवरर् गौतमरादियागॅ मुनिमुख्यर पेळ्दरॅन्दंदु मा-
नवरॅम्मॉन्दिगरार्परे रचियिसल् रामान्वय ख्यातियं ॥ ३९ ॥
विपुलाचलदॉळ् वीर जि-* न पार्श्वदॉळ् गौतमं गणग्रणि मगधा-
धिपनरियँ नॅरॅयँ पेळ्दुद-*नपूर्वमॅनॅ रामकथॅयनभिवर्णिसुवॅं ॥ ४० ॥
जगमं युगमं मन्वा-* दिगळं कालस्वरूपमं जिनरं च-
त्किगळं हलधर कृष्णा-*दिगळं श्रीरामचरितदॉळ् वर्णिसुवॅं ॥ ४१ ॥
अदॅन्तॆनॆ—
कडॅदोरित्तिल्लॅनिप्पागसद नडुवॅ वायुत्रयं सुत्तॆ पेळार्
पडॅवन्नर तन्ननॅम्बग्गलिकॅवडॅदधस्तिर्यगूर्ध्व त्रिभेदं

जिसका नायक है उस कृति का लोकप्रसिद्ध होने में आश्चर्य ही क्या? काले लोहे से निर्मित कंठमाला क्या सुवर्ण-माला सी योग्य (बन सकती) है? कथावस्तु योग्य न हो तो और कोई योग्य कैसे हो सकता है? ३७ इस श्रव्यकाव्य को, जिसे क्रम से अठारह दोषवर्जित तीर्थंकरों एवं ज्ञान-सम्पन्न गणाधीश्वरों ने कहा था, उसके गुणख्याति निमित्त तथा शुभध्यानार्थ, मैंने भी कहने की इच्छा की है। रघुवंश-राम-कथा कहना क्या कोई सामान्य कार्य है? ३८ अपनी किरणों को दिगंत तक फैलाकर सूर्य आकाश को नापता है। (उसी तरह) जिस रामकथा को गणधर गौतम आदि ने कहा है, उसका वर्णन करना, हम जैसे (सामान्य) मानव के लिए क्या साध्य-कार्य है? ३९ विपुलाचल में वीर जिनों के पार्श्व में गौतम मुनि ने गणाग्रणी मगधाधिप को जो रामकथा सुनाई थी, उसी को मैं (अब) अपूर्व रीति से कह रहा हूँ (रच रहा हूँ)। ४० इस रामचरित में लोकाकारों का, युगों का, मन्वादियों का, कालस्वरूप का, जिनों का, चक्रवर्तियों का, बलदेव-वासुदेव का वर्णन किया गया है। ४१ अनंत आकाश के बीच में वायुत्रय से घिरे रहने पर, उसके बीच में षड्द्रव्यों से

बडॆदारुं द्रव्यदिं मॆय्वडॆदखिल जगं रज्जुवीरॆलरूद्दं
बडॆदत्ताप्तं जिनं केवल विपुल तुलाकोटियिं तूगे तन्नं ॥ ४२ ॥
अनतिशयमादुदा त्रि- * भुवन लक्ष्मिगॆ मध्यमॆनिसॆ मध्यम लोकं
जनहृदयहारि गंभी- * र नाभिमंडलमिदॆनिसि जंबूद्वीपं ॥ ४३ ॥

आ जंबूद्वीपद नट्टनडुवॆ—

मुट्टिदुदु मॉदल दिवमं * मॆट्टिदुदॆरडनॆय वज्रॆयं मेखलॆयिं
दिट्टिगॆ पॉलनादुदु पॉ-* बॆट्टं जिनजन्मसवन मणिमयपट्टं ॥ ४४ ॥
आक्षोणीधर वल्लभ * दक्षिण दिङ्मुखदॉळॆसॆदु शशिखंडदवो-
लीक्षण सुखमयमिर्पुदु * दक्षिण भरत त्रिखंडदार्यखंडं ॥ ४५ ॥

अल्लि वर्तिसुवुत्सर्पणावसर्पण युगस्वरूप निरूपण विवक्षॆयिं मुख्य व्यवहार नयदॉळुभयात्मकमॆनिप्प कालस्वरूपमॆन्तॆनॆ—

जीवाजीव द्रव्य प- * रावर्तन हेतु वर्तना लक्षण स-
द्भावं नित्यममूर्तं * केवल गम्यं सदानुमेयं कालं ॥ ४६ ॥
धारा हतियिं खंडिस * दारं जिननाथनुळियलुळिदरनेका-
कारं लोकाकारदॉ- * ळोरगमॆनिप्प कालचक्रममोघं ॥ ४७ ॥
व्यवहार काल भेदम- * नवरिवरॆत्तरिवराप्तरल्लर् जिनपुं-
गवरल्लदणुवनणु दां- * टुव पॉळ्तं समयमॆन्दु पेळ्वनावं ॥ ४८ ॥

भरा अधोलोक, मध्यलोक और ऊध्वलोक, इस अहंकार से कि हमें कौन पा सकता है, चौदह रज्जु लंबे होकर फैले हैं। जिन ने मानो तराजू में तौलते इन (तीनों) लोकों को पकड़ा है। ४२ मध्यलोक में उसके नाभि-मंडल-सा जंबुद्वीप है। ४३ जंबुद्वीप के बीच में हिमवत्पर्वत है जहाँ जिनों का जन्माभिषेक होता है। ४४ हिमवत्पर्वत के दक्षिण में देखनेवालों की आँखों में चंद्र-सा ठंडक पहुँचानेवाला आर्यखंड सुशोभित है। ४५ काल अमूर्त है, केवल अनुमान से ही उसका अंदाज लगाया जा सकता है। यह काल जो केवल केवलियों के लिए गम्य है, परिवर्तन गुणों से युक्त द्रव्यों के जीव-अजीवों के रहने में (अस्तित्व में) निमित्त बना हुआ है। ४६ खड्ग की धार से किसी को न काटकर जिननाम को छोड़ शेष सभी को अपने में समा लेनेवाला यह कालचक्र बड़ा ही अमोघ है। ४७ काल में 'व्यवहार', 'निश्चय' नामक प्रकार है। 'समय' उसे कहते हैं जिस अवधि में एक परमाणु लोकाकाश में मंदगति से अर्ध कालाणु को पार करता है।

समय समूहमसंख्या- ❋ तमादॉडावळियॆंनिक्कुभावळि संख्या
तमॅनिप्पुदादॉडुच्छ्वा- ❋ समॅनिक्कुं स्तोकमक्कुमेलुच्छ्वासं ।। ४९ ।।
स्तोकं नॆरॆदेळागॆ ल- ❋ वाकालं मूवत्तॆण्टुवरॆयॆनिप लवा-
नीकं नाळिकॆ तन्ना- ❋ ळीकाल युगं मुहूर्तमॆनॆ वर्तिसुगुं ।। ५० ।।
समयं कुंदॆ मुहूर्तदॊ- ❋ ळमोघमंतर्मुहूर्तमक्कुं मूव-
त्तु मुहूर्तमागॆ दिवसं ❋ क्रमदिं पदिनैदु दिवसमादॊडॆ पक्षं ।। ५१ ।।
मासं पक्षद्वितयं ❋ मासद्वयमॊन्दॆ ऋतु ऋतुत्रयमयन
न्यासमयन द्वयं जिन ❋ शासनदॊळ् वर्षमय्दु वर्षदॊळॆ युगं ।। ५२ ।।
एरडु युगं दशवर्षं ❋ तरतरदिंदितु दशगुणं पॆर्चुत्तुं
बरॆ पॆर्चुव कालकला ❋ परिसंखॆयनावनरिवनातने देवं ।। ५३ ।।
तवुतारवु निन्नॆगळुं ❋ सवॆयवु नाळॆगळुमदरिनिळॆ नॆरॆयदु लॆ-
क्कमिडल शब्दं नॆरॆयवु- ❋ पवणिसलॆनॆ कंडरारॊ कालद पवणं ।। ५४ ।।
अवसर्पणदॊळ् काल- ❋ व्यवस्यॆ षड्विधमॆ निक्कुमुत्सर्पणदं-
तॆवॊलल्लि मॊदल कालं ❋ प्रवर्तिकुं सुषमसुषमवॆम्बी पॆसरिं ।। ५५ ।।

इस प्रकार को जिन-पुंगवों के अतिरिक्त सामान्य जन समझ नहीं सकते । ४८ अगणित 'समय' का समूह 'आवलि' कहलाता है । अनेक समयावलियों से एक उच्छ्वास बनता है और सात उच्छ्वासों का एक 'स्तोक' । ४९ सात स्तोकों से एक 'लव', साढ़े अड़तीस लवों से एक 'गळिगे' और दो लवों से एक 'मुहूर्त', बनता है । ५० तीस मुहूर्तों से एक दिन और पंद्रह दिनों का एक 'पक्ष' बनता है । ५१ दो पक्षों से एक महीना, दो महीनों की एक ऋतु, तीन ऋतुओं से एक 'आयन', दो आयनों से एक वर्ष और पाँच वर्षों का एक 'युग' बनता है । ५२ दो युग 'दशवर्ष' कहलाता है । इन दशवर्षों से आगे दसगुना करते हुए गिनकर जो कालगणना को जान सकता है वही भगवान है । ५३ कालगणना में गत काल फिर नहीं आ सकते । आनेवाले कल समाप्त नहीं हो सकते । इनको गिनने में शब्द पर्याप्त नहीं होते । काल की गहराई को कौन देख पाया है ? ५४ अवसर्पिणी काल में काल-व्यवस्था छः तरह की रहती हैं । उत्सर्पिणी काल की तरह वह वहाँ सुषम-सुषम कहलाता है । ५५ दूसरे सुषमकाल के बाद तीसरा सुषम दुष्षमकाल प्रवर्तित (प्रारंभ) होता है । चौथा दुष्षम

एरडनॆंथ सुषम कालद ❋ पॉरॆयॉळ् मूरनॆय शुषमादुष्षमकालं
चरियिसुगुं नाल्कनॆयदु ❋ परिविडियिदप्पुदल्तॆं दुष्षमसुषमं ।। ५६ ।।

अनुसंधानं - गिडदै - ❋ दनॆयदु दुष्षमममॆंनिप्प कालं बळिका
रनॆयदतिदुष्षमं व- ❋ र्तंनमिती तॆरनॆं रहटघटिका न्यायं ।। ५७ ।।

तनुभोगायुष्यं - गळ ❋ मनुष्यरॉळ पॆर्चुवडॆंगुमुत्सर्पणदॉळ्
तनुभोगायुष्यं - गळ ❋ मनुष्यरॉळ् कुंदुवडॆंगुमवसर्पणदॉळ् ।। ५८ ।।

एरडु युगमॉन्दॆं कल्पं ❋ निरंतरं शुक्ल कृष्ण पक्षंगळवोल्
परिवर्तिसुगुं तत्क- ❋ ल्पराजिगारय्वॉडिल्ल मॉदलुं तुदियुं।। ५९ ।।

इंतनंतानंत कल्प परिवर्तनमप्पुकॆय्द आर्याखंडदवसर्पणद मोदलकाल—

दॉळ्—

सुरभूजं ज्योतिरंगं बॆळगॆ तमद मातिल्ल चंदार्करूं
मैगॆरॆदिर्पर् तोरवारूं ऋतु पगलिरुळॆम्बी विभेदंगळिल्ला

सुषम कहलाता है । ५६ क्रम में पाँचवाँ दुष्षम काल कहलाता है। छठा अतिदुष्षम काल है। इस तरह रहँट के घटों के समान काल उत्सर्पिणी, अवसर्पिणी (काल) बदलते हैं। ५७ उत्सर्पिणी काल के मनुष्यों में देह, भोग, आयु आदि वर्धित होते हैं। अवसर्पिणी काल के मनुष्यों में वे घटते हैं। ५८ दो युग, शुक्लपक्ष और कृष्णपक्ष की तरह, कल्प बनते हैं। गहराई से विचार करने पर उसका न आदि है और न अंत। ५९

इस तरह अनंतानंत कल्प-परिवर्ती होकर आर्यखंड में अवसर्पिणी के प्रथम (प्रारम्भ) काल में—

कल्पवृक्ष के प्रकाशित होने पर अंधकार मिट गया। सूर्यचंद्र अदृश्य हुए। एक साथ छः ऋतुएँ दिखाई पड़ीं। रात-दिन का (कोई) भेद नहीं रहा। प्रजा-राजा का कोई अंतर नहीं रहा। मनुष्य की चिन्ता, बुढ़ापा, आकांक्षाएँ न रहकर अचानक सुषमसुषम काल फैला हुआ है। ६० इस (ऐसे) काल में समुचित बोलचाल एवं अतिशय रूप कला

ळरसॅम्बी पंबलिल्लार्जवरॅ मनुजरॅल्ल जरांतकमिल्ला-
तुरमिल्लाश्चर्यभूतं सुषमसुषम काल स्वभाव प्रभावं ॥ ६० ॥

दंपतिगळॆ पुट्टुवरा- ❋ गॆं पॉल्लमॅ पुट्टदनतिशय रूपकला
संपन्नरॅनिसि सुरगति- ❋यं पडॆदर् कडॆयॊळुचित भाषावेषर ॥ ६१ ॥

अपमृत्यु विरहितं मू- ❋ रॅ पळितमायुष्यमुद्दमरूसासिर बि-
ल्लपसारित मलमूत्रा- ❋दि परीषह दोषमपघनं दंपतिया ॥ ६२ ॥

त्रिदिनदनितु कालक्कॉमॅ संसार सौख्य
प्रदमिदॅनिप दिव्याहारमं भोजनांगं
बदरफल समानाकारमं कॉट्टुदं कॉ-
डुदर बलविलासंबॅत्तु युग्मंगळिकुं ॥ ६३ ॥

सिरिय मॉगरसद पॉस मै ❋ सिरियॅनिकुं पूगॉळंगळा नॅलननितुं
सुरचापद बॅळसिन हर ❋वरियॅनिकुं पंचरत्नरूचिवल्लरियिं ॥ ६४ ॥

चतुरंगुलमॅनिसिद तरू- ❋ ण तृण ग्रासदॉळॆ तणिदु तिळिनीरं पी-
दॆतनुक्रीडा रत मृग- ❋ततिगळ् दम्पतिगळल्लि नलियुत्तिकुं ॥ ६५ ॥

कुसुम स्रग्वसनान्न पान विविधातोद्य प्रकाश प्रदी-
प सुधासद्म विचित्र भाजन विभूषानीकमं कॉट्टु सं-
तसमं माडॆ दशांग कल्पतरूगळ स्वर्गक्कॆ संसार सा-
र सुखक्कग्गळमॅन्नदा प्रथमकाल श्रीयनेवण्णिपें ॥ ६६ ॥

से पूर्ण दम्पति जन्म लेते हैं। अंत में वे सुरगति पाते हैं। ६१ ये दम्पति अपमृत्यु नहीं पाते और उनकी आयु तीन 'पळित' (जैनों के समय का हिसाब) है। इन्हें मल-मूत्र, शीतोष्ण के द्वंद्व नहीं रहते। ६२ ये दम्पति तीन दिन में एक बार संसार-सुख के अनुकूल रहनेवाले बदरी फल जैसे (समान) दिव्य आहार का सेवन करके बल विलास पाकर जीते हैं। ६३ वहाँ के पुष्पवन लक्ष्मी के श्रीमुख की नयी कांति बनकर आये वहाँ की धरती झूमती हु पुण्पलताओं से कामदेव के धनुष का प्रकाश फैलानेवाला क्षेत्र बनकर सुशोभित हुई। ६४ घास के अंकुरों से भूख मिटाकर, तालाब का स्वच्छ पानी पीकर, शरीर से शरीर मिलाकर खेलनेवाले मृगदम्पती वहाँ नाचा करते हैं। ६५ पुष्पमालाओं को वस्त्र के रूप में, विविध वाद्यों को अन्नपान के रूप में, प्रकाश-प्रदीपों को भूषण के रूप में देकर संतोष प्रदान करने वाले दस तरह के कल्पवृक्ष इस काल में रहते हैं, तो यह कहना गलत नहीं होगा कि यह संसार-सुख स्वर्ग (-सुख) से बढ़कर है। ६६

कैलास्मा भगवान् सदाशिव थिया ध्यान्मा बहुत् मन् दिई ।
बायाँ काखमहाँ पियारि हितकी श्री पार्वतीजी लिई ॥
एक् दिन् पार्वतिले तहीं शिवजिथ्यैं सोधिन् चरण्मा परी ।
आफू ता सब जान्दथिन् तर दया सम्पूर्ण लोक्मा गरी ॥२४॥

हे नाथ् ! बिन्ति म गर्दछू हजुरमा राम् हुन् जगत्का पति ।
राम्देखी अरु कोहि छैन जनका संसार तर्न्या गति ॥
जस्मा भक्ति गर्‍यो भन्या अति गँभीर् संसार सागर्महाँ ।
नौका झैं तरिजान्छ झट्पट गरी तेस् नर्को देहै तहाँ ॥२५॥

यस्ता राम्कन लोकमा जनहरू एक् ईश्वरै मान्दछन् ।
कोहि तत्त्व नपाइ मूर्खहरु ता मानिस् सरी जान्दछन् ॥
क्या भन्छन् ति कि राम ईश्वर भया शोक् क्यान तिन्ले गर्‍या ।
सीता रावणले जसै हरिदियो ठूलै विपत्मा पर्‍या ॥२६॥

ईश्वर्लाइ त शोक् हुँदैन र भनूँ हूँदैन अज्ञान् पनि ।
इन्मा यो सब देखियो त कसरी जान्नू इ ईश्वर् भनी ॥
लोक् यस्तो पनि भन्छ कोहि भगवान् यस्मा विचार् खुप् गरी ।
जस्तो हो सब यो बताउनुहवस् सन्देह मेरो हरी ॥२७॥

पार्वती जी को बैठाये अत्यन्त ध्यानमग्न थे । एक दिन पार्वती जी ने चरणों में झुककर, स्वयं सब जानते हुये भी, सम्पूर्ण लोक के प्रति दयालु होकर कहा—। २४ हे नाथ ! मैं विनती करती हूँ कि राम जगत्पति हैं । राम के सिवा [भक्त-] जनों को संसार से तारने वाला और कोई नहीं है । उनकी भक्ति रूपी नौका के सहारे मनुष्य अत्यन्त गंभीर संसार-सागर से तुरन्त पार हो जाता है । २५ ऐसे राम को जगत् में (बुद्धिमान्) मनुष्य केवल ईश्वर ही मानते हैं । पर मूर्ख लोग तो कोई तत्व न पाकर [उनको] मनुष्य की तरह ही जानते हैं । उनका कहना है कि यदि राम ईश्वर हैं तो रावण के सीताहरण करने पर उन्होंने शोक क्यों किया और इतनी विपत्ति में क्यों पड़ गये ! २६ ईश्वर को शोक नहीं होता और अज्ञान भी नहीं होता । राम में शोक, अज्ञान—दोनों ही देखा गया, फिर इन्हें ईश्वर कैसे मानें—कोई मनुष्य ऐसा भी कहते हैं । भगवन् ! इस पर विचार करके, जैसे भी हो, मेरे मन के संदेह को दूर करने के लिए यह सब बताने की कृपा करें । २७ पार्वतीजी के ऐसे प्रश्नों को सुनकर शिवजी अत्यन्त प्रसन्न हुए । राम ऐसे ही प्रभु हैं, यह कहते

यस्ता प्रश्न सुन्या र पार्वतिजिको शम्भू खुशी खुप् भया ।
राम् यस्ता प्रभु हुन् भनेर शिवले सब् तत्त्व ताहीं कह्या ॥
सून्यौ पार्वति ! राम् अनादि परमेश्वर् हुन् ति आकाश् सरी ।
सब् ढाकीकन बस्तछन् अधिविराट् सम्पूर्ण सृष्टी गरी ॥२८॥

जस्तै चुम्बकका नजीक् परिगया नाच्छन् इ लोहा पनि ।
तेस्तै जस्कन पाइ नाच्तछ जगत् नाना प्रकार् को बनी ॥
यस्तो तत्त्व नजानि मानिस सरी राम्लाइ जो गर्दछन् ।
संसार्का इ अनन्त ताप्हरु तिनैलाई सदा पर्दछन् ॥२९॥

बादल्ले अरु ढाक्छ ढाक्छ अरु क्या श्रीसूर्य्यलाई पनि ।
लोक् ता भन्छ उठ्यो र बादल ठुलो सब् सूर्य्य ढाक्यो भनी ॥
त्यस्तै तत्त्व न जानि बोल्छ जन जो सो भन्छ मानिस् पनि ।
योगी ज्ञानि त चिन्दछन् इ रघुनाथ् त्रैलोक्यका नाथ् भनी॥३०॥

जस्लाई रिङटा छ भन्छ उ फगत् घुम्छन् उ पर्वत् भनी ।
घुम्दैनन् इ त घुम्छ तेहि रिङटा जान्दैन कोहि पनि ॥
अज्ञान् रूप् रिङटा हुन्या जनहरू भन्छन् ति मानिस् पनि ।
राम् ता हुन् परमेश्वरै सकल यस् चौधै भुवन्का धनी ॥३१॥

हुए शिवजी ने सब तत्व कह सुनाया । सुनो पार्वती, राम आकाश की भाँति अति महान् हैं और सम्पूर्ण सृष्टि को उत्पन्न करके सबको आच्छादित कर रहने वाले अनादि परमेश्वर हैं । २८ जैसे चुम्बक के निकट जाने पर लोहा नाचने लगता है, वैसे ही जिसके आधार पर जगत् अनेक प्रकार के रूपों में होकर नाच रहा है, ऐसे तत्व को न जानकर, जो लोग राम को मनुष्य की भाँति समझते हैं उन्हीं को संसार की ये अनन्त पीड़ाएँ सदा दुखी करती रहती हैं । २९ बादल सबको तो ढक ही लेता है । यहाँ तक कि सूर्य को भी ढक लेता है । जग तो कहता है कि घना बादल उठा है और उसने पूरे सूर्य को ढक लिया है । जो जन तत्व को नहीं जानते वेही ऐसा कहते हैं । योगी ज्ञानी तो इन रघुनाथ को त्रिलोक के नाथ कहकर ही पहचानते हैं । ३० जिसको चक्कर आता है वही कहता है कि पर्वत घूमता है, परन्तु वह घूमता नहीं । कोई नहीं जान पाता कि वही स्वयं चक्कर में घूमता है । अज्ञानरूपी चक्कर से युक्त मनुष्य ही राम को मनुष्य कहते हैं । राम तो इन चौदह भुवनों के स्वामी साक्षात् परमेश्वर ही हैं । ३१ सूर्य में भी कहीं अंधेरा है, क्या ऐसा ही

सूर्य्यैंमा पनि अन्धकार् छ कहिं क्या तस्तै छ राम्मा पनि ।
शोक् अज्ञान् रति छैन जान्नु सबले आत्मा इनै हुन् भनी ।।
आर्को गोप्य रहस्य भन्छु सुन यो सम्वाद् सितारामको ।
भूभार् हर्नु थियो हऱ्या जब सबै छिन्छान् भयो कामको।।३२।।

भूमीको सब भार् हरेर रघुनाथ् राज् गर्न लाग्या जसै ।
देख्या श्रीहनुमानलाइ र दया आयो प्रभूको तसै ।।
सीतालाइ हुकूम् तहाँ दिनुभयो सीते ! हनूमान् बड़ा ।
हाम्रा भक्त भया इ तत्त्व लिनका खातिर् यहाँ छन् खड़ा।।३३।।

इन्लाई तिमि तत्त्व देउ भनि यो हूकूम् भयेथ्यो जसै ।
सीताले हनुमानलाइ दिनुभो जुन् तत्त्व हो सो तसै ।।
आर्को तत्व त केहि छैन हनुमान् कुन् आज आर्को कहूँ ।
राम् हुन् ब्रह्म इनैकि शक्ति बलियो माया भन्याकी म हूँ।।३४।।

रामको सन्निधि पाइ गर्छु सबको सृष्टी र पालन् पनि ।
आरोप् रामविषे गरिन्छ सब यो गर्न्या इनै हुन् भनी ।।

राम के संबंध में भी नहीं है ? शोक, अज्ञान आदि दोषों का उनमें लेशमात्र भी नहीं । सभी यह जान लें कि वही सबकी आत्मा हैं । दूसरा गोपनीय रहस्य कहता हूँ, यह सीताराम का सम्वाद सुनो । पृथ्वी के भार को हरण करने वाला कौन था । जब उन्होंने ही पृथ्वी को भार से रहित किया तभी सब कार्य पूर्ण हुए। ३२ [असुरों को मार कर]पृथ्वी के भार को हरण करके जब श्रीरघुनाथ राज्य-सिंहासन पर बैठे तो उन्होंने श्रीहनुमान को देखा । उन्होंने कृपा करके उसी समय सीता को आज्ञा दी, हे सीते ! हमारे महान् भक्त हनुमान तत्वज्ञान को प्राप्त करने के लिए खड़े हैं । ३३ जैसे ही राम का यह आदेश हुआ कि इन्हें तुम तत्वज्ञान दो, वैसे ही सीता ने जो भी तत्व था हनुमान को प्रदान किया । हे हनुमान ! राम के अतिरिक्त संसार में और कोई दूसरा तत्व नहीं । हे हनुमान ! और क्या कहूँ, राम ही साक्षात् परब्रह्म हैं और मैं इन्हीं की शक्ति-स्वरूप हूँ । ३४ राम का आश्रय पाकर [प्रकृति-स्वरूपा] मैं सब प्राणियों की सृष्टि करती हूँ, सबका पालन करती हूँ । वास्तव में सब कुछ करने वाले राम ही हैं— विद्वान् लोगों का ऐसा ही कथन है । [किन्तु राम ब्रह्मस्वरूप हैं । पृथ्वी पर जो कुछ उनकी लीलाएँ हैं, वे तो उनकी प्रकृति-स्वरूपा मैं कर रही हूँ ।] अत्यन्त पवित्र रघुवंश में प्रभु रामचन्द्र जी ने जन्म

यस्निर्मल् रघुवंशमा प्रभुजिले जो जन्म याहीं लिया ।
विश्वामित्र निमित्त यज्ञहरुमा राखी दया मन् दिया ॥ ३५ ॥

जो पाप् गौतमपत्निका हरिदिया जो भाँचिदीया धनु ।
जो मैलाइ बिहा गऱ्या सब कुरा यस्ता कहाँ तक् भनूँ ॥
जो ता गर्व हऱ्या ति वीर् परशुराम्-का जो अयोध्या बस्या ।
बाह्रै बर्ष बिहा गऱ्यापछि बसी जो ता वनैमा पस्या ॥ ३६ ॥

यस्ता काम् जति काम् भया ति सब काम् गर्न्या म हूँ तापनि ।
भन्छन् लोक त रामलाइ सबका कर्ता इनै हुन् भनी ॥
अन्तर्यामि अनादि साक्षि तिनिहुन् कर्ता कहाँ ती थिया ।
मेरा गुण लिंदा त लोकहरुले कर्ता भनी पो दिया ॥ ३७ ॥

येती ताहिं सिताजिबाट उपदेश् पाई सक्याथ्या जसै ।
आफै राम् प्रभुले पनी दिनुभयो फेर् तत्त्वको ज्ञान् तसै ॥
यस्तो हुन्छ परात्म आत्म यहि हो यो हो अनात्मा भनी ।
आत्मा और परात्मलाइ बुझदा पाइन्छ मुक्ती पनि ॥ ३८ ॥

आत्माको र परात्मको छ कति फेर् त्यो एक जानीलिनू ।
जुन् जड् चीज अनात्म हुन् उ त झुटा जानेर छोडीदिनू ॥

लिया, जिन्होंने विश्वमित्र द्वारा आयोजित यज्ञों में दया कर मन को अर्पित किया । ३५ जिन्होंने गौतम-पत्नी (अहिल्या) के पापों का निवारण किया, जिन्होंने शिवधनुष तोड़ा और जिन्होंने मुझे विवाहा—इस प्रकार की सब बातों को कहाँ तक कहूँ । जिन्होंने उन वीर परशुराम के दर्प को शांत किया, जिन्होंने विवाह के पश्चात् ही बारह वर्ष के लिए वन में प्रवेश किया । ३६ इस प्रकार के जितने कार्य हैं उन सबको वास्तव में मैं ही करती हूँ । जग कहता है कि राम इन सभी कार्यों के कर्ता हैं । वे तो अन्तर्यामी, अनादि, द्रष्टा [मात्र] हैं, वह कर्त्ता कहाँ ? मेरे इन [प्रकृति के] गुणों को जानकर ही संसार ने [द्रष्टा राम को] कर्त्ता कह दिया । ३७ जब हनुमान सीता से इतना ज्ञानोपदेश प्राप्त कर चुके तो स्वयं प्रभु ने भी उन्हें पुनः तत्व का ज्ञान दिया । आत्मा ही परमात्मा है । आत्मा और परमात्मा को समझने से ही मुक्ति प्राप्त होती है । ३८ आत्मा और परमात्मा में क्या भेद है इसे ज्ञात कर लेना और जो जो वस्तुएँ जड़ और आत्मा से परे हैं उन्हें मिथ्या जान कर छोड़ देना [यही तत्वज्ञान है] । आत्मा और परमात्मा को विचार कर

आत्माको र परात्मको गरि विचार् एक् तत्त्व जान्यो जसै ।
अज्ञान् सब् छुटिजान्छ ती पुरुषको मै तुल्य हुन्छन् तसै ।।३९।।

यो मेरो हृदयै त हो प्रिय छ यो खुप् गुप्त राख्नू पनि ।
तत्त्वज्ञान् भनि यै कहिन्छ बुझिल्यौ सून्यौ हनुमान् ! भनी ।।
तत्त्वज्ञान् हनुमानलाइ रघुनाथ्- ले यै दिनूभो तहाँ ।
सोही ज्ञान् तिमिथ्यैं कहीकन सक्याँ सम्पूर्ण मैले यहाँ ।।४०।।

सून्यौ पार्वति ! रामको हृदय यो जो जो त पाठ् गर्दछन् ।
जो छन् जन्म सहस्रका सकल पाप् तिन्का सबै टर्दछन् ।।
जाति भ्रष्ट अधम् हवस् तपनि लौ यस्लाइ खुप् पाठ् गरी ।
राम्को ध्यान् पनि गर्छ यो पनि भन्या त्यो जान्छ संसार् तरी ।।४१।।

सूनिन् पार्वतिले अपार महिमा यो रामजीको जसै ।
फेर् विस्तार् गरी सुन्नलाइ मन भो ती पार्वतीको तसै ।।
बिन्ती फेर् शिवथ्यैं गरिन् पनि तहाँ हे नाथ् ! सबै रामको ।
लीला सुन्न मलाइ मन् हुन गयो येही बुझ्याँ कामको ।।४२।।

सूनोस् राम-लिला भनेर म उपर् माया बहूतै धरी ।
सब् लीलाहरु फेर् बताउनु हवस् जो छन् ति विस्तार् गरी ।।

[उनके] एक तत्व होने का जैसे ही ज्ञान होता है वैसे ही उस पुरुष की सारी अज्ञानता नष्ट हो जाती है और वह मेरे समान हो जाता है। ३९ यह जो तत्वज्ञान मैंने दिया है यह मेरा हृदय है, यह मेरा प्रिय है; इसे अत्यन्त गुप्त रखना। यह समझ लो कि तत्वज्ञान इसी को कहते हैं। [शंकर ने कहा—] राम ने हनुमान को यही तत्वज्ञान दिया था। हे पार्वती, वही मैंने तुमसे कहा। ४० हे पार्वती, सुनो जो लोग इस राम-हृदय का पाठ करते हैं उनके सहस्र जन्मों में किये गये सम्पूर्ण पाप नष्ट हो जाते हैं। जातिभ्रष्ट तथा अधर्मी होने पर भी इसका पाठ करके जो राम का ध्यान करता है वह संसार से तर जाता है। ४१ पार्वती ने जब श्रीरामजी की इस अपार महिमा को सुना तो पुनः विस्तारपूर्वक सुनने का उनका मन हुआ। फिर उन्होंने शिवजी से विनती की, हे नाथ ! मुझे राम की लीला को श्रवण करने की पुनः इच्छा हुई है, मैं इसे ही कल्याणकारी समझती हूँ। ४२ रामलीला की कथा सुना कर आपने मेरे ऊपर महती कृपा की है। फिर भी राम की यह लीला विस्तारपूर्वक सुनने की मुझे उत्कण्ठा है। पार्वती जी का यह प्रेमाग्रह सुनकर शिवजी ने बड़े प्रेम के साथ सम्पूर्ण

यो प्रेम् पार्वतिको सुन्या र शिवले खुप् प्रेम राखिन् भनी ।
जो जो हुन् सब राम्-चरित्र शिवले ताहाँ बताया पनि ।।४३।।

ई भूमिकन रावणादि विरले भारी बनाई दिया ।
भारी भै ति रुँदै गइन् उहिँ जहाँ ब्रह्मा बस्याका थिया ।।
पापी धेर् भइ भार् भयो मकन ता यो भार छूटोस् भनी ।
आयाँ आज दयानिधान् चरणमा यो बिन्ति पारिन् पनि।।४४।

यस्तो बिन्ति सुनी दया पनि उठ्यो ती भूमिमाथी तहाँ ।
दौडी क्षीर समुद्रका तिर गया विष्णू रहन्थ्या जहाँ ।।
इन्द्रादीहरु साथमा लिइ स्तुती ताहाँ गन्याथ्या जसै ।
सर्वात्मा भगवान् प्रसन्न हुनु भै दर्शन् दिनूभो तसै ।।४५।।

देख्या सुन्दर रूप् जसै प्रभुजिको ब्रह्मा चरण्मा पऱ्या ।
भक्तीले स्तुति खुप् गरेर खुशि भै हात् जोरि बिन्ती गन्या ।।
हे नाथ्, रावण दुष्ट भै सकल लोक्-लाई विपत्ती दियो ।
इन्द्रादीहरुको त तेज् सहजमा खैंचेर तेस्ले लियो ।।४६।।

यस्लाई अब मारिबक्वसनु ह्वस् मानिस् सरीका बनी ।
मानिस्देखि मन्यास् भनेर वरदान् दीई रह्याँछू पनि ।।

राम-चरित्र का वर्णन किया । ४३ इस धरती को रावण जैसे [दुरात्मा]वीरों के पाप ने बोझिल बना दिया । [निदान्] जहाँ ब्रह्माजी बैठे थे, पापों के बोझ से व्याकुल होकर धरती रोती वहाँ गई । पापियों की वृद्धि होने से मुझ पर भार अधिक पड़ा है । इस भार से छुटकारा तो मिले, हे दयानिधान! इसी आकांक्षा से आज मैं आयी हूँ । यह कहती हुई पृथ्वी ने [चतुरानन ब्रह्मा के] चरणों में विनती की । ४४ इस प्रकार विनती सुनकर ब्रह्मा को पृथ्वी पर दया उत्पन्न हुई और शीघ्रही वे पृथ्वी को लिए हुए क्षीरसागर की ओर चले जहाँ विष्णु भगवान् निवास करते थे । इन्द्रादि देवों को साथ लेकर जैसे ही स्तुति की, वैसे ही सर्वात्मा भगवान् ने दर्शन दिया । ४५ प्रभुजी का भव्य रूप देखते ही ब्रह्माजी उनके चरणों में गिर पड़े । प्रसन्न-भाव से भक्तों ने स्तुति की और ब्रह्मा ने हाथ जोड़कर विनय की । हे नाथ ! रावण दुष्ट आचरण से सारे संसार को विपत्ति में डाले हुए है । इन्द्रादि देवताओं के पराक्रम को तो उसने बड़ी सरलता से खींच लिया है अर्थात् उन्हें पराजित कर दिया है । ४६ [सो कृपा करके] मानव रूप धारण कर अब उसका संहार कीजिए ।

ब्रह्माको बिनती सुनेर भगवान्- को यो हुकूम् भो अनि ।
रावण्लाइ म मारुँला सहजमा मानिस् सरीको बनी॥४७॥

माया मेरि सिता भयेर रहनिन् छोरी जनक्की भई ।
छोरो भैकन जन्मुँला म दशरथ् जीका घरैमा गई ॥
सीतालाइ लियेर पूर्ण गरुँला बिन्ती म तिम्रो भनी ।
अन्तर्धान् भगवान् तहीं हुनुभयो त्रैलोक्यका नाथ् अनि॥४८॥

अन्तर्धान् भगवान् जसै हुनुभयो इन्द्रादिलाई पनि ।
ब्रह्माले खुशि भै अह्लाउनुभयो भूलोक जाऊ भनी ॥
मानिस् भै भगवान् जती त रहनन् तेस् पृथ्वितल्मा गई ।
बानर् भैकन सब् तिमि बसिरह्या साहाय जस्ता भई ॥४९॥

ब्रह्माजी पनि सत्यलोक् गइगया येती अह्लाईवरी ।
इन्द्रादी पनि वानरै भइ रह्या सब् पृथ्विलोक्मा झरी ॥
यै बीच्मा दशरथ् बडा विर थिया राजा अयोध्यामहाँ ।
तिन्को बृद्ध उमेर् भयो र पनि एक् छोरा भयेनन् तहाँ ॥५०॥

ताप्ले पूर्ण भई गुरूसित गया सोध्या उपायैं पनि ।
हे सर्वज्ञ मुने ! कसो गरि हुनन् छोरा मलाई भनी ॥

'मनुष्य के हाथों मरेगा' ऐसा वरदान भी मैं उसको दे चुका हूँ। ब्रह्मा की इतनी विनती सुनकर भगवान् की यह अनुग्रहवाणी हुई, मैं मानव-रूप धारण कर सहज ही रावण का विनाश कर दूँगा। ४७ मेरी शक्ति, सीता नाम से जनक की पुत्री होगी; मैं दशरथ के घर में उनके पुत्र के रूप में जन्म लूँगा। सीता को लेकर मैं तुम्हारी आकांक्षा पूरी करूँगा। इतना कह कर त्रिलोकीनाथ भगवान् विष्णु वहीं अन्तर्द्धान हो गये। ४८ जैसे ही भगवान् अन्तर्द्धान हुए, प्रसन्न होकर ब्रह्मा जी ने इन्द्र को भी मानवलोक में जाने का आदेश दिया। जब तक भगवान् मानवलोक पृथ्वी में मनुष्य होकर रहें तब तक तुम बन्दर होकर उनके सहायक की तरह रहो। ४९ इतना कहकर ब्रह्मा जी भी स्वर्गलोक को चले गये। इन्द्रादि [देवता] भी पृथ्वी में उतर कर बानर बनकर रहने लगे। इन्हीं दिनों अयोध्या में महान् वीर राजा दशरथ [राज्य कर रहे] थे। उनकी वृद्धावस्था आजाने तक भी कोई पुत्र नहीं हुआ। ५० चिन्ताग्रस्त होकर राजा दशरथ ने गुरु (वसिष्ठ) के पास जाकर अपनी चिन्ता के निवारण का उपाय पूछा। हे मुनिवर ! मुझे किस प्रकार पुत्र-प्राप्ति

यस्काम्‌ले फल मिल्छ यो भनि सबै जान्या वशिष्ठैं थिया ।
यस्तो बिन्ति सुनी वशिष्ठ गुरुले युक्ती बताई दिया ॥५१॥

हुन्छन् पुत्र अवश्य जल्दि महाराज् एक् यज्ञ ऐले गऱ्या ।
शान्ताका पति ऋष्य शृंग ऋषि छन् ती डाक्न ऐले पऱ्या ॥
ती हामी बसि यज्ञ एक् हजुरको खातिर् गरौंला जसैं ।
चार् छोरा अति वीर् हुनन् हजुरका सब् ताप छुट्नन् तसैं॥५२॥

यस्तो अर्ति वशिष्ठ को जब सुन्या राजा बहुत् खुश भया ।
शान्ताका पतिलाइ डाकीकन खुप् याग् गर्न लागीगया ॥
ऋष्यैश्शृंग वशिष्ठ दुइ ऋषिले होम् गर्न लाग्या जसै ।
पायस्को थलिया लिईकन तहाँ आया ति अग्नी तसै ॥५३॥

यस् पायस्कन आज लेउ महराज् ! छोरा हुन्याछन् भनी ।
राजालाइ दिया र पायस तहाँ लुक्या ति अग्नी पनि ॥
राजा खूशि भई दुवै ति ऋषिका कोमल् चरण्मा परी ।
कौशल्या र ति कैकयाकन दिया पायस् दुवै भाग् गरी॥५४॥

खानै बाँकि थियो तसै बखतमा आइन् सुमित्रा पनि ।
कौशल्या र ति कैकयीसित भनिन् ख्वै भाग मेरो भनी ॥

होगी । इस कर्म से यह फल प्राप्त होगा—यह जाननेवाले गुरु वसिष्ठ ही थे । [राजा की]ऐसी विनती सुनकर गुरु वसिष्ठ ने उपाय बता दिया । ५१ महाराज ! एक [पुत्रेष्ठि] यज्ञ करने से शीघ्र ही पुत्र की निश्चय प्राप्ति होगी । शान्ता के पति ऋष्यशृङ्ग एक ऋषि हैं, उन्हें अभी बुलाना चाहिए और उनके साथ बैठकर हम लोग आपके लिए वैसा ही एक यज्ञ करेंगे । [उसके फलस्वरूप] आपके चार अत्यन्त वीर पुत्र होंगे और आप सब तापों से मुक्त होंगे । गुरु वसिष्ठ का यह परामर्श सुनकर राजा अत्यन्त प्रसन्न हुए । शान्ता के पति ऋष्यशृंग को बुलाकर [उनके आदेशानुसार] सविधि यज्ञ का आरम्भ किया । जैसे ही ऋष्यशृङ्ग और वसिष्ठ, दोनों ऋषि हवन करने लगे, वैसे ही अग्निदेव खीर की एक थाली हाथ में लिए वहाँ प्रगट हुए । ५३ प्रस्तुत इस खीर को ग्रहण करें, स्वयं भगवान् पुत्र रूप में आपके यहाँ जन्म लेंगे । यह कहते हुए राजा को खीर देकर उसी समय अग्नि-देव अन्तर्द्धान हो गये । राजा ने प्रसन्न होकर दोनों ऋषियों के कोमल चरणों में साष्टांग प्रणाम किया । खीर के दो भाग करके, कौशल्या और कैकेयी को [एक-एक भाग] दिया गया । ५४

वनय कथ बोज़ दय ज़ानुन पनुन वीर ।
असुर मंलव्रर मनुक गौंरुशब्द दिस तीर ।।
अनुन येल गौंर पनुन सु हावी छलु हेर ।
खसख आकांश्य हरदिकि कोचि किन फेर ।। ४५ ।।

यि केंह रूदुय ति छुय पानस निशे छार ।
लबख तौंलि यौंलि व्रंटिथ त्रावख अहंकार ।।
गौंरव गंण्डमुत्र छि वथ कथ बोज़ कन दार ।
छु क्याह रोज़ुन छु बोज़ुन रामावतार ।।
ति बोज़नु सु॒त्य वौंन्दस आनन्द आसी ।
यि कथ रठ याद ईशर व्याद कासी ।।
ति ज़ानख पानु दय्युगत क्या व्रेंह हावी ।
कत्युक ओसुख व्रेंह कौत-कौत वातुनावी ।। ४९ ।।

पारवती जी हुन्द समवाद शिवुनाथ जियस सु॒त्य

प्रुछुस दीवियि शिवुजी पौंज़ यि वन ।
सपनि क्या हाल कलियौंगु क्यन मनोशन ।।
तिम आसन दरमुनिश वाराह अदरमी ।
दरम त्रावन स्यठाह लागन कौंकरमी ।।

अपने गुरु की शरण में जा, वही तुझे मुक्ति की सीढ़ी दिखायेगा, (जिससे) तू हृदय के कूचे से होता हुआ ऊपर (शून्य) आकाश पर चढ़ जायेगा ।। ४५ ।। जो शेष बचेगा उसे अपने पास में ढूँढ, मगर इसे तभी ढूँढ पायेगा जब तू अहंकार को त्याग दे । गुरुओं ने एक सत्पथ तैयार किया है, जरा कान लगाकर सुन । [यह सत्पथ है 'रामावतार' की कथा का] यहाँ कुछ भी नहीं रहेगा, बस रहेगी रामावतार की कथा । इसे सुनकर हृदय आनन्दित हो जायेगा—यह बात तू याद रख, इससे तेरी सारी दुविधाएँ मिट जायेंगी । तू स्वयं जान जायेगा कि यह कथा तुझे कहाँ से कहाँ पहुँचायेगी ।। ४९ ।।

पार्वतीजी का संवाद शिवजी के साथ

देवी ने शिव से पूछा, सत्य कहिए कि कलियुग के मनुष्यों का क्या हाल होगा । (सुना है) वे अत्यधिक अधर्मी होंगे तथा धर्म का त्यागकर वे कुकर्मी बनेंगे । (सभी) शापों में गिरफ़्तार हो जायेंगे फिर

गछ्न शापन अन्दर सॉरिय गिरफ़तार ।
बॊडन पापन अन्दर किथु पॉठ्य छुख तार ॥
गछ्न पापन अन्दर सॉरिय ज़गथ बन्द ।
दज़न छस किथु वुछन तिम सॊख तु आनंद ॥
मे छुम तलवास तिम किथु पॉठ्य मॊकुलन ।
तिमन आस्यम स्यठाह् गोमुत मलुत मन ॥ ५ ॥

वननि दीवियि कुन लॊग यि सदाशिव ।
मॊकुलन तिम खॊशी सूतिन च्रुह् कन थव ॥
वननि दीविय लॊग शिवजी कनव बोज़ ।
मॊकलन तिम दॊखु निश च्रुह् सुखित रोज़ ॥
समय गछि युथ ज़ि कांसि रोज़ि नु सथ याद ।
अमा पानस करन तिम रामु सुन्द नाद ॥
वॊन्दस कथ थाव तम्यसुन्द नाव ह्यन कूत्य ।
मॊकुलन नारुह् नरकुकि निश तमि सूत्य ॥
अगॉफिल यिम मनश ह्यन रामु सुन्द नाव ।
तिमन सोरुय मनुक मलुच्रर छलनु आव ॥ १० ॥

अदय कांछाह सॊर्यस मनु किन्य हुर्यस आये ।
दियस दरशुन नियस वैकुंठ छस जाये ॥

पापों में डूबे इन (कलियुग-वासियों) का निस्तार कैसे होगा ? सारा जगत् पापों में जकड़ जायेगा, फिर भला उन्हें सुख-आनन्द की प्राप्ति कैसे होगी—(इसी दुःख से) मैं (मन-ही-मन) जल रही हूँ। मन मेरा उद्विग्न हो रहा है कि ये (बेचारे) मुक्त कैसे हो सकेंगे (क्योंकि) इनका मन तो (हे मेरे प्राणपति !) बहुत ही संतप्त रहा होगा ॥ ५ ॥ (इस पर) सदाशिव देवी से कहने लगे—वे ख़ुशी-ख़ुशी मुक्त होंगे (तू चिन्ता न कर), और मेरी बात ध्यान से सुन। वे आगे कहने लगे—उनके सभी दुःख (निश्चय ही) दूर हो जायेंगे, तू ज़रा मेरी बात ध्यान से सुन और मन में ख़ुशी ला। समय ऐसा आयेगा जब किसी को भी सत्य याद न रहेगा। (ऐसे में) कितने ही दुःख के मारे राम को पुकारेंगे और यह बात तू अपने हृदय में बिठा दे कि उसका नाम लेने पर वे (भयंकर से भयंकर) नरकाग्नि से भी मुक्ति प्राप्त कर लेंगे। जो ग़ाफिल मन (असावधानी) से भी राम का स्मरण करेंगे, उनके मन का सारा मैल धुल जायेगा ॥१०॥ और जो मन से (सावधानीपूर्वक) स्मरण करेंगे वे चिरायु

अदय कांह् लोलु किन्य परि रामु रामु ।
सु प्रावि जिन्दु तनय सौंरगु जामु ॥
तसुन्दि दरशनु सुत्य परज़ली पछिम पूर ।
तिथय यिथु दीपु सुत्य गछि अनिगटु दूर ॥
कनव युस बोज़ि बूज़िथ श्रोच्रि तस मन ।
गछ्यस छ्यतु नार नरकुन तन बन्यस सौंन ॥
अंछिव युस डेशि तस चेश्मन यियस गाश ।
तिथय यिथु पांठ्य सिरियस आसि प्रकाश ॥ १५ ॥
थवन यिम कन तु बूज़िथ मन गछ्यख साफ ।
गल्यख राख्युस मनुक सोरुय च्रल्यख पाप ॥

दौंपुस दीवियि शिवुजी बोज़ु नावुम ।
तम्युक कारन तसुन्द प्रकच्रार हावुम ॥
दौंपुस तंम्य यॆलि सु रावुन गव नमूदार ।
कंरिथ तफ लूख ज़ीनिन यॆच कंरिन कार ॥
मौंगुन स्रथ सारनी हुंदि दस्तु मोकूफ ।
मौंठुस नतु संहल ज़ोनुन मनशि सुन्द रुफ ॥

होंगे तथा राम स्वयं दर्शन देकर उन्हें वैकुण्ठ ले जायेंगे। यदि कोई (अनन्य मन) प्रेमभाव से उनका स्मरण करेगा तो उसे (भूलोक पर ही) जीते जी सभी स्वर्गिक आनन्द प्राप्त हो जायेंगे। उनके दर्शन से पूर्व व पश्चिम की दिशाएँ वैसे ही आलोकित (प्रज्वलित) हो उठेंगी जैसे दीपक से अन्धेरा दूर हो जाता है। जो (केवल) कानों से (रामनाम का) श्रवण करेगा उसका मन (एकदम) पवित्र हो जायेगा, भड़कती हुई पापाग्नि शान्त हो जायेगी तथा तन उसका सोना बन जायेगा। जो (उन्हें) आँखों से देखेगा उसकी आँखों को वैसी ही ज्योति प्राप्त होगी जैसे सूर्य के प्रकाश में है ॥ १५ ॥ जो (मनुष्य) ध्यान से इस कथा को सुनेंगे उनका मन निर्मल हो जायेगा तथा उनके मन से पाप रूपी राक्षस भाग जायेगा। (राम-नाम की ऐसी महिमा सुनने पर) देवी कहने लगी—हे शिवजी ! (कृपापूर्वक) मुझे रामावतार की महिमा व कारण तथा प्रकट होने की (पूरी) कहानी सुनाइए। तब शिवजी बोले (सुनो देवि!) जब रावण ने (घोर) तप करके विभिन्न लोकों को जीतकर यह अमरत्व प्राप्त कर लिया कि वह किसी के द्वारा भी मृत्यु को प्राप्त न हो, तो वह (निर्भय) होकर ऐसे-वैसे (अधम से अधम) कार्य करने लगा, तथा

वननि लोंग शिव मोंखस तसुन्दिस नमस्कार।
सों लंका रावनन निय़ि यंच्र कंरिन कार॥ २०॥
तमोगोंन रावनन यि कोंर बन्दाना।
में पोश्यम कुस ज़ि नेरेंम पांन्य पाना॥

दयूगथ कथ छि सथ येंलि संहल ज़ांनिन।
कोंकाम्यव सुत्य नठ बूतरांच्र च्रांनिन॥
नटनि लंज्य बूम यि दीवी ह्योतुन बय।
मरन ज़लवुन शरन नारायनस गय॥
कंरिन यंच्रकार प्रथवी आयि लाचार।
वदान वेंशनस निशन गंयि यंच्रिवंनिन ज़ार॥
दोंपुस वेशनन च्रुह गछ्र छुम जनम दारुन।
पेंयम रावुन मनुशि सुंदि वरनु मारुन॥ २५॥
गछी लागुन्य च्रें पानस यूगु माया।
ब व्यशन राम लागय छख च्रुह सीता॥

करम करिह राजुह दशरथ छुस नु सन्तान।
ज़्यमय तस निश ह्यमय अदु रावनस प्रान॥

(अहंकार वश) मनुष्य-रूप (मनुष्य-योनि) की सर्वोत्कृष्टता (शक्ति) को भूल बैठा। वे (शिव) आगे कहने लगे—उसके रूप (भक्तिभाव) को नमस्कार है जिसके कारण उसने लंकापुरी के वैभव को अपना बना लिया॥ २०॥ किन्तु तमोगुण के वशीभूत होकर उस (मेरे भक्त) रावण ने यह संकल्प कर लिया कि भला (तीनों लोकों में) मेरा मुक़ाबला कौन कर सकता है और मेरी बराबरी कौन कर सकता है। दैवगति के सत्य (विधान) को उसने सरल जान लिया तथा अपने दुष्कृत्यों द्वारा पृथ्वी को कँपा दिया। (तब) देवी-वसुन्धरा थरथराने लगी और वह भय से गिरती-काँपती हुई नारायण (विष्णु) की शरण में गई। उस (रावण) ने ऐसे कुकर्म किये जिससे पृथ्वी लाचार (संत्रस्त) हो गई तथा वह रोते हुए विष्णु के पास अपनी व्यथा कहने लगी। तब विष्णु ने पृथ्वी से कहा—(चिन्ता न कर) वापिस चली जा, मुझे रावण का अन्त करने के लिए जन्म लेना होगा। मुझे मनुष्य-रूप धारण कर रावण का वध करना पड़ेगा॥ २५॥ और तुझे भी योग-मायासे काम लेना होगा। मैं राम का रूप धारण कर लूँगा और तू सीता का रूप धारण करेगी। राजा दशरथ सन्तानकामेष्टि हेतु कर्म (यज्ञ) करेगा और मैं उसके

समिथ सारिय त्रिकूटी दीवताह यिम ।
ज़नुम दारन तु वांदर साप्यन्यन तिम ।।
यितुय बूज़िथ सपुन्य पृथवी स्यठाह शाद ।
वुछान आस कर थव्यम नेत्रन अन्दर पाद ।।
दोपुस दीवियि ही शिवजी दयाकर ।
वनुम अवतार द्यवु नेर्यम मनुक शर ।। ३० ।।

बाल काण्ड

श्रीरामसुन्द ज़नम

वननि लोंग राज़ु दशरथ ओस राज़ा ।
मुदा मालिक मलूकुक चारुसाज़ा ।।
सतूगुन शक्त बोंड शिव ओस मानन ।
स्यठा रुच़ु कामि करि तम्य बाग्यवानन ।।
तमिस आस दर अजोदया जाये आसन ।
ग़रीबन ओस वन्दुक ग़म गोसु कासन ।।

यहाँ जन्म लेकर रावण के प्राण हर लूँगा । (इसके अतिरिक्त) सभी त्रिकूटी देवता (मेरे सहयोगी देवता) वानर-भेस धारण कर अवतरित होंगे । यह सुनकर पृथ्वी शाद (प्रसन्न) हो गई और (उस घड़ी की) प्रतीक्षा करने लगी कि कब उसके नेत्रों पर वे (राम) अपने चरण रखें । तब देवी ने कहा—हे शिवजी! दया कीजिए और मुझे रामावतार की आगे की कथा सुनाइए ताकि मेरे हृदय का दारुण संताप दूर हो जाये ।। ३० ।।

बाल काण्ड

श्रीराम का जन्म

वे कहने लगे—दशरथ नाम का एक राजा था जो सकल संसार का मालिक व पालनहार था । सत्त्वगुण से युक्त वह राजा शिव का अनन्य भक्त था । इस भाग्यवान् राजा ने (प्रजा के हित के लिए) अनेक सत्कार्य किये । उसकी एक नगरी थी जिसका नाम अयोध्या था ।

वोंथन सुलि प्रथ प्रबातन न्यथ करन श्रान ।
रछन जोग्यन गोंसान्यन सुत्य थवन ज़ान ॥
गोंबुर ओसुस नु च्रच्रल ओस तस मन ।
तिथय यिथ सिरियि पांनिस प्यठ छु नांपन ॥ ५ ॥
स्यठा रातस दोंहस लीला करान ओस ।
शरन सांपनुन नारायन पानु टोठ्योस ॥
दपान सोंपनस अन्दर तस द्युतुन दर्शुन ।
दोंपुन तस गछ्र मे छुम ज़नमस च्रेनिश युन ॥
लगि न बावुन सोंपुन रावुन ब गालन ।
सु गांलिथ शेंख वायन लांख ज़ालन ॥
सोंपुन डीशिथ सु येंलि वोंथ खुशी सान ।
वशिस्टस निश गव टोठ्योम नारान ॥
दोंपुन तस कुन गोंछुम आसुन मे सन्तान ।
दोंपुस तंम्य कर च्रुह जग द्यवु बोज़ि नारान ॥ १० ॥
अंनिन तंम्य रेंश्य स्यठाह जग करनि लांगी ।
खंतिस तमि अंगनु मंज़ु खिरस ज़ु बांगी ॥
कोंरुख जग येंलि वोंबरांविख तमिक्य द्यन ।
खंतिस खिरस ज़ु बांगी रानियन त्रन ॥

वह (प्रजावत्सल) राजा ग़रीबों के दिलों से ग़म व दुःखों को दूर करने वाला था । नित्य प्रभात-वेला में जागकर स्नानादि करता तथा साधु-सन्तों व जोगियों के पास आशीर्वाद लेने जाता । उसकी कोई सन्तान न थी । इस अभाव के कारण उसका मन सदैव चंचल रहता, वैसे ही जैसे पानी में सूर्य । वह रात-दिन भगवद्भक्ति में तल्लीन रहता ॥ ५ ॥ और आख़िर एक रात (स्वप्न में) नारायण ने उस पर कृपा की, तथा दर्शन देकर कहा कि मैं तुम्हारे यहाँ जन्म ले रहा हूँ । इस स्वप्न की बात किसी से मत कहना । मुझे रावण का अन्त करके उसकी लंकापुरी को जला (कर ख़ाक कर) देना है । स्वप्न देखकर वह ख़ुशी के साथ उठ खड़ा हुआ और वसिष्ठ के पास जाकर कहने लगा कि (आज) नारायण मुझ पर प्रसन्न हुए हैं तथा मेरी सन्तान-कामना पूरी होती दिखाई दे रही है । (इस पर) उसने (वसिष्ठ ने) कहा—आप एक यज्ञ रचाएँ, शायद नारायण आपकी सुन लें ॥ १० ॥ तब (राजा ने) अनेक ऋषियों को बुलाकर (पुत्रकामेष्टि) यज्ञ कराया । (पूर्णाहुति के पश्चात्) अग्नि

त्रनवय बक्तुबजि गंयि पान नांविथ ।
दौनुवय बांगी तिमव ख्येयि बांगुरांविथ ।।
त्रुयन निशि पानु र्‌यौश सूज़ुन सु खिर ह्यथ ।
तिमव ख्यव बांगरिथ ओसुख मोहबथ ।।
कौशल्यायि अख द्युतुन कीकीयि अख निव ।
तिमव द्युत सौंनि न्यसुफा न्यसुफ बूज़िव ।। १५ ।।

दपान दय पानु कौशल्यायि निशि ज़ाव ।
बरुथ तस कीकीयि निशि ज़ाव कन थाव ।।
त्रेयिम आंसुख सौमित्रा तस कौरुख बाव ।
शौत्रुगन बेंयि लखिमन ज़ुव तंमिस ज़ाव ।।
औनुख ब्रह्मुन पंडित तान्य माजि येंलि ज़ाये ।
कर्‌योहख नाव ब्योंन ब्योंन आंसिनख आये ।।
गौरन ज़ातुक गंडिथ दौपनख करन कार ।
शौत्रुगन बरथ लखिमन रामु अवतार ।।

में से खीर से भरे दो सकोरे प्रगट हो गये और यज्ञ-समाप्ति के अनन्तर (जब यज्ञ की) भस्मी आदि को पृथ्वी में गाड़ दिया गया तो उसमें से खीर से भरे दो सकोरे तीन रानियों के लिए और प्रकट हुए। तीनों सौभाग्यवतियाँ देह को पवित्र करके (नहा-धोकर) आ गईं और पहले वाले दो सकोरों की खीर को बाँटकर खा गईं। शेष दो सकोरों को (बाद में) राजा ने स्वयं ऋषि (वसिष्ठ) द्वारा अपनी त्रियाओं (स्त्रियों) के पास भेजा। उन्होंने मुहब्बत के साथ इन्हें भी बाँटकर खाया—कौशल्या ने एक सकोरा तथा कैकेयी ने दूसरा खाया। दोनों ने अपने-अपने (सकोरे) में से आधा-आधा भाग अपनी सौत (सुमित्रा) को दे दिया ।। १५ ।। कहते हैं—भगवान् (राम) स्वयं कौशल्या के गर्भ से पैदा हुए और भरत कैकेयी के गर्भ से। उनकी एक और सौत थी जिसे वे दोनों ख़ूब चाहती थीं—उसका नाम सुमित्रा था। शत्रुघ्न और लक्ष्मण उसी के गर्भ से पैदा हुए। जैसे ही उन्होंने जन्म लिया ब्राह्मण व पण्डित को बुलाया गया। चारों के अलग-अलग नाम रखे गये और उनके लिए चिरायु की कामना की गई। गुरु ने जन्म-कुण्डली बनाकर कहा कि ये सभी शत्रुघ्न, भरत, लक्ष्मण और रामावतार (श्रेष्ठ) कार्य करेंगे। (सकल) प्रजा (इनके जन्म लेने पर प्रसन्नता के कारण)

प्रज़ा प्रज़लनु लंज्य यामथ थनु प्यॆय ।
लज़ा गंयि राखिसन पानस लंजिख र्यॆह ॥ २० ॥

अज़ोद्या वांसियन हुज़ लीला

परबतु तलु च़न्दुरमु द्राव
सांतिये गाश आवूये ।

लोलुक ब्योल असि वव्याव
बंखति हुंज़ि बूमि बवूये
तूल्य असि खांर बंद्य योंद ववि पावुह
सांतिये गाश आवूये । १

यारबलु तलु छय गंण्ड्य गंण्ड्य नावुह
बंर्य बंर्य सौंख त सावुये
क्राव कर डूरॆंन नेरी च़ें लावुह
सांतिये गाश आवूये । २

दूफ छुय प्रज़लान सौंति सौंति वावुह
छ़ैतु गछ़ि ज़ोरुह अकि हवावे
सन दिथ राज़ु गंरि च़ूर यस च़ावुह
सांतिये गाश आवूये । ३

दीप्त हो (झूम) उठी । राक्षस लज्जित हो गये और वे भीतर-ही-भीतर जलने लग गये ॥ २० ॥

अयोध्या-वासियों का भजन

पर्वत के पीछे से चन्द्रमा प्रकट हुआ, और री सीता ! तेरे लिए (नूतन) प्रकाश का उदय हो गया । हम (अयोध्यावासियों) ने प्रेम का बीज भक्ति की भूमि में बोया था और फलस्वरूप पाव भर बीज से मनों प्राप्त कर लिया—री सीता ! तेरे लिए (नूतन) प्रकाश का उदय हो गया । १ घाटों पर सुख-समृद्धि की नावें बँधी हुई हैं । इस लहलहाती बगिया को देख कर तू (रे मेरे पुरवासी!) ख़ुशी से झूम उठ—री सीता ! तेरे लिए (नूतन) प्रकाश का उदय हो गया । २ तेरा जीवन-दीप धीरे-धीरे सहज गति से जल रहा है । कहीं तेरी काया में कुमति रूपी चोर घुसकर उस दीप को वह बुझा न दे—री सीता ! तेरे लिए (नूतन) प्रकाश का उदय हो गया । ३

हिन्दी की श्रीवृद्धि

तथा विकास के लिए सतत प्रयत्नशील

उत्तर प्रदेश

अधीनस्थ न्यायालयों के निर्णयों में हिन्दी के प्रयोग को
प्राधिकृत बनाने की व्यवस्था

उच्च न्यायालय की कार्यवाहियों में भी हिन्दी के
वैकल्पिक प्रयोग का प्रयास

न्यायालयों के काम में सहायता प्रदान करने के लिए
एक विधि-शब्द-कोष प्रकाशित

मूलरूप से अंग्रेजी में बने सभी कानूनों का प्राधिकृत
हिन्दी पाठ तैयार करने में शीघ्रता,

सभी सरकारी कार्यालयों में हिन्दी का प्रयोग अनिवार्य

सरकार द्वारा स्थापित हिन्दी समिति द्वारा मार्च १९७१ तक—
२०३ मानक ग्रथों का प्रकाशन

प्रतिवर्ष हिन्दी की चुनी हुई पुस्तकों पर पुरस्कार

लखनऊ में हिन्दी भवन का निर्माण,

अन्य क्षेत्रीय भाषाओं के अध्ययन के लिए इस वर्ष
४०,००० रु० का प्राविधान

राष्ट्रभाषा हिन्दी तथा अन्य क्षेत्रीय भाषाओं के विकास से राष्ट्रीय एकता सुदृढ़ होगी।

ग १४२८४ सूचना विभाग उ०प्र० द्वारा प्रसारित

स्थापित वर्ष १९४९:५०

फोन २५६३४
२२६९८

उत्तर प्रदेशीय सहकारी गन्ना समिति संघ लि०,

१२, राणा प्रताप मार्ग लखनऊ

प्रदेश की १३४ सहकारी गन्ना समितियों की सर्वोच्च संस्था

गन्ना संघ व सदस्य समितियाँ लगभग २२ लाख गन्ना उत्पादकों के क्रय-विक्रय सम्बन्धी सभी समस्याओं का समाधान करते हुए तथा कृषि उत्पादन व गन्ने की पैदावार बढ़ाने हेतु सभी आवश्यक साधनों को सुलभ करने में सतत् प्रयत्नशील है।

लघु सिचाई साधनों को बढ़ावा देना, खादों का उपयोग बढ़ाने हेतु खाद-भन्डारों का निमार्ण, विभिन्न प्रकार के उर्वरकों, खादों व कीट-नाशक पदार्थों का प्रबन्ध, उन्नतिशील बीजों का वितरण आदि कार्यों का सुविधा-जनक बनाते हुये कार्यान्वित करना संघ का मुख्य कार्य है।

आधुनिकतम मशीनों से युक्त गन्ना संघ प्रेस सदस्य समितियों की मुद्रण आवश्यकताओं की पूर्ति करता है।

बच्चों की स्वास्थ्य-सुरक्षा हेतु

★ चेचक

★ क्षय रोग

★ टाटसर्प (डिथीरिया)

★ टिट नस

कुकुर खांसी जैसे भयंकर रोगों से बचाव के लिए उपयुक्त टीके समयानुसार लगवाइए। विस्तृत जानकारी, निःशुल्क सेवा तथा सलाह के लिए निकट के प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र अथवा जिला अस्पताल के चिकित्सक से सम्पर्क करें।

प्रसारितः—

निदेशक, स्वास्थ्य सेवा एवं परिवार नियोजन
(स्वास्थ्य शिक्षा ब्यूरो) उ०प्र०, लखनऊ

ग ३६१

यू० पी० स्टेट एग्रो इण्डस्ट्रियल कारपोरेशन लिमिटेड

२२, विधान सभा मार्ग, लखनऊ

अपनी

ट्रैक्टर वर्कशाप ताल कटोरा रोड

लखनऊ से

अविलम्ब उपलब्ध करा सकता है

वाइलेरस, एम० टी० जेड० 28, डी० टी० 14 बी, जेटर 2011, ईस्कार्टस, इन्टरनेशनल, मैसी-फार्गूसन ट्रैक्टर एवं जानवरों द्वारा खींची जाने वाली गाड़ियों के लिये आयात किये गये टायर व ट्यूब

साथ ही

निम्नलिखित सामान भी उचित मूल्य पर उपलब्ध है।

जेटर, रूमानियन, बलगेरियन टैक्टरों के असली आवश्यक पुर्जे

तथा

अच्छे किस्म के बैलों और ट्रैक्टर से चलने वाले

उपकरण जैसे—कल्टीवेटर, डिस्क हैरो, डिस्क प्लाऊ

थ्रेशर्स, सुगरकेन प्लानटर्स

एवं परिवहन आयुक्त उत्तर प्रदेश द्वारा अनुमोदित ट्रैक्टर ट्राली।

एग्रो उच्च कोटि के फल पदार्थ भी विक्रय करता है

जो अत्यंत स्वास्थ्यवर्धक हैं।

देवनागरी लिपि में सानुवाद लिप्यन्तरित अन्य भाषाओं के लोकप्रिय ग्रंथ

अ़रबी—सम्पूर्ण क़ुर्आन शरीफ़ अ़रबी की आयतें (देवनागरी में) तथा प्रामाणिक सटिप्पण हिन्दी अनुवाद। मान्य आलिमों द्वारा प्रतिपादित। मूल्य ३५'०० डाक ख़र्च ३'०० प्रथक्।

बंगला—रामायण कृत्तिवास ५ काण्ड का बंगला मूल पाठ देवनागरी अक्षरों में, हिन्दी दोहा-चौपाई में सुमधुर पद्यानुवाद सहित। मूल्य १२'०० डाक ख़र्च २'०० प्रथक्।

गुरुमुखी—श्री जपुजी सुखमनी साहब (गुरुमुखी) तथा गीता के प्रसिद्ध उर्दू पद्यानुवादक ख़ानबहादुर ख्वाज: दिलमुहम्मद साहब द्वारा अति ललित उर्दू पद्यानुवाद—इन दोनों का देवनागरी लिपि में लिप्यन्तरण। मूल्य ४'०० डाक ख़र्च १'२५ प्रथक्।

शरीफ़ज़ाद:—'उमराव जान अदा' के ख्याति-प्राप्त लेखक आली जनाब मिर्ज़ा रुस्वा, बी. ए. द्वारा रचित, होनहार नवयुवकों के उन्नायक प्रसिद्ध उर्दू उपन्यास 'शरीफ़ज़ाद:' का देवनागरी लिपि में अक्षरश: लिप्यन्तरण। इस उपन्यास की यह विशेषता है कि लेखक स्वयं इस उपन्यास का आदर्श नायक है। कठिन उर्दू शब्दों का हिन्दी अर्थ फ़ुटनोटों में दे दिया गया है। मूल्य ४'०० डाक ख़र्च १'२५ प्रथक्।

'अ़रब' एक संक्षिप्त इतिहास—मूल्य ८.०० मात्र डाक ख़र्च १।।) अलग।

राष्ट्रीय आल्हा (सचित्र)—प्राग् ऐतिहासिक काल से चीनी आक्रमण-पर्यन्त भारत के शौर्य-पराक्रम का इतिहास वीर आल्हा छन्द में वर्णित। भाषा खड़ी बोली सरल और वीर रसपूर्ण है। भूमिका-लेखक पं० श्रीनारायण चतुर्वेदी। मूल्य ३'०० मात्र।

वाणी सरोवर

(अपने ढंग का निराला त्रैमासिक पत्र)

इस पत्र में हिन्दी, उर्दू, अ़रबी, फ़ारसी, संस्कृत, पारसी, बंगला, ओड़िया, मराठी, गुरमुखी, तमिळ, मलयाळम, असमी, गुजराती, तॅलुगु, कन्नड़, सिन्धी, कश्मीरी और नेपाली के अनुपम ग्रथों का हिन्दी अनुवाद तथा देवनागरी लिपि में मूल पाठ धारावाहिक प्रकाशित हो रहा है। वार्षिक शुल्क १०'०० मात्र। पाली, प्राकृत आदि का धारावाहिक कार्यक्रम भी शीघ्र ही अपनाया जायगा।

नवीन ग्राहक बननेवाले सज्जनों को सन् १९७० तथा १९७१ दोनों वर्ष का शुल्क २०'०० और इसी प्रकार वर्ष १९७२ के लिए शुल्क १०'०० भेजना उनके हित में होगा। बीते हुए वर्षों के अंक न मंगाने पर धारावाहिक चलनेवाले पहले से शुरू अनेक ग्रंथ उनके संग्रहालय में अपूर्ण रह जायँगे।

प्राप्ति स्थान—भुवन वाणी ४०५/१२८ चौपटियाँ रोड, लखनऊ—३

Regd. No. R.N. 19347-70 Govt. of India

भुवन वाणी ट्रस्ट,

'प्रभाकर निलयम्', ४०५/१२८ चौपटियाँ रोड, लखनऊ-३

जो कार्य किये जा रहे हैं (सानुवाद देवनागरी-लिप्यन्तरण):—

१—(तमिळ) तिरुक्कुरळ्　　२—(तमिळ) कम्ब रामायण
३—(तॅलुगु) रंगनाथ रामायण　४—(कन्नड़) पम्प रामायण—जैनसाहित्य
५—(असमिया) माधवकंदली रामायण　६—(कश्मीरी) रामावतार चरित
७—(नेपाली) रामायण भानुभक्त कृत　८—(गुजराती) गिरधर रामायण
९—(बंगला) कृत्तिवास रामायण लं०कां०　१०—(सिंधी) स्वामी के श्लोक
११—(मलयाळम) तुञ्चत्त् एळुत्तच्छन् कृत महाभारत
१२—(ओड़िआ) वैदेहीश-विळास—उपेन्द्र भञ्ज कृत
१३—(मराठी) श्रीराम-विजय—श्रीधर स्वामी कृत मूल एवं अनुवाद।
१४—(उर्दू) 'उमराव जान अदा' के प्रसिद्धि-प्राप्त श्री 'रुसवा' का (नैतिक) उपन्यास "शरीफ़ज़ादः" सम्पूर्ण-मूल्य ४.००।
१५—(फ़ारसी) दाराशिकोह कृत ५१ उपनिषदों के फ़ारसी-भाष्य (डॉ० ताराचंद द्वारा सम्पादित तथा ईरान में प्रकाशित 'सिर्रे अक्बर') का धारावाहिक हिन्दी अनुवाद।
१६—(अ़रबी) रियाज़ुस्सालिहीन—(ज़ादें सफ़र) इस्लामी हदीसों के प्रामाणिक समुच्चय का हिन्दी रूपान्तर।
१७—(वाणी सरोवर)—विविध भाषाओं के उपर्युक्त अनुपम ग्रंथों का सानुवाद धारावाहिक देवनागरी लिप्यन्तरण का त्रैमासिक पत्र—वार्षिक मूल्य १०·००।
१८—इनके अतिरिक्त संस्कृत, पाली-प्राकृत, पारसी (ज़रथूस्त्र-गाथा) आदि के अनेक सानुवाद देवनागरी-लिप्यन्तरण-ग्रंथ।

ट्रस्ट की स्थापना से पूर्व, सानुवाद देवनागरी-लिप्यन्तरण के अन्य कार्य जो अन्यत्र हो चुके हैं:—

१—(अ़रबी) क़ुर्आन (मूल आयतें अरबी व देवनागरी लिपि में, अनुवाद, टिप्पणी सहित)—इस्लामी धर्माचार्यों द्वारा प्रतिपादित
२—(बंगला) कृत्तिवास रामायण—(पाँच काण्ड) बंगला मूल देवनागरी में लिप्यन्तरित, अवधी पद्यानुवाद—
३—(गुरमुखी) जपुजी तथा सुखमनी साहब—गुरमुखी मूल पाठ तथा गीता के यशस्वी अनुवादक ख़ा०ब० ख़्वाज: दिलमुहम्मद कृत उर्दू पद्यानुवाद—दोनो देवनागरी लिपि में—

विज्ञापन के लिए, व्यवस्थापक, 'वाणी सरोवर' १२८, चौपटियाँ रोड, लखनऊ-३ से पत्र-व्यवहार कीजिए।

वाणी प्रेस, लखनऊ-३ में मुद्रित एवं भुवन वाणी ट्रस्ट, रानीकटरा, लखनऊ द्वारा प्रकाशित।
—द्वारा नन्दकुमार अवस्थी, सम्पादक